सुन्दर विलास

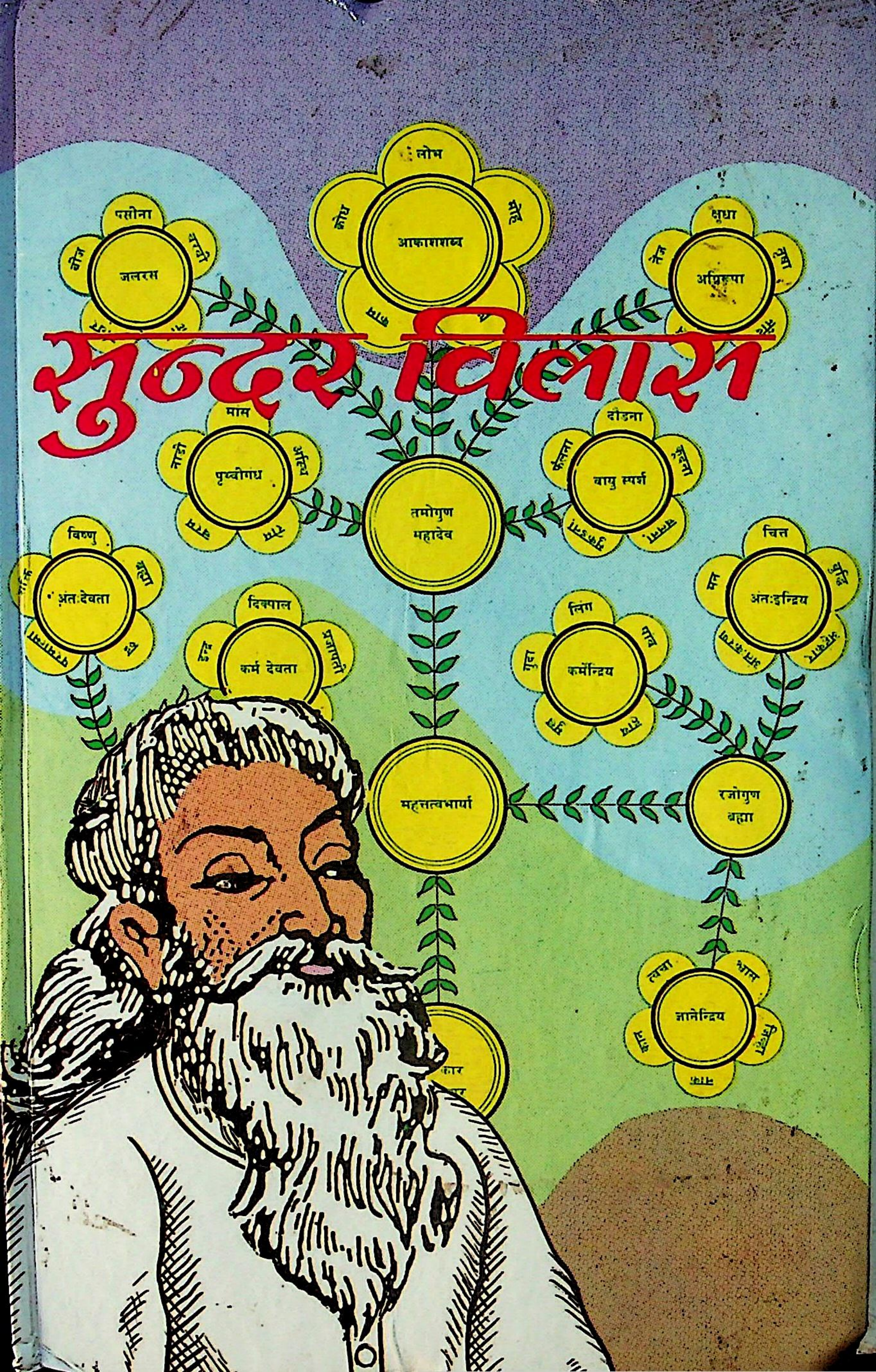

लोभ
आकाशशब्द
पसीना
जलरस
क्षुधा
अग्निरूपा
मास
पृथ्वीगंध
दौड़ना
वायु स्पर्श
तमोगुण
महादेव
विष्णु
अंत:देवता
चित्त
अंत:इन्द्रिय
दिक्पाल
कर्म देवता
लिंग
कर्मेन्द्रिय
महत्तत्वभार्या
रजोगुण
ब्रह्मा
त्वचा
ज्ञानेन्द्रिय

।। श्रीः ।।

सुन्दरदासविरचित—

सुन्दरविलास

ज्ञानसमुद्र, ज्ञानविलास, अष्टकादिसहित
सटिप्पण

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई.

संस्करण : मार्च २०१८, संवत् २०७४

मूल्य : २०० रुपये मात्र।

© सर्वाधिकार : प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass,
Prop: Shri Venkateshwar Press
Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi,
Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s. Khemraj Shrikrishnadass
Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai - 400 004,
at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial
Estate, Pune 411 013.

प्रस्तावना

प्राचीन समय में श्रीमान् कविवर सुंदरदासजी हुए थे। जिनके रचित ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि; उक्त कविराज फारसी भाषा भी भली भांति जानते थे इनके निर्मित जितने ग्रन्थ पाये जाते हैं वे सब वेदांतमार्ग के हैं। धन्य है! वेदांत ऐसे कठिन विषय को ऐसी सरलता और काव्य की मृदुलता से वर्णन किया है कि, जिसके क्षणमात्र के पठन पाठन से विषयासक्त मनुष्यों के चित्त में भी वेदांतरूपी सूर्य की दीप्ति चमकने लगती है। उक्त कवि ने प्रत्येक प्रसंगों में ऐसे ऐसे रोचक मनभावन सुंदर छन्द रचना के चमत्कार किये हैं जो पढ़ने वालों के चित्त को भक्तिपक्ष में चुंबक के समान आकर्षित करते हैं, परंतु अब तक केवल **सुंदरविलास** ही मुद्रित हुआ था, उसमें अनुपम काव्यगुण देख पाठकों की रुचि इनके अन्य ग्रन्थों के अवलोकन करने को उत्साहित होती थी ; इस कारण हमने परिश्रम से **ज्ञानसमुद्र, ज्ञानविलास,** भक्ति के उत्पन्न करने वाली **गुरुमहिमाष्टकादि** त्रयोदश अष्टक एकत्रित कर सर्वमुमुक्षुजनों के चित्त मनोरंजनार्थ अत्यंत शुद्धतापूर्वक कठिन कठिन शब्दोंकी टिप्पणी बनवाकर मुद्रित किया है। यद्यपि ऊपर के अलंकारों के एकत्रित करने से पुस्तक बढ़ गई है, तथापि सर्वसाधारण मनुष्यों की सुगमता के लिये मूल्य अत्यंत ही न्यून रक्खा है।

खेमराज श्रीकृष्णदास

अथ

सुंदरविलासदिकी–अनुक्रमणिका ।

विषय	पृष्ठांक	विषय	पृष्ठांक
श्रीगुरुदेवको अंग	१	आतमअनुभव को अंग	१३२
श्रीउपदेशचिन्तामणिको अंग	८	आश्चर्य को अंग	१४१
कालचिन्तामणि को अंग	१७	**ज्ञानसमुद्र ।**	
देह आत्माविछोहको अंग	२४	**प्रथमोल्लास ।**	
तृष्णा को अंग	२७	गुरुशिष्य लक्षण निरूपण	१४५
धैर्य उराहनको अंग	३०	ग्रन्थवर्णन	१४५
विश्वास को अंग	३३	जिज्ञासु लक्षण	१४६
देह मलिनके गर्व प्रहार को अंग	३६	गुरुदेवकी दुर्लभता	१४७
नारीनिन्दा को अंग	३८	गुरु लक्षण	१४७
दुष्टजनको अंग	४०	गुरुदेव की प्राप्ति	१४८
मनको अंग	४१	शिष्यकृत प्रार्थना	१४९
चाणकको अंग	४८	गुरुदेव की प्रसन्नता	१४९
विपरीतज्ञानको अग	५३	शिष्य की प्रसन्नता	१५०
वचन विवेक को अंग	५५		
निर्गुण उपासनाको अंग	६०	**द्वितीयोल्लास ।**	
पतिव्रता को अंग	६१	उत्तम, मध्यम, कनिष्ठ	
विरह उराहने को अंग	६३	भक्तियोग निरूपण	१५१
शब्दसार को अंग	६५	श्रवणभक्ति वर्णन	१५३
भक्तिज्ञानमिश्रित को अंग	६७	कीर्तन भक्ति वर्णन	१५३
विपर्यय को अंग	६८	स्मरण भक्ति वर्णन	१५३
स्वरूपविस्मरणको अंग	७३	पादसेवन भक्ति वर्णन	१५३
विचार को अंग	८०	अर्च्चन भक्ति वर्णन	१५३
सांख्यज्ञान को अंग	८६	स्तुत्यष्टक	१५४
अपने भाव को अंग	९७	वंदना भक्ति वर्णन	१५५
जगन्मिथ्या को अंग	१००	दासत्व भक्ति वर्णन	१५५
अद्वैतज्ञान को अंग	१०१	सख्यत्व भक्ति वर्णन	१५५
ब्रह्मनिष्कलंक को अंग	१०८	आत्म निवेदन भक्ति वर्णन	१५५
शूरातनको अंग	१०९	प्रेमलक्षणा भक्ति वर्णन	१५६
साधु को अंग	११४	पराभक्ति वर्णन	१५८
ज्ञानी को अंग	१२२	**तृतीयोल्लास ।**	
निस्संशय ज्ञानी को अंग	१३०	अष्टांगयोग निरूपण	१६०
प्रेमज्ञानी को अंग	१३१	यमको निर्णन	१६१

विषय	पृष्ठांक	विषय	पृष्ठांक
प्रथम अहिंसा को लक्षण	१६१	वायुतत्त्व की धारणा	१७१
द्वितीय सत्य को लक्षण	१६१	आकाशतत्त्व की धारणा	१७२
तृतीय अस्तेय को लक्षण	१६२	ध्यान वर्णन	१७२
चतुर्थ ब्रह्मचर्य को लक्षण	१६२	पदस्थ ध्यान वर्णन	१७२
पंचम अष्टप्रकार मैथुन को लक्षण	१६२	पिण्डस्थ ध्यान वर्णन	१७२
षष्ठ क्षमको लक्षण	१६२	रुपस्थ ध्यान वर्णन	१७२
सप्तम धृतिको लक्षण	१६२	रूपातीत ध्यान वर्णन	१७३
अष्टम दयाको लक्षण	१६३	समाधि वर्णन	१७३
नवम आर्जवको लक्षण	१६३	चतुर्थोल्लास ।	
दशम मिलाहारको लक्षण	१६३	सांख्य निरूपण वर्णन	१७४
शौच को लक्षण	१६३	पंचतत्त्व स्वभाव	१७६
दशविधनियम वर्णन	१६३	राजसाहंकार	१७७
प्रथम तपको लक्षण	१६४	सात्त्विकाहंकार	१७७
द्वितीय संतोष को लक्षण	१६४	देहस्थूल वर्णन	१७८
तृतीय आस्तिक्यको लक्षण	१६४	अन्यभेद	१७८
चतुर्थ दानको लक्षण	१६४	ज्ञानेन्द्रिय त्रिपुटी	१७९
पञ्चम पूजा को लक्षण	१६४	कर्मेन्द्रिय त्रिपुटी	१७९
षष्ठ श्रवण सिद्धांत को लक्षण	१६५	अहंकार त्रिपुटी	१७९
सप्तम ह्रीको लक्षण	१६५	लिङ्ग शरीर	१८०
अष्टम मतिको लक्षण	१६५	जाग्रत् अवस्था वर्णन	१८०
नवम जापको लक्षण	१६५	स्वप्नावस्था वर्णन	१८१
दशम होमको लक्षण	१६५	सुषुप्त्यवस्था वर्णन	१८२
सिद्धासन लक्षण	१६७	तुरीयावस्था वर्णन	१८२
पद्मासन लक्षण	१६७	पंचमोल्लास ।	
प्राणायाम लक्षण	१६७	अद्वैत निरूपण	१८३
तीन नाडी वर्णन	१६८	चतुर अभाव वर्णन	१८४
दश वायु वर्णन	१६८	प्रागभाव वर्णन	१८४
चक्र अनुक्रम	१६८	अन्योऽन्याभाव वर्णन	१८५
प्राणायामकी क्रिया	१६९	प्रध्वंसाभाव वर्णन	१८७
गोरख उक्ति	१७०	अत्यन्ताभाव वर्णन	१८७
कुम्भक प्रकार वर्णन	१७०	ज्ञान विलास ।	
मुद्रानाम-प्रत्याहार	१७०	गुरुदेव को अंग	१९२
पञ्चतत्त्व की धारणा	१७१	स्मरण अंग	१९२
पृथ्वीतत्त्व की धारणा	१७१	साधु अंग	१९२
जलतत्त्व की धारणा	१७१	देहात्मविछोह अंग	१९३
तेजतत्त्व की धारणा	१७१	उपदेश चिन्तवन अंग	१९३

विषय	पृष्ठांक	विषय	पृष्ठांक
कालचिन्तवन	१९४	ज्ञानी को अंग	२०१
तृष्णाको अंग	१९४	सुंदराष्टकानि ।	
देहमलीनको अंग	१९५	गुरुमहिमाष्टक	२०१
आधीन उराहनको अंग	१९५	गुरुदयाष्टक	२०३
विश्वास को अंग	१९५	गुरुकृपाष्टक	२०४
दुष्ट को अंग	१९६	भ्रमविध्वंसाष्टक	२०७
मनको अंग	१९६	गुरुज्ञानोपदेशाष्टक	२०९
शूरातनको अंग	१९७	पीर मुर्शिदाष्टक	२१२
वचन विवेक को अंग	१९७	रामजी अष्टक	२१३
निजभाव को अंग	१९८	नामाष्टक	२१४
स्वरूप विस्मरणको अंग	१९८	आत्मअचलाष्टक	२१५
सांख्य को अंग	१९८	ब्रह्माष्टक	२१६
विचार को अंग	१९९	पंजाबी भाषाष्टक	२१७
आत्मानुभव को अंग	२००	ज्ञानझूलनाष्टक	२१९
		अजब ख्यालाष्टक	२२०

इति अनुक्रमणिका ।

श्रीसुन्दर विलास

अथ श्रीगुरुदेवको अंग १

श्रीपरमात्मने नमः

इन्दव छन्द

मौज करी गुरुदेव दया करि, शब्द सुनाय कह्यो हरि नेरो ।
ज्यों [1]रविके प्रगटे निशि[2] जात सु, दूरि कियो भ्रम भानु अँधेरो ।।
कायिक वाचिक मानस हूँ करि, है गुरुदेवहि [3]वंदन मेरो ।
सुन्दरदास कहै कर जोरि जु, दादू दयालु को है नित चेरो ।। १।।
पूरण ब्रह्म विचार निरंतर, काम न क्रोध न लोभ न मोहै ।
श्रोत्र[4] त्वचा[5] रसना[6] अरु घ्राण[7] सु, देखि कछू कहुँ नैन[8]न मोहै ।।
ज्ञानस्वरूप अनूप निरूपम, जासु गिरा[9] सुनि मोह न मोहै ।
सुन्दरदास कहै कर जोरि जु, दादू दयालहि मोर नमो है।।२।।
धीरजवंत अडिग जितेंद्रिय, निर्मलज्ञान गह्यो दृढ आदू ।
शील सँतोष क्षमा जिनके घंट, लागि रह्यो सु अनाहद आदू ।।
वेष न पक्ष निरन्तर लक्ष जु, और कछू नहिं वाद विवादू ।
ये सब लक्षण हैं जिन माहिं सु, सुन्दर के उर हैं गुरु दादू ।। ३।।
भवजल में बहि जातहु ते जिन, काढ़ि लियो अपनो करि आदू ।
और सँदेह मिटाय दिये सब, काननि[10] टेर सुनाय के नादू[11] ।।
पूरणब्रह्म प्रकाश कियो पुनि, छूटि गयो सब वाद विवादू ।
ऐसि कृपा जु करी हम ऊपर, सुन्दर के उर हैं गुरु दादू ।।४।।

---

१ सूर्यनारायण । २ रात । ३ नमस्कार—दंडवत् । ४ कान । ५ खाल । ६ जिह्वा ।
७ नाक । ८ आंखें । ९ वाणी । १० वन—श्रवण । ११ शब्द ।

कोउ इक गोरख को गुरु थापत, कोउक दत्त दिगंबर[१] आदू ।
कोउक कंधर कोउक भर्थर, कोउ कबीर कि राखत नादू ।।
कोउ कहै हरदास हमार जु, यूं करि ठानत वाद विवादू ।
और तु सन्त सबै शिर ऊपर, सुन्दर के उर[२] हैं गुरु दादू ।।५।।
कोउ विभूति जटा नख धारि, कहै यह वेष हमारहि आदू ।
कोउक कान फराय फिरै पुनि, कोउक शृंगि बजावत नादू ।।
कोउक केश लुचाइ करै व्रत, कोउक जङ्गम केशिव वादू ।
यों सब भूलि परें जितही तित, सुन्दर के उर हैं गुरु दादू ।।६।।
योगि कहैं गुरु जैन कहैं गुरु, बौद्ध कहैं गुरु जङ्गम मानैं ।
भक्त कहैं गुरु न्यासि[३] कहै वन, वासि कहैं गुरु और बखानै ।।
शेख कहैं गुरु [४]सूफि कहैं गुरु, या हित सुन्दर होत हिरानै ।
बाहु कहैं गुरु बाहु कहैं गुरु, है गुरु सोइ सबै भ्रम मानै ।।७।।
सो गुरुदेव लिपै न छिपै कछु, सत्त्व रजो तम ताप निवारी ।
इन्द्रिय देह मृषा[५] करि जानत, शीतलता समता[६] उर धारी ।।
व्यापक ब्रह्मविचार[७] अखण्डित, द्वैत उपाधि सबै जिन टारी ।
शब्द सुनाय सन्देह मिटावत, सुन्दर वा गुरुकी बलिहारी ।।८।।
पूरणब्रह्म बताय दियो जिन, एक अखंडित व्यापक सारे ।
राग रु द्वेष करैं अब कौन सुं, जो अहि भूल वही सब डारे ।।
संशय शोक मिटचो मनको सब, तत्त्व विचार कह्यो निरधारे ।
सुन्दर शुद्ध कियो मल[८] धोई जु, है गुरुको उर ध्यान हमारे ।।९।।
ज्यों कपडा दरजी गहि ब्यौंतत, काष्ठहिको बढ़ई कसि जानैं ।
कञ्चन को जु सुनार कसै पुनि, लोहको घाट लुहारहि जानैं ।।
पाहनको कसि लेत सिलावट, पात्र कुम्हारके हाथ निपानैं ।
तैसेहि शिष्य वसै गुरुदेव जु, सुन्दरदास तबै मन मानै ।।१०।।

---

१ नग्न। २ हृदय। ३ उदासी। ४ मुल्ला। ५ झूठ। ६ बराबरी। ७ आत्मज्ञान का विचार करना। ८ मैल।

मनहर छंद

शत्रुहू न मित्र कोउ, जाके सब हैं समान;
देह को ममत्व छाँडि, आतमाही राम हैं।
और हू उपाधि जाके, कबहूँ न देखियत;
सुख के समुद्र में रहत, आठों याम[1] हैं ।।
ऋद्धि[2] अरु सिद्धि[3] जाके, हाथ जोरि आगे खड़ी;
सुंदर कहत ताके, सबही गुलाम हैं।
अधिक प्रशंसा हम, कैसे करि कहि सकैं;
ऐसे गुरुदेव को हमारो, जु प्रणाम हैं ।।११।।
ज्ञान को प्रकाश जाके, अंधकार भयो नाश;
देह अभिमान जिन, तज्यो जानि क्षारधी।
सोई सुखसागर, उजागर वैराग रजु;
जाके वैन सुनत, बिलात है विकारधी ।।
अगम[4] अगाध[5] अति, कोऊ नहिं जानै गति;
आतमा को अनुभव, अधिक अपारधी।
ऐसे गुरुदेव वंदनीय, तिहूँ लोक माहिं;
सुंदर विराजमान, शोभत उदारधी ।।१२।।
कोहुसों न रोष[6] तोष[7], काहुस न राग द्वेष;
काहुसों न वैरभाव, काहुसों न घात है।
काहुसों न बकवाद, काहुसों नहीं विषाद;
काहुसों न संग न तौ, काहु पक्षपात है ।।
काहुसों न दुष्टवैन, काहुसों न लेन देन;
ब्रह्म को विचार कछु, और न सुहात है।
सुंदर कहत सोई, ईशन को महाईश;
सोई गुरुदेव जाके, दूसरी न बात है ।।१३।।

---

१ पहर। २ विभूति नौ प्रकार की। ३ अणिमा, गरिमादि अष्टप्रकार की।
४ जिसका मार्ग कठिन। ५ जिसकी थाह नहीं। ६ क्रोध। ७ प्रसन्नता।

लोहकूं ज्यूं पारस, पषानहू पलटि लेत
कंचन[1] छुवत होत, जग में प्रमानिये ।
[2]द्रुमकूं ज्यूं चंदन, पलटही लगाय वास;
आपके समान ताकूं, शीतलता आनिये ।
कीटकूं ज्यूं भृंगिहु, पलटिके करत भृंगि;
सोउ उड़ि जाइ ताको, अचरज मानिये ।
सुंदर कहत यह, सगरे प्रसिद्ध बात;
सद्य[3] शिष्य पलटै सो, सद्‌गुरु जानिये ।।१४।।
गुरु बिन ज्ञान नहिं, गुरु विन ध्यान नहिं;
गुरु बिन आतम, विचार न लहतु है ।
गुरु बिन प्रेम नहिं, गुरु बिन नेम नहिं;
गुरु बिन शीलहु, संतोष न गहतु है ।।
गुरु बिन भ्यास नहिं, बुद्धिको प्रकाश नहिं;
भ्रमहूको नाश नहिं, संशय रहतु है ।
गुरु बिन बाट[4] नहिं, कौड़ी बिन हाट नहिं;
सुंदर प्रगट लोक, वेद यों कहतु हैं ।।१५।।
पढ़े के न बैठो पास, अक्षर न बाँचि सकै;
बिन ही पढ़े ते कैसे, आवत है फारसी ।
जौहरी के मिले बिन, परखि न जानै कोई;
हाथ नग लिये रहै, संशय न टारसी ।।
वैदहु न मिल्यो कोउ, बूटी को बताइ देत;
भेद बिनु पाये वाके, औषध है क्षारसी ।
सुन्दर कहत मुख, रंचहु न देख्यो जाइ;
गुरु बिन ज्ञान जैसे, अँधेरे में आरसी ।।१६।।

---

१ सोना । २ वृक्ष । ३ शीघ्र । ४ मोक्ष का मार्ग ।

गुरु के प्रसाद बुद्धि, उत्तम दशाको गहै;
गुरु के प्रसाद भवदुःख[1] बिसराइये ।
गुरु के प्रसाद प्रेम, प्रीतिहु अधिक बाढै;
गुरु के प्रसाद राम, नाम गुण गाइये ।।
गुरु के प्रसाद सब, योग की युगति जानै;
गुरु के प्रसाद शून्य[2],- में समाधि[3] लाइये ।
सुन्दर कहत गुरु,- देव जू कृपालु[4] होई;
तिनके प्रसाद[5] तत्त्वज्ञान[6] पुनि पाइये ।।१७।।
डूबत भवसागर,- में आइ कै बँधावै धीर;
पारहु लगाइ देत, नाव कूं , ज्यूं खेवा सो ।
पर उपकारी सब, जीवन के सारे काज;
कबहुँ न आव जाके, गुणनिको छेव सो ।।
वचन सुनाइ भय, भ्रम सब दूरि करै;
सुन्दर दिखाई देत, अलख[7] अभेव सो ।
औरहु सनेही हम, नीके करि शोधि[8] देखे;
जग में न कोउ हितकारि गुरुदेव सो ।।१८।।
गुरु मात गुरु तात, गुरु बन्धु निज गात;
गुरुदेव नखशिख[9], सकल सँवारचो है ।
गुरु दिये दिव्यनैन,[10] गुरु दिये मुख वैन;
गुरुदेव श्रवण दे, शबद उंचांरचो है ।।
गुरु दिये हाथ पाँव, गुरु दिये शीशभाव;
गुरुदेव पिंड़ माहिं, प्राण आइ डारचो है ।
सुन्दर कहत गुरुदेव, जू कृपालु होइ;
फेरि घाट धरि करि, मोहिं निस्तारचो[11] है ।।१९।।

---

१ सांसारिक दुःख । २ एकांत । ३ ध्यान करना । ४ दयालु । ५ कृपा । ६ ब्रह्मज्ञान । ७ अदृश्य । ८ जांचा । ९ शिर से पाँव तक । १० अद्‌भुत दृष्टि । ११ पार करना, मुक्ति ।

कोउ देत पुत्र धन, कोउ देत बल घन[१];
कोउ देत राजसाज, देव ऋषि मुन्यो है ।
कोउ देत यशमान,[२] कोउ देत रस आन;
कोउ देत विद्याज्ञान, जगत में गुन्यो है ।।
कोउ देत ऋद्धि सिद्धि, कोउ देत नवनिद्धि;
कोउ देत और कछु, ताते शीश धुन्यो है ।
सुन्दर कहत एक, दियो जिन राम नामः
गुरु सो उदार[३] कोउ, दिख्यो है न सुन्यो है ।।२०।।
भूमिहुकी [४]रेणुकी तो, संख्या कोउ कहत है;
भारहू अठार द्रुम, तिनके जु पात है ।
मेघन की संख्या[५] सोउ, ऋषिने कही विचारि;
[६]बुंदनकी संख्या तेऊ, आइके विलात[७] है ।।
तारनकी संख्या सो तो, कही है [८]पुराणमाहिं;
रोमनकी संख्या पुनि, कितनेक गात[९] है ।
सुन्दर जहाँलौं जंत[१०], तिनहींको आवे अन्त;
गुरुके अनन्त गुण, कापै कहे जात है ।।२१।।
गोविन्दके किये जीव, जात है रसातलको;
गुरु उपदेशै सो तो, छूटै यमफंदतैं ।
गोविन्दके किये जीव, वश परे कर्मनके;
गुरुके निवारे सूं, फिरत हैं स्वच्छंदतैं[११] ।।
गोविन्दके किये जीव, डूबत भवसागर में;
सुन्दर कहत गुरु, काढ़ै दुखद्वन्द्वते[१२] ।
और हू कहालौं कछू, मुखते कहूँ बनाय;
गुरुकी तौ महिमा, अधिक है गोविन्दते ।।२२।।

---

१ अधिक । २ प्रतिष्ठा । ३ दानी, महात्मा । ४ धूलि । ५ गिनती । ६ वर्षा की बूंदें । ७ नष्ट होना । ८ पुराण में । ९ शरीर । १० जीवधारी । ११ स्वाधीन । १२ कष्ट झगड़ा ।

चिंतामणि पारस, कलपतरु कामधेनु;
औरहु अनेकविधि, वारि वारि नाखिये ।
जोई कछु देखिये सो, सकल विनाशवंत;
बुद्धिमें विचार करि, बहु अभिलाषिये ।।
ताते मन वचन करम, करि कर जोरि;
सुंदर चरण शीश, मेलि दान भाषिये ।
बहुत प्रकार तीनों लोक, सब शोधे हम;
ऐसी कौन भेंट गुरु,— देव आगे राखिये ।।२३।।
महादेव वामदेव, ऋषभ कपिलदेव;
व्यास शुकदेव जयदेव, नामदेव जू ।
रामानंद सुखानंद, कहिये अनंतानंद;
सुरसुरानंदहुक, आनंद अछेव जू ।।
रैदास कबीरदास, सोझादास पीपादास;
दासहूके दासभाव, भावहूकी टेव जू ।
सुंदर सकल संत, प्रगट जगत माहिं;
तैसें गुरु दादूदास, लागै हरिसेव जू ।।२४।।
गुरुदेव सर्वोपरि, अधिक विराजमान;
गुरुदेव सबहिते, अधिक गरिष्ठ[१] हैं ।
गुरुदेव दत्तात्रय, नारद शुकादि मुनि;
गुरुदेव ज्ञानघन, प्रगट वसिष्ठ हैं ।।
गुरुदेव परम, आनंदमय देखियत;
गुरुदेव वर, वरियानहू वरिष्ठ[२] हैं ।
सुंदर कहत कछु महिमा कही न जाय;
ऐसे गुरुदेव दादू, मेरे शिर इष्ट[३] हैं ।।२५।।
योगी जैन जंगम, संन्यासी वनवासी बौद्ध;

---

१ मर्य्यादापन्न । २ श्रेष्ठतम । ३ प्रिय ।

और कोउ वेष पक्ष, सब भ्रम मान्यो है ।
तापस रु ऋषीश्वर, मुनीश्वर कबीश्वर;
सबनिको मत देखि, तत्त्व पहिचान्यो है ।।
वेदसार तत्त्वसार, स्मृति और पुराण सार;
ग्रंथनको सार सोई, हृदयमाहिं आन्यो है ।
सुंदर कहत कछु, महिमा कही न जाय;
ऐसो गुरुदेव दादू, मेरे मन मान्यो है ।।२६।।
जीते हैं जु काम क्रोध, लोभ मोह दूरि किये;
और सब गुणिनिको, [१]मद जिन भान्यो है ।
उपजै न ताप कोई, शीतलस्वभाव जाको;
सबहिमें समता[२] संतोष[३], उर आन्यो है ।।
काहूसों न राग[४] द्वेष[५], देत सबहीको तोष;
जीवतही पायो मोष[६],एक ब्रह्म जानो है ।
सुंदर कहत कछु, महिमा कही न जाय;
ऐसो गुरुदेव दादू, मेरे मन आन्यो है ।।२७।।

इति श्रीगुरुदेवको अंग सम्पूर्ण ।।१।।

अथ श्रीउपदेश चिन्तामणिको अंग २.

हंसाल छंद

तो सहि चतुर सुजान परवीण अति, परै जनि पिंजरे मोह कूवा ।
पाय उत्तम जनमलाय ले चपलमन[७], गाय गोविंद गुणजीत जूवा।।
आपही आप अज्ञान नलिनी[८] बन्धो, बिना प्रभु विमुख[९] कै बेर मूवा ।
दास सुंदर कहै परमपद तौ लहै, राम हरि राम हरि बोल सूवा ।।१।।
[१०]नफ्स शयतानकुं[११] कैदंकर आपने, क्या [१२]दुनीमें फिरै खात गोता ।

---

१ घमंड । २ बराबरी । ३ सब्र । ४ प्रीति । ५ वैर । ६ मोक्ष । ७ चंचल । ८ कमलिनी
९ पराङ्मुख । १० दिल । ११ बुरे राहों में ले जानेवाला । १२ संसार ।

है गुनेगार भी गुनाही करत है, खायगा मार तब फिरे रोता ।।
जिन तुझे खाकसे[१] अजब[२] पैदा किया,तू उसे क्यूं फरामोश[३] होता।
दास सुंदर कहै शरम तबही रहे, हक्क तू हक्क तू बोल तोता।।२।।
आबकी[४] बुंदहि वजूद[५] पैदा किया, नैन मुख नासिका[६] कर सँजूती।
खेल ऐसा करै ओही लीये फिरे, जागके देख क्या करै सूती ।।
भूलि उस[७] खसमको कामतैं क्या किया, वेगही यादकर मर निपूती ।
दास सुंदर कहै सर्व सुख तौ लहै, भी तुहीं भी तुहीं बोल तूती ।।३।।
[८]अवल उस्तादके [९]कदमकी खाक हों, हिर्स[१०] [११]बगुजार सब छोड़फैना[१२] ।
यार [१३]दिलदार दिलमाहिं तू यादकर,है तुज्ही पास तू देख नैना।।
जानका जानहै जिंदका जिंदहै, [१४]सुखनिका सुखन कछु समज सैना[१५] ।
दास सुंदर कहै सकलघट में रहे, एक तू एक तू बोल मैना ।।४।।

मनहर छन्द

कान के गये कहाँ, कान ऐसे होत मूढ;
नैनके गयेते कहाँ, नैन ऐसे पाइये ।
नासिका गयेते कहाँ, नासिका सुगंध लेत;
मुखके गयेते कहाँ, मुख ऐसे गाइये ।।
हाथके गयेते कहाँ, हाथ ऐसे काम होत,
पाँवके गयेते ऐसे, पाँव कित धाइये ।
याहिते विचारि देख, सुन्दर कहत तोहि;
देहके गयेते ऐसी, देह कित पाइये ।।५।।
बेर बेर कह्यो तोहिं, सावधान क्यूं न होइ;

---

१ मिट्टी। २ विचित्र। ३ भूलना। ४ पानी। ५ देह। ६ नाक। ७ स्वामी। ८ पहले। ९ पांव। १० डाह। ११ छोड़ दे। १२ व्यसन। १३ आत्मीय मित्र। १४बोलनेवाला। १५ चतुर ।

ममताकी[१] मौत[२] शिर, काहेको धरतु है ।
मेरो धन मेरो धाम, मेरे सुत मेरी वाम[३];
मेरे पशु मेरे ग्राम[४], भूलेही फिरतु है ।
तू तो भयो [५]बावरो, बिकाय गइ बुद्धि[६] तेरी;
ऐसो अन्ध कूप गेह, तामें तू परतु है ।
सुंदर कहत तोहि, नेकहू[७] न आवे [८]लाज;
काजको बिगारके, अकाज क्यों करतु है ।।६।।
तेरो तो कुपेच परचो, गाँठि अत्ति [९]घूरि गई;
ब्रह्मा आई छौरे क्यूंही, छूटत न जबहू ।
तेलसू भिजोइ करि, [१०]चींथरा लपेटि राखै;
कूकरको पूंछ सूधो, होत नाहिं तबहू ।
सासू देत सीख बहु, कीरीकूं गिनत जाई;
कहत कहत दिन, बीत गयो सबहू ।
सुंदर अज्ञानि ऐसे, छांड़े नाहिं अभिमान;
निकसत प्राण लग, चेत नाहिं कबहू ।।७।।
वालुमांहि तेल नाहिं, निकसत काहू विधि;
पत्थर न भीजै बहु, बरषत [११]घन है ।
पानीके मथेते कहूँ, घीउ नहीं पाइयत;
[१२]कूकसके कूटे कहूं, निकसत कन है ।।
शून्यही की मूठी भरि, हाथ न परत कछु;
[१३]ऊषरमें बोये कहा, निपजत[१४] अन है ।
[१५]उपदेश औषध सो, कौन विधि लागै ताहि,

---

१ सत्त्व । २ झुकजा । ३ लुगाई । ४ गांव । ५ बावला । ६ मति । ७ तनिक । ८ शरम । ९ ऐंठना । १० चिरकुट । ११ बादल । १२ भूसी । १३ मरुभूमी । १४ पैदा । १५ शिक्षा ।

सुंदर असाध्यरोग[1], भयो जाके मन है ।।८।।
वैरी घरमाहिं तेरे जानत सनेही मेरे;
[2]दारा [3]सुत [4]वित्त तेरे, खोसि खोसि खायँगे ।
औरहुं कुटुंब लोक, लूटे चहुँ ओरहीते;
मीठी मीठी बात कहि, तोसू लपटायँगे ।।
संकट परैगो जब, कोई नहिं तेरो तब;
अंतही कठिन बाकी, बेर उठि जायँगे ।
सुंदर कहत ताते, झूठो ही प्रपंच[5] सब;
स्वप्नकी नाई यह, देखत बिलायँगे ।।९।।
वालूके मंदिरमाहिं, बैठी रह्यो स्थिर होई;
राखत है जीवनकी, आशा कउ दिनकी ।
पल पल [6]छीजत घटत, जात घरी घरी;
[7]विनशत बेर कहा, खबर न छिनकी ।।
करत उपाय झूठे, लेन देन खान पान;
मूसा इत उत फिर, ताकी रही मिनकी ।
सुंदर कहत मेरी मेरी, करी भूल्यो शठ;
चंचल चपल माया, भई किन किनकी ।।१०।।
श्रवण ले जाइकरि, [8]नादकी ले डारैं फाँसी;
नैनहू ले जाइकरि, रूप वंश करचो है ।
नासिका ले जाइकरि, बहुत सुंघावै गन्ध;
रसना[9] ले जाइकरि, स्वाद मन हरचो है ।।
त्वचाहू ले जाइकरि, नारिसूं परश करै;
सुंदर को इक साधु, ठगनिने डरचो है ।
काम ठग क्रोध ठग, लोभ ठग मोह ठग;

---

१ दु:साध्य रोग। २ लुगाई। ३ लड़का। ४ सम्पत्ति। ५ बखेड़ा। ६ नुकसान। ७नाश। ८ शब्द । ९ जीभ ।

ठगनकी नगरी में जीव, आइ परचो है ।।११।।
पायो है मनुष्यदेह, औसर बन्यो है एह;
ऐसो देह बेरबेर, कहो कहां पाइये ।
भूलत है बांवरे तू, अबके सयानो होइ;
रतन अमोल सौ, तौ काहेकु ठगाइये ।।
समुझि विचार करि, ठगनिको संग त्यागि;
ठगबाजि देखि कहुँ, मन न डुलाइये ।
सुंदर कहत ताते, सावधान क्यूं न होइ;
हरिको भजन करि, हरिसें समाइये ।।१२।।
घरि घरि घटत छिजत, जात छिन छिन;
भिजतही गलो जात, माटीके सो ढेल है ।
मुकुतिके द्वार आइ, सावधान क्यूं न होइ;
बेर बेर चढ़त न, तियाको सो तेल है ।।
करिले [1]सुकृत हरि, भजि ले [2]अखंड नर;
याही में अंतर परें, यामें ब्रह्ममेल है ।
मानुष जनम यह, जीत भावे हार अब;
सुंदर कहत यामें, जुवाके सो खेल है ।।१३।।
[3]यौवनको गयो राज, और सब भयो साज;
अपनी दुहाई फेरि, दमामो[4] बजायो है ।
[5]लकुटी हथ्यार लिये, नैन कर डाल दिये;
श्वेत वार भये ताके, तँबूसो तनायो है ।।
दशन[6] गये सु मानो, [7]दरवान दूरि किये;
जो घरीं परी सों आन, बिछानो बिछायो है ।
शीश कर कंपत सु, सुंदर निकारचो रिपु[8];

---

१ पुण्य । २ अविनाशी । ३ जवानी । ४ नगारा । ५ लाठी । ६ दांत । ७ डचोढ़ीदार । ८ वैरी ।।

देखतहि देखत बुढ़ापो, दौरि आयो है ॥१४॥
देहको न देह कछु, देहको ममत्व छाँड़;
देह तौ दमामों दिये, देह देह जात है ।
घट तौ घटत घरि, घरि घट नाश होत;
घटके गयेते घटकी, न फिर बात है ॥
पिंड पिंडमाहिं, पिंड पिंडकूं उपावत है;
पिंड पिंड खात पुनि, पिंडही को पात है ।
सुंदर न होय जासूं, सुंदर कहत जग;
सुंदर चैतन्य रूप, सुंदर विख्यात है ॥१५॥

इंदव छन्द

ग्रीव त्वचा कटि है लटकी, कचहूं पलटे अजहूं रत वामी ।
दंत गये मुखके उखरे [1]नखरे, न गये सु खरोखर[2] कामी ॥
कंपत देह सनेह[3] सु दंपति, संपति जंपत है निशि जामी ।
सुंदर अंतहु मान तज्यो, न भज्यो भगवंत सु लौणहरामी ॥१६॥
देह घटी पग[4] भूमि मँडै नहिं, औ लठिया पुनि हाथ लई जू ।
आँखिहु नाक परै मुखतें जल, शीश हले [5]कटि ढीच नई जू ॥
ईश्वरकूं कबहूं न संभारत, दुःख परै तब हाइ दई जू ।
सुंदर तौहूं विषयसुख बंछत, घोरे गये पै बगै[6] न गई जू ॥१७॥

सवैया छन्द

पाइ अमूलक[7] देह यहै नर, क्यूं न विचार करे दिल अंदर ।
कामहु क्रोधहु लोभहु मोहहु, लूटत है दशहूं दिशि द्वंदर[8] ॥
तू अब बंछत[9] है सुरलोकहि, कालहु पाइ परै सु पुरंदर ।
छांड़ि [10]कुबुद्धि [11]सुबुद्धि हृदयधरि,आतमराम भजै क्यूं न सुन्दर।१८।

---

१ नह । २ सच्चा गधा । ३ प्रेम । ४ पाँव । ५ कमर । ६ बाग घोड़े की । ७ अमूल्य ।
८ लड़ाक । ९ कामना करना । १० कुमति । ११ सुमति ।

इन्दव छन्द

इंद्रिनके सुख मानत है शठ[१], याहिहिते बहुते दुख पावै ।
ज्यूं जलमें झख[२] मांसही लालच, स्वाद बँध्यो जल बाहरि आवै ।
ज्यूं कपि मूंठि न छांड़त हैं, रसना वश बंध पिऱ्यो बिललावै[३] ।
सुंदर क्यूं पहिले न संभारत, जो गुड़ खाय सु कान विंधावै।। १९।।
कौन कुबुद्धि भई घट अंदर, तू अपने प्रभुसूं मन चोरै ।
भूलि गयो विषयासुख में शठ, लालच लागि रह्यो अति थोरै ।।
ज्यूं कोउ कंचन[४] क्षार[५] मिलावत, ले करि पत्थरसूं नग फोरै ।
सुंदर या नरदेह अमूलक, तीर लगी नवका[६] कित बोरै ।।२०।।
देखन के नर शोभत है जस, आहि[७] अनूपम[८] केलि[९] कुखंभा ।
भीतर तौ कछु सार[१०] नहीं पुनि, ऊपर छीलक अंबर[११] दंभा ।।
बोलत है परि नाहिं कछु सुधि, ज्यूंहि बहारत वाजत कुंभा[१२] ।
रूसि रहै [१३]कपि ज्यूं छिनमांहि,सु या हित सुंदर होत अचंभा।२१।
देखनके नर दीसत है परि, लक्षण तो पशुके सबही हैं ।
बोलत चालत पीवत खात सु, वे घर वे वन जात सही हैं ।।
प्रात गये [१४]रजनी फिरि आवत, सुंदर यूं नित भार वही हैं ।
और तु लक्षण आइ मिले सब, एक कमी शिर शृंग नहीं हैं ।।२२।।
प्रेत भयो कि पिशाच भयो कि, निशाचरसो[१५] जितहीं तित डोलै ।
तू अपनी [१६]सुधि भूलि गयो मुखते, कछु और कि औरही बोलै ।।
सोई उपाय करै जु मरै पचि,[१७] बंधन तो कबहूं नहिं खोलै ।
सुंदर जा तनमें हरि पावत, सो तनु नाश कियो मति भोलै।। २३।।
पेटते बाहिर होतहीं बालक, आइ जु मातु पयोधर[१८] पीनो ।

---

१ दुष्ट । २ मछली । ३ रोवे । ४ सोना । ५ राख । ६ नाव । ७ है । ८ अनूठा ।
९ क्रीडा । १० मूल । ११ कपड़ा । १२ घड़ा । १३ बंदर । १४ रात । १५ राक्षस ।
१६ खबर । १७ यत्न कर करके । १८ कुच ।

मोह बँध्यो दिनहीं दिन और, [1]तरुण भयो तियके रस भीनो ।।
पुत्र प्रपुत्र बँध्यो परिवार सु, ऐसिहि भाँति गये पन[2] तीनो ।
सुंदर रामको नाम विसारिसु, आपहि आपकुं बंधन कीनो।।२४।।
मातु पिता सुत भाई बँध्यो, युवतीके कहे कह काम करै हैं ।
चोरि करै [3]वटपारि करै किरषी,[4] बनजी करि पेट भरै है ।।
शीत[5] सहैं शिर घाम सहै कहि, सुंदर सो रणमाँहि[6] मरै है ।
बाँधि रह्यो ममता सबसूं नर, या हित बद्धहि बद्ध फिरै है ।।२५।।
तू ठगिके धन और कुं ल्यावत, तेरउ नौ घर औरहि फोरै ।
आग लगै सबही जरि जाइ सु, तू दमरी दमरी करि जोरै ।।
हाकिमको डर नाहिं न सूझत, सुंदर वेरहि वेर निचोरै ।
तू खरचै नहिं आप न खाई सु, तेरिहि चातुरि तोहिकूं बौरै।।२६।।

मनहर छन्द

करत प्रपंच इन, पंचनिके वश परचो;
[7]परदारा रतनैन, आनत बुराई को ।
परधन हर परजीवकी, करत घात;
मद्य मांस खाय, लवलेश न भलाई को ।।
होयगो हिसाब जब, मुखते न आवे ज्वाब;
सुंदर कहत लेखो, लेते राई राईको ।
इहां तौ कियो बिलास, यमको न तोहिं [8]त्रास;
वहाँ तौ नहीं है कछु, राज [9]पोपाबाईको ।।२७।।
दुनियाकूं दौरता है, औरतकूं लौरता है;
वजूदकूं मौरता है, वटौ ईस राईका ।
मुरगीकूं मोसता है, बकरीकूं रोसता है;

---

१ जवान। २ बाल, युवा, वृद्ध तीनों अवस्था। ३ मार्ग में लूटना। ४ खेती। ५ जाड़ा।
६ युद्ध में। ७ परस्त्री। ८ डर। ९ दगा।

गरीबकूं खोंसता है, वेमेहेर गाईका ।
जुलमकूं करता है, धनीसूं न डरता है;
दोजखकूं[१] भरता है, खजाना बलाईका ।
होयगा हिसाब जब, आवेगा न ज्वाब तब;
सुंदर कहत गुन्हेगार, है [२]खुदाई का ॥२८॥
कर कर आयो जब, खर खर काट्यो नार;
भर भर बाज्यो ढ़ोल, घर जान्यो है ।
दर[३] दर दौर्‌यो जाय, नर नर आगे दीन;
बर बर बकत न, नेक अचसान्यो है ॥
सर सर सोधै धन, तर तर तार पात;
जर जर काटत, अधिक मोद[४] मान्यो है ।
फर फर फूल्यो फिरै, डर डरपैं न मूढ़;
हर हर हँसत न, सुंदर सकान्यो है ॥२९॥
जनम सिरान्यो जाइ, भजन विमुख शठ;[५]
काहेकूं [६]भवन [७]कूप, विन मीच मरै है ।
गहत अविद्या जानि, शुक नलिनी ज्यूं मूढ;
कर्म और विकर्म करै; करत न डरै है ॥
आपहीते जात अन्ध, नरकमें बेर बेर;
अजहूं न शंक, मनमाहिं अब करै है ।
दु:खको समूह, ‘अवलोकिके न त्रास[९] होइ;
सुंदर कहत नर, नागपाश परै है ॥३०॥
जग मग पग तजि, सजि भजि राम नाम;
काम क्रोध तन मन, घेरि घेरि मारिये ।
झूठ मूठ हठ त्याग, जाग भाग सुनि पुनि;

---

१ नरक (पेट) । २ परमेश्वर का । ३ जगह जगह । ४ प्रसन्नता । ५ मूर्ख । ६ घर । ७ कुँवा ८ देखकर । ९ डर ।

गुण ज्ञान आनि आन, वारि[1] वारि डारिये ॥
[2]गहि ताहि जाहि शेष, ईश, [3]शशि सुर[4] नर;
और बात हेतु तात, फेरि फेरि जारिये ।
सुंदर दरद खोइ, धोइ धोइ बेर बेर;
सार संग अंग रंग, हेरि हेरि धारिये ॥३१॥

दुर्मिला छन्द

हठ योग धरो तन जात मिया, हरि नाम विना मुख धूरि परै ।
शठ योग हरो छिन गात किया, चरि चाम दिना मुख पूरि जरै ॥
भठ भोग परो घन घात धिया, अरि काम किना सुख जूरि मरै ।
मठ रोग करो धन घात हिया, परि राम तिना दुख दूरि करै ॥३२॥
गुरु ज्ञान गहै अति सोइ सुखी, मन मोह तजे सब काज [5]सरै ।
धुर ध्यान रहै पति खोइ मुखी, रण[6] लोह बजे तब लाज परै ॥
सुर तानन है हति दोइ दुखी, तन[7] छोह सजे अब आज मरै ।
पुर थान लहै मति धोइ रुखी, जन वोह रजै जब राज करै ॥३३॥

इति उपदेशचिंतामणिका अंग सम्पूर्ण ॥२॥

अथ कालचिन्तामणिको अङ्ग ३

इंदव छन्द

मंदिर म्हेल विलायत हैं गज, ऊंट दमाम दिना इक दो हैं ।
तातहु मात तिया सुत बांधव, देख धुं पामर होत बिछो है ॥
झूठ प्रपञ्चसुँ राचि रह्यो शठ काठकि पूतरि ज्यूं कपि मोहै ।
मेरिहि मेरि कहै नित सुंदर, आँखि लगे कहि कौनकु को है ॥१॥
ये मम देश विलायत है गज, ये मम मंदिर ये मम [8]थाती ।
ये मम मातु पिता पुनि बांधव, ये मम पूत सु ये मम नाती ॥
ये मम कामिनि केलि[9] करै नित, ये मम सेवक है दिन राती ।

---

१ न्योछावर । २ पकड़ । ३ चन्द्र । ४ देवता । ५ बनता है । ६ संग्राम । ७ शरीर ।
८ धरोहर । ९ बिलास ।

सुंदर ऐसेहि छांड़ गयो सब, तेल जर्‍यो सु बुझी जब बाती ।।२।।
ते दिन चारि विराम[१] लियो शठ, तोर कहे कछु ह्वैं गइ तेरी ।
जैसेहि बाप ददा गये छांड़ि सु, तैसे ही तू तजि है फल फेरी ।।
मारहि काल चपेट अचानक,[२], होइ घरीकमें राखकि ढेरी ।
सुंदर ले न चलै कछु य संग, भूलि कहै नर मेरेहि मेरी ।।३।।
कै यह देह जरायके छार, कियाकि कियाकि कियाकि किया है ।
कै यह देह जमीमहिं गाड़ि, दियाकि दियाकि दियाकि दिया है ।।
कै यह देह रहै दिन चार, जियाकि जियाकि जियाकि जिया है ।
सुंदर कालअचानक आइ,लियाकि लियाकि लियाकि लिया है।४।
देह सनेह न छांड़त है नर, जानत है थिर है यह देहा ।
छीजत जात घटै दिनही दिन, दीसत है घटको नित छेहा ।।
काल अचानक आइ गहै कर, ढ़ाइ गिराइ करै तनु खेहा[३] ।
सुंदर जानि यहै निहचै धरि, एक निरञ्जन सूं कर नेहा ।।५।।
तू कछु और विचारत है नर, तोर विचार धर्‍योहि रहैगो ।
कोटि उपाय करै धनके हित, भाग्य लिख्यो तितनोहि लहैगो ।
भोरकि सांझ घरी पलमाँझ सु, काल अचानक आइ गहैगो ।
राम भज्यो न कियो कछु सुकृत,[४] सुंदर यूं पछताय रहैगो ।।६।।
भूलि गयो हरि नामकुं तू शठ, देख धौं कौन सँयोग बन्यो है ।
काल अचानक आइ गहे कँठ, पेख धुँ झूठहि तान तन्यो है ।।
क्षार करै सब [५]धामकुँ लूटि, अनादिकुं ऐसा हि जीव हन्यो है ।
कोउ न होत सहाय कुटुंब, तनादिक सुंदर यूंहि सुन्यो है ।।७।।
बीत गये पिछले सबही दिन, आवत हैं अगले दिन नेरे ।
काल महाबलवंत बड़ो रिपु, साधि रह्यो शिर ऊपर तेरे ।।
एक घरी महँ मारि गिरावत, लागत ताहि कछू नहिं बेरे ।
सुंदर संत पुकारि कहै सब, हूं पुनि तोहि कहूं अब टेरे ।।८।।

---

१ विश्राम । २ दैवयोग । ३ धूरि । ४ अच्छा काम । ५ घर ।

सोइ रह्यो कहाँ गाफिल[१] ह्वै करि, तो शिर ऊपर काल दहारै ।
धासम धूमस लागि रह्यो शठ, आइ [२]अचानक तोहिं पछारै ।।
ज्यूं वनमें मृग कूदत फाँदत, चित्र गले नखसूं उर फारै ।
सुंदर काल डरै जिनके डर, ता प्रभुकूं कहु क्यूं न सँभारै ।।९।।
चेतत क्यूं न अचेतन औंघत, काल सदा शिर ऊपर गाजै ।
रोंकि रहै गढ़के सब द्वारिन, तू तब कौन गली हुई भाजै ।।
आइ अचानक केश गहै जब, पाकरिके पुनि तोहि जु लाजै ।
सुंदर कौन सहाय करै सब, मुंडहि मुंड बराबर बाजै ।।१०।।
तू अति गाफिल होय रह्यो शठ, कुंजर[३] ज्यूं कछु शंक न आनै ।
माय नहीं तनुमें अपनो बल, मत्त भयो विषयासुख ठानै ।।
खोसत खात सबै दिन बीतत, नीति अनीति कछु नहिं जानै ।
सुंदर केहरि काल महारिपु, दंत उखारि कुँभस्थल[४] मानै ।।११।।
मातु पिता युवती सुत बांधव, आइ मिल्यो इनसे सनबंधा ।
स्वारथके अपने अपने सब, सो यह नाहिन जानत अंधा ।।
कर्म विकर्म करै तिनके हित, भार धरै नित आपुन कंधा ।
अंत बिछोह[५] भयो सबसूं पुनि, याहित सुंदर है जग अंधा ।।१२।।
संत सदा उपदेश बतावत, केश[६] सबै शिर श्वेत[७] भये हैं ।
तू ममता अजहूं नहिं छाँड़त मौतहु आइ सँदेश दये हैं ।।
आजु कि काल चलै उठि मूरख, तेरेहि देखत केत गये हैं ।
सुंदर क्यूं नहिं राम संहारत, या जगमें कहुं कौन रहे हैं।।१३।।

मनहर छन्द

करत करत धन्ध, कछुहि न जाने अन्ध;
आवत निकट दिन, आगले चपाक दैं

---

१ बेहोश। २ अकस्मात्—एकाएकी। ३ हाथी। ४ मस्तक। ५ बिछुरना। ६ बाल।
७ सफेद।

जैसे बाज तीरकूं, दाबत है अचानक;
जैसे बक मछराकूं, लीलत लपाक दैं ॥
जैसे मक्षिकाकि[१] घात, मकरी करत आव;
जैसे साँप मूषककूं,[२] ग्रसत गपाक दैं ।
चेत रे अचेत नर; सुंदर संहार राम;
ऐसे जोहिं काल आय, लेइगो टपाक दैं ॥१४॥
मेरो देह मेरो गेह,[३] मेरो परिवार सब;
मेरो धन माल मैं तो; बहु विधि भारो हूं ।
मेरे सब सेवक हुकम, कोऊ मेटै नाहिं;
मेरी [४]युवतिको मैं तौ, अधिक पियारो हूं ॥
मेरो वंश ऊंचो मेरे, बाप दादा ऐसे भये;
करत बड़ाई मैं तो, जगत उजारो हूं ।
सुंदर कहत मेरो, मेरो करि जौन शठ;
सोई नहिं जानै मैं तौ, कालहीको चारो[५] हूं ॥१५॥
जबहींते नाम धरचो, तबहींते भूलि परचो,
बालापनमाहिं भूल्यो, समझ्यो न रुख में ।
यौवन भयो है जब, कामवश भयो तब;
युवतीसूं एकमेक, भूलि रह्यो सुखमें ॥
पुत्रहू प्रपुत्र भये, भूल्यो तब मोहि बाँधि;
चिंता करि करि भूल्यो जानै नहिं दुखमें ।
सुंदर कहत शठ, तीनपन[६] माहिं भूल्यो;
अंत पुनि जाइ परचो, कालहीके मुख में ॥१६॥
उठत बैठत काल, सोवत जागत काल;
चलत फिरत काल, काल उर धँस्यो है ।
कहत सुनत काल, खातहूँ पिवत काल;

---

१ मक्खी । २ चूहा । ३ घर । ४ स्त्री । ५ खाने की चीज । ६ अवस्था ।

कालहिके गाल माहिं, हर हर हँस्यो है ॥
तात मात बंधु काल, सुत दारा गृह काल;
सकल कुटुंब काल, काल जाल फँस्यो है ।
सुंदर कहत एक, राम विन सब काल;
कालहिको कृत्य कियो, अंतकाल [1]ग्रस्यो है ॥१७॥
जबते जनम लेत, तबहीते आयु घटै;
माइसों कहत मेरो, वरो होत जात है ।
आज और काल और, दिन दिन होत और;
दौरयो दौरयो फिरत, खेलत अरु खात है ॥
बालपन बीत्यौ जब, यौवन लग्यो है आइ;
यौवनहु बीते बूढ़ो, डोकरो दिखात है ।
सुंदर कहत ऐसे, देखतही बूझि गयो;
तेल घटि गये जैसे, दीपक बुझात है ॥१८॥
सब कोउ ऐसे कहै, काल हम काटत हैं;
काल तौ [2]अखंड नाश, सबको करतु है ।
जाके भय ब्रह्मा पुनि, होत है कँपायमान;
जाके भय सुरासुर, इंद्रहू डरतु है ॥
जाके भय शिव अरु, शेषनाग तीनों लोक;
केइक कल्प[3] बीते, लोमश परतु है ।
सुंदर कहत नर, [4]गरब गुमान करै;
तू तो शठ एकही, पलकमें मरतु है ॥१९॥
कालसम बलवत, कोऊ नहीं देखियत;
सबको करत अंत, काल महा जोर[5] है ।
कालहीको डर सुनि, भग्यो मूसा पैगम्बर;
जहाँ जहाँ जाइ तहाँ, तहाँ बाको घोर[5] है ॥

---

१ निगलना । २ बिना सीमा के संपूर्ण । ३ ब्रह्मा का एक दिन । ४ अभिमान । ५ कठिनाई ।

काल भयानक भयभीत, सब किये लोक;
स्वर्ग मृत्यु पातालमें, कालहिको शोर है ।
कालहिको काल एक, सुंदर अखंड ब्रह्म;
वासूं काल डरै जोइ, चल्यो वहि ओर है ।।२०।।
वरषा भयेते जैसे, बोलत भँभीरी[1] स्वर;
खण्ड न परत कहुं, नेकहू न जानिये ।
जैसे पुंगी बाजत, अखंड स्वर[2] होत पुनि;
ताहूमें न अंतर, अनेक राग गानिये ।
जैसे कोइ गुड्डीकुं,[3] चढ़ावत गगन[4] माहिं;
ताहूकी सूं धुनि सुनि, वैसेही बखानिये ।
सुंदर कहत तैसे, कालको प्रचंड वेग;
रात दिन चल्यो जाइ, अचरज मानिये ।।२१।।
माया जोरि जोरि नर, राखत यतन करि;
कहत है एक दिन मेरे काम आइ है ।
तोहिं तो मरत कछु, बेर नहीं लाग शठ;
देखतहि देखत, बबूलासों बिलाइ है ।।
धन तो धरचोही रहै, चलत न कौड़ी गह;
रीते हाथनसे जैसो, आयो तैसे जाइ है ।
करी ले सुकृत[5] यह, बरिया न आवै फिरि;
सुंदर कहत नर, पुनि पछताइ है ।।२२।।
बावरो[6] सु भयो फिरै, बावरीहि बात करै;
बावरा ज्यूं देत वायु, लागत बुरानो है ।
मायाको उपाय जानै, मायाकी चातुरी ठानै;
मायामें मगन अति, माया लपटानो है ।।
यौवनके[7] मद मादो, गिनत न कोउन को;

---

१ झींगुर । २ आवाज । ३ पतङ्ग । ४ आकाश । ५ पुण्य । ६ पागल । ७ जवानी ।

काम वंश कामिनीके, हाथ ही बिकानो है ।
अतिहि भयो बेहाल,[१] सूझत न माथे काल;
सुंदर कहत ऐसो, और को दिवानो है ॥२३॥
झूठो देह झूठो धाम, झूठो सुख झूठो काम;
झूठी देह झूठो नाम, धरिके भुलायो है ।
झूठो तात[२] झूठो मात, झूठे सुत दारा[३] भ्रात;
झूठो हित मानि मानि, झूठो मान लायो है ॥
झूठो लैन झूठो दैन, झूठो सुख बोल बैन;
झूठे झूठे करै फैन, झूठहीकूं धायो है ।
झूठही में एतो भयो, झूठही में पचि गयो;
सुंदर कहत साँच, कबहूँ न आयो है ॥२४॥

दीर्घाक्षर—कवित्त

झूठे हाथी झूठे घोड़ा, झूठे आगे झूठा दौरा;
झूठा बाँधा झूठा छोरा, झूठा राजा रानी है ।
झूठी काया झूठी माया, झूठा झूठे धंधा लाया;
झूठा मूवा झूठी जीया, झूठी याकी वानी है ॥
झूठा सोवै झूठा जागे, झूठा जूझै झूठा भागे;
झूठा पीछे झूठा आगे, झूठें झूठी मानी है ।
झूठा लीया झूठा दीया, झूठा खाया झूठा पीया;
झूठा सौदा झूठा कीया, ऐसा झूठा प्राणी है ॥२५॥

मनहर छन्द

झूठ यूं बंध्यो है जाल, ताहीते ग्रसत काल;
काल विकराल ब्याल,[४] सबहीकूं खात है ।
नदीको प्रवाह[५] चल्यो, जात है समुद्रमाहिं;

---

१ व्याकुल । २ पिता । ३ स्त्री । ४ सर्प । ५ धारा ।

तैसे जग कालहीके, मुखमें समात है ।।
देहसु ममत्व ताते, कालको भै[1] मानत है;
ज्ञान उपजते वही, कालहू चिलात है ।
सुंदर कहत परब्रह्म, है सदा अखंड;
आदि मध्य और अंत, सोई ठहरात है ।।२६।।

इंदव छन्द

काल उपावत[2] काल खपावत, काल मिलावत है गहि माटी ।
काल हलावत काल चलावत, काल खिलावत है सब आटी ।।
काल बुलावत काल भुलावत, काल डुलावत है बनघाटी ।
सुंदर काल मिटे तबही पुनि, ब्रह्मविचार पढ़ै जब पाटी ।।२७।।

इति कालचिंतामणिको अंग संपूर्ण ।।३।।

अथ देह आत्मा बिछोह को अंग ४.

इंदव छन्द

वे श्रवणा रसना मुख वेसहि, वेसहि नासिक वेसहि अंखी[3] ।
वे कर वे पग वे सब द्वार सु, वे नख शीशहि रोम असंखी ।।
वेसहि देह तरी पुनि दीसत, एक विना सब लागत खंखी[4] ।
सुंदर कोउ न जानि सकै यह, बोलत हो सु कहा गयो पंखी ।। १।।
बोलत चालत पीवत खावत, सिंचत है द्रुमकूं[5] जस माली ।
लेतहुं देतहुं देखत रीझत, तोरत तान बजावत ताली ।।
जामहि[6] कर्मविकर्म किये सब, है यह देह परी अब ठाली ।
सुंदर सो कितहू नहिं दीसत,[7] खेल गयो इक खेल सु ख्याली।।२।।
मातु पिता युवती[8] सुत बांधव,[9] लागत है सबकूं अति प्यारो ।

---

१ डर। २ उत्पन्न करता है। ३ आँखी। ४ खाली। ५ पेड़। ६ देह। ७ दिखाई देना। ८ स्त्री। ९ भाई बंधु।

लोक कुटुंब खरो हित राखत, होइ नहीं हमते कहुं न्यारो ।।
देह सनेह तहाँ लग जानहु, बोलत है मुख शब्द उचारो ।
सुंदर चेतन [1]शक्ति गई जब, वेगि कहै घरबार निकारो ।।३।।
रूप भलो तबही लग दीसत, जौलग बोलत चालत आगै ।
पीवत खात सुनै अरु देखत, सोई रहै उठिकै पुनि जागै ।।
मातु पिता भइया मिलि बैठत, प्यार करी युवती गल लागै ।
सुंदर चेतन शक्ति गई जब, देखत ताहि सबै डरि भागै ।।४।।

मनहर छन्द

कौन भांति करतार,[2] कियो है शरीर यह;
पावकके[3] मांहि देखौ, पानीको जमावनो ।
नासिका श्रवण नैन, वदन[4] रसन वन;
हाथ पाव अंग नख, शीशको बनावनो ।।
अजब अनूप रूप, चमक दमक ऊपर;
सुंदर शोभित अति, अधिक सुहावनो ।
जाहि छिन चेतन, शकति[5] लीन होई गई;
ताहि छिन लागत है, सबकूं अभावनो[6] ।।५।।
मृत्तिकाको[7] पिंड देह, ताहिमें जुगति भई;
नासिका नयन मुख, श्रवण बनाये हैं ।
शीश पांव हाथ अरु, अँगुरी विराजमान;
अंगुरीके आगे पुनि, नखहु लगाये हैं ।।
पेट पीठ छाती कंठ, चिबुक[8] [9]अधर गाल;
दशन सन बहु, वचन सुनाये हैं ।
सुंदर कहत जब, चेतनशक्ति गई;
वही देह जारि वरि, क्षार करि आये हैं ।।६।।

---

१ आत्मा । २ ब्रह्मा । ३ अग्नि । ४ शरीर । ५ शक्ति । ६ अप्रिय । ७ मिट्टी । ८ ठोडी ।
९ होठ ।

देह तौ प्रगट यह, ज्यूंकी त्यूंही जानियत;
नयन झरोखे माहिं, झाँकत न देखिये ।
नाकके झरोखे माहिं, नेक न सुवास लेत;
कानके झरोखे माहिं, सुनत न लेखिये ।।
मुखके झरोखे में न, वचन उचार होत;
जीभहूं कूं षटरस, स्वाद न विशेखिये ।
सुंदर कहत कोऊ, कौन विधि जानै ताहि;
पीरो कारो काहू द्वारा, जातोहू न पेखिये[१] ।।७।।
मातु तौ पुकार छाति, कूटि [२]कूटि रोवति हैं;
बापहू कहत मेरो, नंदन[३] कहाँ गयो ।
भैयाहू कहति मेरी, बाँह आजु दूरि भई;
बहन कहति मेरो, बीर दुख दे गयो ।।
कामिनी[४] कहत मेरो, शीश शिरताज कहाँ;
उन्हैं ततकाल[५] रोइ, हाथ में धोरा लयो ।
सुंदर कहत कोऊ, ताहि नाहिं जानि सकें;
बोलत हुतो सो यह, छिनमें कहां गयो ।।८।।
रज[६] अरु बीरजको, प्रथम सँयोग भयो;
चेतनशकति तब, कौन भाँति आई है ।
कोऊ तौ कहत बीज,[७] मध्यही कियो [८]प्रवेश;
किनहुक पंचमास, पीछेक सुनाई है ।।
देहका वियोग[९] जब, देखतहि होइ गयो;
तब कोऊ कहो कहां, जाइके समाई है ।
पंडितही ऋषीश्वर, तपेश्वर मुनीश्वर;
सुंदर कहत यह, किनहूं न पाई है ।।९।।
तबलौंहि क्रिया सब, होत है विविध भाँति;

---

१ देखना । २ पीट पीट । ३ पुत्र । ४ स्त्री । ५ शीघ्र । ६ जो स्त्री में रहता । ७ वीर्य जो पुरुष में रहता है । ८ घुसना । ९ जुदाई ।

जबलग घटमाहिं, चेतन प्रकाश है ।
देहके अशक्त[1] भये, क्रिया सब थकी जाय;
जब लग श्वास चलै, तब लग आश है ।।
श्वासहू थक्यो है जब, रोवन लगे हैं तब;
सब कोउ कह अब, भया घट नाश है ।
काहु नहीं देख्यो किहिं, और किन कहाँ गयो;
सुंदर कहत यही, बड़ोही तमाश है ।।१०।।
देह तो सुरूप तौलौं, जौलौं है अरूप माहिं;
सब कोउ आदर, करत सनमान है ।
टेढ़ी पाग बाँधि वेर, वेरही मरोर मूछ;
बाहुहु सँवारै अति, धरत गुमान है ।।
देश देशहीके लोग, आयके हुजूर होई;
बैठीकरि तखत, कहावै सुलतान है ।
सुंदर कहत जब, चेतन शकति गई;
वहै देहताकी कोउ, मानत न आन[2] है ।।

इति देह आत्मा बिछोह को अंग संपूर्ण ।।४।।

अथ तृष्णाको अंग ५.

इंदव छन्द

नयनकी[3] पलही पलमें क्षण, आधिघरी घटिका जु गई है ।।
याम गयो युग याम गयो पुनि, साँझ गई तब रात भई है ।।
आज गई अरु काल गई, परसों नरसों कछु और ठई है ।।
सुंदर ऐसाहि आयु गई, तृषणा दिनही दिन होत नई है ।।१।।

दुर्मिला छन्द

कनही कनकूं बिललात फिरै, शठ याचत है जनही जनकूं ।

---

१ शिथिल । २ दूसरा । ३ आँख ।

तनही तनकूं अतिशोच करै, नर[१] खात रहै अनही अनकूं ।
मनही मनकी तृषणा न मिटी, पुनि धावत है धनही धनकूं ।।
छिनही छिन सुंदर आयु[२] घटी, कबहूँ न गयो वनही वनकूं ।।२।।

इन्दव छन्द

जो दश बीस पचास भये शत,[३] होई हजार तु लाख मँगैगी ।
कोटि अरब्ब खरब्ब असंख्य, धरापति[४] होनकि चाह जगैगी ।।
स्वर्ग[५] पतालकुं राज करौं, तृषणा अधिकी अति आग लगैगी ।
सुंदर एक सँतोष विना शठ, तेरि तु भूख कधी न भगैगी ।।३।।
लाख करोर अरब्ब खरब्बनि, नील रु पद्म तहाँ लग खाटी ।
जोरिहि जोरि भँड़ार भरै जब, और रही सु जमीतर[६] दाटी ।।
तौहु न तोहिं सँतोष भयो शठ, सुंदर तैं तृषणा नहिं काटी ।
सूझत नाहिंन कालहीतो शिर,मारि जुथाप मिलाइत माटी।।४।।
भूख लिये दशहूं दिशि दौरत, ताहित तू कबहूं न अघैहै ।
भूखभंडार भरै नहिं कैसहु, जो धन मेरु सुमेरु लुपै है ।।
तू अब आगे हाथ पसारत, या हित हाथ कछू नहीं ऐहै ।
सुंदर क्यूं नहिं तोष करै नर, खाइ जु खाइ कितो इक खैहै ।।५।।
भूख नचावत रंकहि[७] रावहि,[८] भूख नचाइ जु विश्व[९] विगोई ।
भूख नचावत इंद्र सुरासुर,[१०] और अनेक जहाँ लग जोई ।।
भूख नचावत है अध ऊर्धहि, तीनहु लोक गिनै कह कोई ।
सुंदर जाइ तहाँ दुखही दुख, ज्ञान विना न कहूं सुख होई ।।६।।
पेट पसार दियो जितही तित, तैं यह भूख किती इक थापी ।
ओर न छोर कछू नहिं आवत, मैं बहुभाँति भलीविध मापी ।।
देखत देह भये सब जीरन, तू तिन नूतन आहि अद्यापी ।
सुंदर तोहि सदा समुझावत, हे तृषणा अजहूं नहिं धापी ।।७।।

---

१ मनुष्य । २ अवस्था । ३ एक सौ । ४ राजा । ५ देवलोक । ६ पृथ्वी में गड़ा ।
७ दरिद्री । ८ राजा । ९ संसार । १० देवता दैत्य ।

तीनहि लोक अहार कियो सब, सात समुद्र पियो पुनि पानी ।
और जहां तहां ताकत डोलत, काढ़त आंख डरावत प्रानी ।।
दांत दिखावत जीभ हलावत, याहित मैं यह डाकिनी जानी ।
सुंदर खात भये कितने दिन, हे तृषणा अजहूं न अघानी ।।८।।
पांव पताल परे गय निकसी, शीश गयो असमान अघेरो ।
हाथ दशो दिशकूं पसरे पुनि, पेट भरे न समुद्र सुमेरो ।।
तीनहुं लोक लिये मुख भीतर, आंखिहुं कान बंधे चहुं फेरो ।
सुंदर देह धरयो अतिदीरघ, हे तृष्णा कछु छह[1] न तेरो ।।९।।
वाद वृथा भटके निशिवासर,[2] दूर कियो कबहूं नहिं धोषा ।
तू हतियारिन पापिनि कोढिन साच कहूं मत मानहु रोषा ।।
तोहिं मिलै तबते हुइ बंधन, तू मरि है तबहीं हुइ मोषा ।
सुंदर और कहा कहिये तुहिं, हे तृषणा अब तौं कर तोषा ।।१०।।
क्यूं जगमाहिं फिरै झख मारत, स्वारथ कौन परी जिहि जोलै ।
ज्यूं हरि पाई गऊ नहीं मानत, दूध दुह्यो कछु सो पुनि ढोलै ।
तू अतिचञ्चल हाथ न आवत, नीकस जाई नहीं मुख बोले ।
सुंदर तोहि कह्यो कितनी बिर, हे तृषणा अब तू मत डोलै ।।११।।
तू कहि कान धरी नहीं एकहु, बोलत बोलत पेटहि पाक्यो ।
हूं कछु बात बनाइ कहूं जब, तैं तब पीसतही सब फाक्यो ।।
केतक द्यौस भये परबोधत, हैं अब आगेहिकूं रथ हाँक्यो ।
सुंदर सीख गई सबही चलि, हे तृषणा कहिके तुहि थाक्यो ।।१२।।
तूहि भ्रमाय प्रदेश पठावत, बूढत जाय समुद्रहि जाजा ।
तूहि भ्रमाय पहाड़ चढ़ावत, वाद वृया मरि जाइ अकाजा ।।
तैं सबलोक[3] भ्रमाय भलीविध, भाँड़किये सब रंकहु राजा ।
सुंदर तोहिं दुखाइ कहूं अब, हे तृषणा तुहि नेकु न लाजा ।।१३।।

इति तृष्णाका अङ्ग संपूर्ण ।।५।।

---

१ नाश । २ रातदिन । अन्य प्रदेश

अथ धैर्य उराहनको अङ्ग ६.

इंदव छन्द

पाँव दिये चलने फिरने कहँ, हाथ दिये हरि कृत्य[१] करायो ।
कान दिये सुनिये हरिके यश, नैन दिये तिन मार्ग दिखायो ।।
नाक दियो मुख शोभत ता करि, जीभ दई हरिको [२]गुण गायो ।
सुंदर साज दिये परमेश्वर, पेट दियो बड़ पाप लगायो ।।१।।
कूप भरै अरु [३]वापि भरै, पुनि ताल भरै वरषाऋतु तीनों ।
कोटि भरै घट[४]माट भरै घर, हाट[५] भरै सबही भरि लीनो ।।
खण्डक खास बखार[६] भरे परि, पेट भरे न बड़ोदर[७] दीनो ।
सुंदर रीतुही रीतु रहे यह, कोन खड़ा परमेश्वर कीनो ।।२।।

मनहर छन्द

किधौं पेट चूल्हा किधौं, भाठि[८] किधौं भार आहि;
जोहि कछु झोंकिये सु, सब जरि जातु है ।
किधौं पेट थल किधौं, वापि किधौं सागर है;
जेतो जल परै तेतौ, सकल समातु है ।।
किधौं पेट दैत्य किधौं, भूत प्रेत राक्षस हैं;
खाउं खाउं करै कछु, नेक न अघातु है;
सुंदर कहत कछु, कौन पाप लायो पेट;
जबही जनम भयो, तबही को खातु है ।।३।।
विग्रह[९] तो विग्रह, करत अति बेर बेर;
तन पुनि तनक न, कबहुं अघायो है ।
घट न भरत क्यूंहि घट्यो रहत नित;
शरीर सिराईमें तौ, कबहुं न खायो है ।।

---

१ काम । २ बड़ाई । ३ बाबड़ी । ४ घड़ा । ५ बाजार । ६ कोठी । ७ बड़ापेट ।
८ मिट्टी । ९ लड़ाई ।

देह[1] देह कहतही, कहत जन्म बीत्यो;
पिंड पिंड काज निशि, दिन ललचायो हैं ।
मुदगल गिलत गिलत, न तृपत होइ;
सुंदर कहत वपु, कौन पाप लायो है ।।४।।
पाजी पेट क़ाज, कोटवालके आधीन होइ;
कोटवाल सौ तो, सिकदार आगे दीन है ।
शिकदार दीवानके, पीछे लग्यो डोलै पुनि;
दीवानहु जाय बादशाह, आगे लीन है ।।
बादशाह कहै या, खोदाय मुझे और देई;
पेटही पसारै वही, पेट वश कीन है ।।
सुंदर कहत प्रभु, क्यूंही नहीं भरै पेट;
एक पेट काज एक, एकके आधीन है ।।५।।
ते तौ प्रभु पेट दियो, जगत नचायो जिन;
पेटही के लिये घर, घर द्वारमें फिर्‍यो है ।
पेटही के लिये हाथ, जोरि आगे ठाढ़ो होई;
जोई जोई कह्यो सोई, सोई उन कर्‍यो है ।।
पेटही के लिये पुनि, मेघ शीत घाम सहै;
पेटही के लिये जाइ, [2]रणमाहिं मर्‍यो है ।
सुंदर कहत इन, पेट सब भांडे किये,
और गैल[3] छूटे पर, पेट गैल पर्‍यो है ।।६।।
पेटसो न बली जाके, आगे सब हारि चले;
राव अरु रंक एक, पेट जीति लिये हैं ।
कोउ बाघ मारत, विदारत[4] है कुंजरकूं;[5]
ऐसे शूरवीर पेट, काज प्राण दिये हैं ।।
यंत्र मंत्र साधत, आराधत[6] मशान जाई;

---

१ शरीर । २ लड़ाई में । ३ रास्ता । ४ फाड़ना । ५ हाथी । ६ पूजते ।

पेट आगे डरत, निडर ऐसे हिये हैं;
देवता असुर भूत, प्रेत तीनूं लोक पुनि;
सुंदर कहत प्रभु, पेट जेर[१] किये हैं ।।७।।
प्रातही उठत जब, पेटही की चिंता तब;
सब कोऊ जात आपु, आपुके आहारकूं ।
कोऊ अन्न खात पुनि, आमिष[२] भखत कोऊ;
कोऊ घास चरत, चरत कोऊ दारू[३] कूं ।।
कोऊ मोती फल कोऊ, वासरस पय[४] पान;
कोउ पानि पीव, भरत पेट भारकूं ।
सुंदर कहत प्रभु, पेटही भ्रमाय सब;
पेट तुम दियो है, जगत होन ख्वारकूं[५] ।।८।।

इन्दव छन्द

पेटहि कारण जीव हने बहु, पेटहि मांस भखै रु [६]सुरापी ।
पेटहि लेकर चोरि करावत, पेटहिकूं गठरी गहि कापी ।।
पेटहि पाश[७] गरेमहँ डारत, पेटहि डारत कूप रु वापी ।
सुंदर काहिकुं पेट दियो प्रभु, पेटसों और नहीं कोइ पापी ।।९।।
औरनकूं प्रभु पेट दियो तुम, तेरतु पेट कहूं नहिं दीसै ।
ये भटकाइ दिये दशहूं दिश, कोउक रांधत कोउक पीसै ।।
पेटहि कारण नाचत हैं सब, ज्यूं घरही घर नाचत [८]कीसै ।।
सुंदर आप न खावहु पीवहु, कौन करी इन ऊपर रीसै[९] ।।१०।।

मनहर छन्द

काहेकूं काहुके आगे, जाइके [१०]आधीन होइ;
दीन दीन वचन उचार, मुख कहते ।
जिनकूं तौ मद[११] अरु, [१२]गरब मान अति;

---

१ तंग । २ मांस । ३ लकड़ी । ४ दूध । ५ खराब । ६ शराबी । ७ फांसी । ८ बंदर । ९ क्रोध । १० छोटा—वश । ११ नशा । १२ अभिमान ।

तिनके कठोर बैन, कबहूं न सहते ॥
तुम्हरेही भजन सूं, मन लवलीन अति;
सकलकूं त्यागिके, एकांत जाइ गहते ।
सुंदर कहत यह, तुमही लगायो पाप;
पेट न हुतो तौ प्रभु, बैठे हम रहते ॥११॥
पेटही के वश रंक, पेटही के वश राव;
पेटही के वश और, खान सुलतान है ।
पेटही के वश योगी, जंगम संन्यासी शेख;
पेटही के वश बनवासी, खात पान है ॥
पेटही के वश ऋषि, मुनि तपधारी सब;
पेटही के वश सिद्ध,[1] साधक सुजान है ।
सुंदर कहत नहीं, काहूको गुमान रहै;
पेटही के वश प्रभु, सकल जहान है ॥१२॥

इति धैर्य उराहनको अङ्ग संपूर्ण ॥६॥

अथ विश्वासको अङ्ग ७.

इंदव छन्द

होइ निचिन्त करै मत चिंतहि, चोंच दई वह चिंत करैगो ।
पाऊँ पसार परयो कि न सोवत, पेट दियो वह पेट भरैगो ॥
जीव जिते जलके थलके पुनि, पाहनमें पहुँचाय धरैगो ।
भूखहि भूख पुकारत है नर, सुंदर तू कह भूख मरैगो ॥१॥
धीरज धारि विचार निरंतर, तोहि रच्यो वहि आपहि ऐहै ।
जेतिक भूख लगी घट प्राणहि, तेतिक तू अनयासहिं पैहै ॥
जो मन में तृषणा करि धावत, तौ तिहुँ लोक न खात अघै है ।
सुंदर तू मत शोच करै कछु, चोंच दई वह चून हि देहै ।

---

१ सिद्ध—साधना करनेवाला ।

नेक न धीरज धारत हैं नर, आतुर होइ दशों दिश धावै ।
ज्यूं पशु खैंचि तुरावत बंधन, जौंलगि नीर अहार न आवै ।।
जानत नाहिं महामति मूरख, जा घर द्वार धनी पहुँचावै ।
सुंदर आप कियो घट [1]भाजन, सो भरि है मत शोच उपावै ।।३।।
भोजन आप घड़े जितने, भरिहैं भरिहैं भरिहैं भरिहैं जू ।
गावत हैं जिनके गुणजूं, ढरिहै ढरिहैं ढरिहैं ढरिहैं जू ।।
आदिहु अंतहु मध्य सदा, हरिहैं हरिहैं हरिहैं हरिहैं जू ।
सुंदरदास सहाय सही, करिहैं, करिहैं करिहैं करिहैं जू ।।४।।
काहिकुँ दौरत है दशहूँ दिशि, तू नर देख कियो हरिजूको ।
बैठि रहै दुरिके मुख मूँदि, उघारत दाँत खवाइहि टूको ।।
गर्भ थके प्रतिपाल करी जिन, होइ रह्यो तबही जड़ मूको ।
सुंदर क्यों बिललात फिरै अब, राख हृदय विसवास प्रभूको ।।५।।
जा दिनते ग्रभवास तज्यो नर, आइ अहार लियो तबहीको ।
खातहि खात भये इतने दिन, जानत नाहिं न भूख कहीको ।।
दौरत ध्यावत पेट दिखावत, तू शठ कीट सदा अनहीको ।
सुंदर क्यों विसवास न राखत, सो प्रभु विश्व भरै सबहीको ।।६।।
खेचर[2] भूचर[3] जे जलके चर, देत अहार चराचर पोषै ।।
वे हरि जो सबको प्रतिपालत, ज्यूं जिहि भाँति तिही विधि तोषै ।
तू अब क्यूं बिसवास न राखत, भूलत है कित धोखहि धोखै ।।
तोहिं तहाँ पहुँचाय रहै प्रभु, सुंदर बैठि रहै कित ओखै ।।७।।

मनहर छन्द

काहेकूं बघुरा[4] भयो, फिरत अज्ञानी नर;
तेरो तो रिजक[5] तेरे, घर बैठे आइ है ।
भावै तू सुमेरु जाइ, भावै जाइ मरुदेश;

---

१ पात्र—बर्तन । २ आकाश के चलनेवाले । ३ पृथ्वी के चलनेवाले । ४ बगला ।
५ भोजन—आहार ।

जितने भाग्य लिख्यो, तितनोहिं पाइ है ।
कूपमाँझ भरि भावै, सागरके तीर भर;
जितनोक भाँडो[१] नीर, तितनो समाइ है ।
ताहितें संतोष करि, सुंदर विश्वास धरि;
जितनो रच्यो है घट, सोइ जु भराइ है ॥८॥
काहेकूं फिरत नर, हीन भयो घर घर;
देखियत तेरो तौ, आहार इक सेर है ।
जाको देह सागरमें, सुन्यो शतयोजनको;[२]
ताहूकूं तौ देत प्रभु, यामें नहिं फेर है ॥
भुख्यो कोउ रहत न, जानिये जगतमाहिं;
कीरी अरु कुंजर, सबनहीकूं दे रहै ।
सुंदर कहत विसवास, क्यूं न राखै शठ;
बेर बेर समुझाय, कह्यो केती बेर है ॥९॥
तेरे तो अधीरज ऊं, आगिलीहि चिंता करै;
आज तो भरचो है पेट, काल कैसी होइ है ।
भूख्योही पुकारे अरु दिन उठि खातो जाइ;
अतिही अज्ञानी जाकीं, मति गई खोइ है ॥
ताकूं नहिं जानै शठ, जाको नाम [३]विश्वंभर;
तहाँ तहाँ परगट, सबनि देत सोई है ।
सुंदर कहत तोहिं, वाको तौ भरोसो नहिं;
एक विश्वास बिन, याही भाँति रोइ है ॥१०॥
देख धौ सकल विश्व, भरत भरनहार;
चूंचके समान चून, सबहीकूं देत है ।
कीट पशु पक्षी अजगर, मच्छ कच्छ पुनि;
उनके न सौदा कोउ, न तौ कछु खेत है ॥

१ बर्तन । २ चारसौ कोश । ३ संसारका भरण पोषण करनेवाला परमेश्वर।

पेटही के काज रात, दिवस भ्रमत शठ;
मैं तो जान्यो नीक करि, तू तो कोउ प्रेत है।
मानुष शरीर पाय, करत है हाय हाय;
सुंदर कहत नर, तेरे शिर रेत है ॥११॥
तू तो भयो बावरो, उतावरो फिरत अति;
प्रभुका विश्वास गहि, काहे न रहतु है।
तेरि जो रिजक है सो, आइ हैं सहजमाहिं;
यूंही चिंता करि करि, देहकूं दहतु है ॥
जिन यह नख शिख, सजिके सँवारचो तोहि;
अपने कियेकी वह, लाजकुं बहतु है।
काहेकूं अज्ञानी कछु, शोच मनमाहिं करै;
भूख्यो तू कदि न रहै, सुंदर कहतु है ॥१२॥
जगतमें आइके, विसारचो है जगतपति;
जगत कियो है सोइ, जगत भरतु है।
तेरे निशि दिन चिंता, औरहि परि है आई;
उद्यम अनेक भाँति, भाँतिके करतु है ॥
इत उत जायके, कमाई करि लाऊँ कछु;
नेकु न अज्ञानी नर, धीरज धरतु है ॥
सुंदर कहत एक, प्रभुके विश्वास बिन;
बातहीकूं वृथा शठ, पचिके मरतु हैं ॥१३॥

इति विश्वासको अंग संपूर्ण।

अथ देह मलिनके गर्वप्रहारको अंग ८.

मनहर छन्द

देह वा मलिन अति, बहुत विकार भरे;
ताहूं माहिं जरा व्याधि,[1] सब दुखराशि है।

---

१ बुढ़ापा रोग से ग्रसित।

कबहुँक पेटपीर, कबहुँक शिरवाय;
कबहुँक आँख कान, मुख में विथासी[1] है ।।
और हूँ अनेक रोग, नख शिख पूरि रहे;
कबहुँक श्वास चलै, कबहुँक खाँसी है ।
ऐसो ये शरीर ताहि, अपनोके मानत है;
सुंदर कहत यामें, कौन सुख वासी है ।।१।।
जा शरीरमाहिं तू, अनेक सुख मानि रह्यो,
ताहि तू विचार यामें, कौन बात भली है ।
मेद मज्जा मांस रग, रगमें रकत भरचो;
पेटहूं पिटारी सीमें, ठौर ठौर मली है ।
हाड़नसूं भरचो मुख, हाड़नके नैन नाक;
हाथ पाऊं सोऊ सब, हाड़नकी नली है ।
सुंदर कहत याहि, देखि जनि भूले कोई;
भीतर भँगार[2] भरी, ऊपर तो कली है ।।२।।

इंदव छन्द

हाडको पिंजर चाम मढचो सब, माहिं भऱ्यो मल मूत्र विकारा ।
थूक रु लार परे मुखते पुनि, व्याधि बहैं सब औरहु द्वारा ।।
मांसकि जीभसु खाय सबै कछु, ताहिते ताहिको कौन विचारा ।
ऐसे शरीर में पैठिके सुन्दर, कैसे जु कीजिय शौच अचारा ।।३।।
थूक रु लार भऱ्यो मुख दीसत, आँखिमें गीडर नाक में सेढो ।
औरहु द्वार मलीन रहे अति, हाड़ रु मांसके भीतर भेढो ।।
ऐसे शरीर में वास कियो तब, एकसे दीसत ब्राह्मण ढेढो ।
सुंदर गर्व कहा इतने पर, काहेकुं तू नर चालत टेढ़ो ।।४।।
जा दिन गर्भसँयोग भयो तब, तो दिन बूंद छिया हुति ताहीं ।
द्वादशमास [3]अधोमुख झूलत, बूड़ि रह्यो पुनि वा रस माहीं ।।

---

१ दर्द । २ खँखार । ३ नीचे को मुख ऊपर को पाँव ।

ता रजबीरज का यह देह सु, तू अब चालत देखत छाहीं ।
सुंदर गर्व गुमान कहा शठ, आपनि[१] आदि विचारत नाहीं ।।५।।

इति देहमलिनके गर्वप्रहारको अंग संपूर्ण ।।८।।

अथ नारीनिन्दाको अंग ९.

मनहर छन्द

कामिनीको तनु मानु, कहिये सघनवन;
वहाँ कोउ जाय सौ तौ, भूलेही परतु है ।
कुंजर है गति कटि, केहरीको भय जामें;
वेणी कालिनागिनी ऊ, फणिकूं धरतु है ।।
कुच हैं पहार जहां, कामचोर बसै तहां;
साधिके कटाक्षबाण, प्राणकूं हरतु है ।
सुंदर कहत एक, और डर जामें अति;
राक्षसी वदन खाँउ खाँउही करतु है ।।१।।
विषहीके भूमिमाहिं, विषके अंकुर भये;
नारी विषबेली बढ़ी, नखशिख देखिये ।
विषहीके जर मूल, विषहीके डार पात;
विषहीके फूल फल, लागे जु विषे[१] खिये ।।
विषके तंतु पसार, उरझाई आँटी मार;
सब नर वृक्ष पर, लपटेही लेखिये ।
सुंदर कहत कोऊ, संत तरु बचि गये;
तिनके तौ कहूं लता[२], लागी नहीं पेखिये ।।२।।
उदरमें नरक, नरक अधद्वारन में;
कुचनमें[३] नरक, नरक भरी छाती है ।
कंठमें नरक गाल, चिबुक[४] नरक बिंवः

---

१ अवश्य करके । २ बेलि । ३ स्तन । ४ ठोडी ।

मुखमें नरक जीभ, लालहु चुचाती है ॥
नाकमें नरक आँख, कानमें नरक बहै;
हाथ पाँव नख शिख, नरक दिखाती है ।
सुंदर कहत नारि, नरकको कुंड यह;
नरकमें जाइ परै, सो नरकपाती है ॥३॥
कामिनीको अंग अति, मलिन महा अशुद्ध;
रोमरोम मलिन, मलिन सब द्वार है ।
हाड़ मांस मज्जा मेद, चामसु लपेटि राखै;
ठौर ठौर रकतके, भरेई भंडार[1] है ॥
मूत्रहू पुरीष आँत, एकमेक मिली रही;
औरही उदरमाहीं, विविध विकार[2] है ।
सुंदर कहत नारी, नख शिख निन्द्यरूप;
ताहि जो सराहै सो तौ, बडोई गँवार है ॥४॥

कुंडलिया छन्द

रसिकप्रिय रसमंजरी, और शृंगारहि जान ।
चतुराई करि बहुत विधि, विषय बनाई आन ॥
विषय बनाई आन, लगत विषयिनकूं[3] प्यारी ।
जागे मदन[4] प्रचंड, सराहै नख शिख नारी ॥
ज्यूं रोगी मिष्टान्न खाइ, रोगहि विस्तारै ।
सुंदर ये गति होई, जोइ रसिकप्रिया धारै ॥५॥
रसिकप्रियाके सुनतही, उपजै बहुत विकार ।
जो यामाही चित्त धरै, वहै होत नर ख्वार ॥
वहै होत नर ख्वार, वार तो कबहुँ न लागै ।
सुनत विषयकी बात, लहर विषहीकी जागै ॥

---

१ खजाना—कोश । २ मल । ३ कामी । ४ कामदेव ।

ज्यूं को ऊँध्यो हुतो, लेइ पुनि सेज बिछाई ।
सुंदर ऐसी जान, सुनत रसिकप्रिया भाई ।।६।।

इति नारीनिंदाको अंग संपूर्ण ।।९।।

अथ दुष्टजनको अंग १०.

मनहर छन्द

अपने न दोष देखे, परके औगुन पेखे;[१]
दुष्टको स्वभाव उठि, निंदाही करतु है ।
जैसे कोई महल, सँभारि राख्यो नीके करि;
[२]कीरी तहाँ जाय, छिद्र ढूंढ़त फिरतु है ।।
भोरहीते सांझ लग, साँझहीते भोर लग;
सुंदर कहत दिन, ऐसेही भरतु है ।
पाँवके तरेकी नहिं, सूझे आग मूरखकूं;
औरकूं कहत तेरे, शिरपै बरतु है ।।१।।

इन्दव छन्द

घात अनेक रहै उर अंतर, दुष्ट कहै मुखसूं अति मीठी ।
लोटत पोटत व्याघ्रहि[३] ज्यूं नित, ताकत है पुनि ताहिकि पीठीं ।।
ऊपरते छिरकै जल आन सु, हेठ[४] लगावत जारि अँगीठी ।
यामहिं कूर[५] कछू मति जानहु, सुंदर आपुनि आँखिते दीठी ।।२।।
आपुन काज सँवारनके हित, औरकुं काज बिगारत जाई ।
आपुन कारज होउ न होउ, बुरो करि औरकुँ डारत भाई ।।
आपहु खोवत औरहु खोवत, खोइ दुनो घर देत बहाई ।
सुंदर देखतही बनिआवत, दुष्ट करै नहिं कौन बुराई ।।३।।
ज्यूं नर पोषत है निज देहहि, अन्न विनाश करै तिहि बारा ।
ज्यूं अहि और मनुष्यहि काटत, वाहि कछू नहिं होत अहारा ।।

---

१ देखे । २ चीटी । ३ बाघ । ४ नीचे । ५ टेढ़ा—झूठा ।

ज्यू पुनि पावक जारि सबै कछु, आपहि नाश भयो निरवारा ।
त्यूं यह सुंदर दुष्ट स्वभावहु, जानि तजो किन तीन प्रकारा ॥४॥
सर्प डसैं सु नहीं कछु तालुक, बीछू लगै सु भली करि मानौ ।
सिंहहु खाय तु नाहिं कछू डर, जो गज मारत तौ नहिं हानौ ॥
आगि जरौ जल बूड़ि मरौ गिरि, जाइ गिरौ कछु भै मत आनौ ।
सुंदर और भले सबही यह, दुर्जनसंग भलो जिन जानो ॥५॥

इति दुष्टजनको अंग संपूर्ण ॥१०॥

अथ मनको अंग ११.

मनहर छन्द

हटकि हटकि मंन, राखत जु छिन छिन;
सटकि सटकि चहुँ, ओर अब जातु है ।
लटकि लटकि, ललचाय लोल[१] बार बार;
गटकि गटकि करि, विष फल खातु है ॥
झटकि झटकि तार, तारत करम हीन;
भटकि भटकि कहूं, नेक न अघातु है ।
पटकि पटकि शिर, सुंदर जु मानि हारि;
फिटकि फिटकि जाइ, सूधो कौन बातु है ॥१॥
पलही में मरिजाय, पलही में जीवतु है;
पलही में परहाथ, देखत बिकानो है ।
पलही में फिरै नवखंडहु, [२]ब्रह्मांड सब;
देख्यो अनदेख्यो सो तौ, याते नहिं छानो है ॥
जातों नहिं जानियत, आवतो न दीसै कछु;
ऐसेही बलाइ अब, तांसु पऱ्यो पानो है ।
सुंदर कहत याकी, गतिहु न लखि परै;

---

१ चोंच । २ जहां तक ब्रह्मा की सृष्टि है ।

मनकी [1]प्रतीत कोउ, करै सो दिवानो[2] है ॥२॥
घेरियै तौ घेरचोहु न, आवत है मेरो पूत;
जोई परबोधिये सो, कान न धरतु है ।
नीति न अनीति देखै, शुभ न अशुभ पेखै;
पलही में होती अनहोती हू करतु है ॥
गुरुकी न साधुकी न, लोकवेदहुकी शंक;
काहूकी न मानै न तौ, काहूते डरतु है ।
सुंदर कहत ताहि, धीजियसु[3] कौन भांति;
मनको स्वभाव कछु; कह्यो न परतु है ॥३॥
काम[4] जब जागै तब, गिनत न कोउ शंक;[5]
जानै सब सोई करि, देखते न माधी[6] है ।
क्रोध जब जागै तब, नेकु न सँभारि सकै;
ऐसी विधि मूलकी, अविद्या[7] जिन साधी है ।
लोभ जब जागै तब, तृपति न क्यूंही होई;
सुंदर कहत इन, ऐसे ही में खाधी है ।
मोह मतवारो निशि, दिनही फिरत रहै;
मनसों न कहूं हम, देख्यो अपराधी है ॥४॥
देखिबेकूं दौरे तो, अटकि जाइ वाही ओर;
सुनिबेकूं दौरे तौ, रसिक शिरताज है ।
सूंधिबेकूं दौरे तौ, अघाय न सुंगध करि;
खायिबेकुं दौरे तौ, न धापै महाराज है ॥
भोगहीकुं दौरे तौ, तृपत नहीं होइ क्यूंही;
सुंदर कहत याही, नेकही न लाज है ।
काहुको न कह्यो करै, आपनोही टेक धरै;
मनसों न कोउ हम, देख्यो दगाबाज है ॥५॥

---

१ विश्वास। २ पागल। ३ विश्वास करना। ४ मदन। ५ डर। ६ लड़की। ७ मूर्खता।

देखै न कुठौर ठौर, कहत औरकी और;
लीन जाइ होत हाड मांस और रकतमें ।
करत बुराई सर, औसर न जानै कछु;
पक्का आइ देत राम, नामसूं लगतमें ।।
बहाये सुरासुर, बहाये सब भेषीजन;
सुंदर कहत दिन, घालत भगतमें ।
औरहु अनेक, अंतराईही करत रहै;
मनसो न कोउ है, अधम[1] या जगतमें ।।६।।
जिन ठगे शंकर, विधाता[2] इन्द्र देव मानि;
अपनोहू अधिपति,[3] ठग्यो जिन चन्द्र है ।
और योगी जंगम, संन्यासी शेख कोन गिनै;
सबनिसूं ठगत, ठगावै न सुछन्द[4] है ।।
तपेश्वर ऋषीश्वर, सब पचि पचि[5] गये;
काहूके न आवे हाथ, ऐसो या पैबन्द है ।
सुंदर कहत वश, कौन विधि कीजै ताहि;
मनसों न कोऊ या, जगतमाहि रंद है ।।७।।
रंककूं नचावै अभिलाष, धन पायिबेकी;
निशिदिन शोच करि, ऐसे ही पचत है ।
राजाही नचावै सब, भूमिहीको राज लेवे;
औरहू नचावै जोई, देहसूं रचत है ।।
देवता असुर सिद्ध, पन्नग[6] सकललोक;
कीट पशु पक्षी कहु, कैसेके बचत है ।
सुंदर कहत काहू, संतकी कही न जाय;
मनके नचाय सब, जगत नचत है ।।८।।

---

१ नीच । २ ब्रह्मा । ३ मालिक । ४ स्वतंत्र । ५ यत्न कर कर हार । ६ नाग ।

इन्दव छन्द

केतक द्योस[1] समुझावत, नेक न मानत हे मन भोड़ू[2] ।
फूलि रह्यो विषयासुखमें कछु, और न जानत है शठ दोंडू ।।
आँखि न कान न नाक विना शिर, हाथ न पाँव नहीं मुख पोंडू ।
सुंदर ताहि गहै कहु क्यूँकरि, नीकसि जाइ बड़ो मन लोंडू ।।९।।
दौरत है दशहू दिशकूं शठ, वायु लग्यो तबते भयो बेंडा ।
लाज न कान कछू नहिं राखत, शीत स्वभावकी फोरत भेंड़ा ।
सुंदर सीख कहा कहि दीजिय, भेदत बाण न छेदत गेंड़ा ।
लालच लागि रह्यो मन बीखर,बारह बाट अठारहें पेंडा।।१०।।
श्वान[3] कहूं कि सियार कहूं कि, बिलाड़ कहूं मनकी मति तैसी ।।
ढेढ कहूं किधौं डूम कहूं किधौं, भांड़ कहूं किधौं भण्डइ जैसी ।
चोर कहूं बटपार कहूं ठग, जार कहूं उपमा कहूं कैसी ।।
सुंदर और कहा कहिये अब, या मनकी गति दीसत ऐसी ।।११।।
के बेर तू मन रंक भयो शठ, माँगत भीक दशो दिश डूल्यो ।
के बेर तू मन छत्र धरचो शिर, कामिनी[4] संग हिंडोरन झूल्यो ।।
कै बेर तू मन छीत भयो अति, कै बेर तू सुख पायके फूल्यो ।।
सुंदरकै बेर तोहिं कह्यो मन,कौन गली किहि मारग भूल्यो।।१२।।
इंद्रिनके सुख चाहत है मन, लालच लागि भ्रमैं शठ यूंही ।
देखि मरीचि[5] भरचो जल पूरण, धावत है मृग मूरख ज्यूंही ।।
प्रेत पिशाच निशाचर डोलत, भूख मरै नहिं धावत क्यूंही ।
वायु बघूराहि कौन गहै कर, सुंदर दौरत है मन त्यूंही ।।१३।।
ह्वै सबको शिरताज ततक्षण, जो अभिअंतर ज्ञान विचारै ।
जो कछु और विषय सुख बंछत, तौ यह देह अमोलक हारै ।।
छांडि कुबुद्धि भजै भगवंतहि, आपु तरै पुनि औरहि तारै ।
सुंदर तोहि कह्यो कितनी बिर,तू मन क्यूं नहिं आप संभारै।।१४।

---

१ दिन । २ मूर्ख । ३ कुत्ता । ४ औरत । ५ किरण ।

कौन स्वभाव पर्‍यो उठि दौरत, अमृत छांडि चचोरत हांड़े ।
ज्यूं भ्रमकी हथनी दृग देखत, आतुर होइ परै गज खांड़े ।।
नाद वृया भटकै निशिवासर, एकहु सीख लगी नहिं रांड़े ।
सुंदर तोहि सदा समुझावत, रे मन तू भ्रम वो किन छांड़े ।।१५।।
जो मन नारिकि ओर निहारत, तौ मन होतहि ताहि कुरूपा ।
जो मन काहुसुं क्रोध करै पुनि, तौ मन है तबही तदरूपा[1] ।।
जो मन मायहि माय रटै नित, तौ मन बूड़त मायके कूपा ।
सुंदर जो मन ब्रह्म विचारत, तौ मन होतहि ब्रह्मस्वरूपा ।।१६।।

मनहर छन्द

कबहुँक हँसि ऊठे, कबहुँक रोइ देत;
कबहुँ बकत कहु, अंतहू न लहिये ।
कबहुँक खाइ औ, अघात नहिं काहूकरि;
कबहुँक कहे मेर, कछु नाहिं चाहिये ।।
कबहुँ आकाश जाइ, कबहुँ पाताल जाइ,
सुंदर कहत ताहि, कैसे करि गहिये ।।
कबहुँक आये लगे, कबहुँक उठि भगै;
भूतकसे चिह्न कर, ऐसो मन कहिये ।।१७।।
कबहुँ तौ पांखको, परेवाके दिखावै मन;
कबहुँक धूरके, चावर करि लेत है ।
कबहुँ तो गुटिका, उछारत आकाश ओर;
कबहुँ तो राते पीरे, रंग श्याम श्वेत[2] है ।।
कबहुँ नौ आंबकूं, उगाई करि ठाढ़ो करै;
कबहुँ तो शीशधर, जुदे करि देत है ।
बाजीगर ख्याल ऐसो, सुंदर कहत मन,
सदाहि भ्रमत रहै, ऐसी कोऊ प्रेत है ।।१८।।

---

१ सदृश । २ सफेद ।

कबहुँक साधु होत, कबहुँक चोर होत;
कबहुँक राजा होत, कबहुँक रंक सो ।
कबहुँक दीन होत, कबहुँ गुमानी होत;
कबहुँक सूधो होत, कबहुँक बंक[१] सो ।।
कबहुँक कामी होत, कबहुँक यती होत;
कबहुँक निर्मल होत, कबहुँक पंक सो ।
मनको स्वरूप ऐसो, सुंदर फटिक जैसो;
कबहुँक शूर होत, कबहूँ मयंक[२] सो ।।१९।।
हाथीकीसो कान किधौं, पीपर को पात किधौं,
ध्वजाको उड़ान कहूं, थिर न रहतु है ।
पानीकोसो घेर किधौं, पौन उरझेर किधौं;
चक्रकोसो फेर कोउ, कैसेके गहतु है ।।
रहटकी माल किधौं, चरखाको ख्याल किधौं;
फेरी खात बाल कछु, सुधि न लहतु है ।
धूमके सो धाव ताकूं, राखिबेको चाव ऐसो;
मनको स्वभाव सो तौ, सुंदर कहतु है ।।२०।।
सुख मानौ दुख मानौ, सम्पति विपति मानै;
हर्ष मानै शोक मानै, मानै रंक धन है ।
घटि मानै बढ़ि मानै, शुभहू अशुभ मानै;
लाभ मानै हानि मानै, याहीते कृपण[३] है ।।
पाप मानै पुण्य मानै, उत्तम मध्यम मानै;
नीच मानै ऊंच मानै, मानै मेरो तन है ।
स्वर्ग मानै नर्क मानै, बन्ध मानै मोक्ष मानै;
सुंदर सकल मानै, ताते नाम मन है ।।२१।।
जोई जोई देखै कछु, सोई सोई मन आहि;

१ टेढ़ा । २ चन्द्रमा । ३ सूम ।

जोई जोई सुनै सोई, मनहीको धर्म है ।
जोई जोई सूँघे जोई, खाव जो स्पर्श[1] होई;
जोई जोई करै सोई, मनही को कर्म है ।।
जोई जोई [2]गहै जोई, त्यागे जोई अनुरागे;[3]
जहाँ जहाँ जाई सोई, मनही को [4]शर्म है ।
जोई जोई कहै सोई, सकल सुंदर मन;
जोई जोई [5]कल्पै सोई, मनही को धर्म है ।।२२।।
एकही विटप[6] विश्व, ज्यूंको त्यूंही देखियत;
अतिही सघन ताके, पत्र फल फूल हैं ।
आगले झरत पात, नये नये होत जात;
ऐसे याही तरुको, अनादी[7] काल मूल है ।।
दश चार लोक लौं, पसारि रह्यो जहाँ तहाँ;
अध रु उरध पुनि, सूक्ष्म[8] रु स्थूल[9] है ।
कोउ तो कहत सत, कोऊ तो कहै असत;[10]
सुंदर कहत भ्रमही को, मन मूल है ।।२३।।
तोसौं न कुपूत कोऊ, कितहू न देखियत;
तोसौं न सुपूत कोऊ, देखियत और है ।
तूही आप भूलै महा, नीचहूते नीच होई;
तूही आप जान तौ, सकलशिरमौर है ।।
तूही आप भ्रमै तब, जगत भ्रमत देखे;
तेरे स्थित भये सब, ठौरही को ठौर है ।।
तूही जीवरूप तूही, ब्रह्म है आकाशवत;
सुंदर कहत मन, तेरी सब दौर है ।।२४।।
मनहीके भ्रमते, जगह यह पेखियत;
मनही को भ्रम गये, जगत बिलात है ।

---

१ छूना । २ धारण । ३ प्रेम करना । ४ परिश्रम । ५ कल्पना—फर्ज । ६ वृक्ष । ७ पुरातन । ८ बारीक । ९ मोटा । १० झूठा ।

मनही को भ्रम, जेवरीमें उपजत सांप;
मनके विचारे सांप, जेवरी समात है ।।
मनही के भ्रमते, मरीचिकाकुं[१] जल कहे;
मनही के भ्रम [२]सीप, रूपोसो दिखात है ।
सुंदर सफल यह, दीसे मनही को भ्रम;
मनही को भ्रम गये, ब्रह्म होय जात है ।।२५।।
मनही जगतरूप, होई करि विस्तरचो;
मनही अलखरूप,[३] जगतसूं न्यारो[४] है ।।
मनही सकल घट, व्यापक अखंड एक;
मनही सकल यह, जगत पियारो है ।
मनही आकाशवत,[५] हाथ न परत कछु;
मनके न रूप रेख, वृद्धिहीनवारो[६] है ।
सुंदर कहत परमारथ, विचारै जब;
मन मिटि जाइ एक, ब्रह्म जिन सारो है ।।२६।।

इति मनको अग संपूर्ण ।।११।।

अथ चाणकको अंग १२.

मनहर छन्द

जोई जोई छूटिबेको, करत उपाय अज्ञ;[७]
सोई सोई दृढकरि, बंधन परतु है ।
योग यज्ञ जप तप, तीरथ व्रतादि और;
जंपापात लेत जाइ, हिमाले गरतु है ।।
कानहु फराई पुनि, केशहु लुंचाइ अङ्ग;
बिभूति लगाई फिर, जटाहु धरतु है ।

---

१ सूर्यरश्मि । २ सितूहा । ३ अदृश्य । ४ अलग । ५ शून्यवत् । ६ घटना—बढ़ना । ७ मूर्ख ।

विन ज्ञान पाय नहीं, छूटत हृदयग्रंथी;
सुंदर कहत यूंहि, भ्रमिके मरतु है ।।१।।

सर्व लघु अक्षर ।

जप तप करत धरत व्रत जत सत, मन वच क्रम भ्रम कपट सहत तन ।
वलकल वसन[1] अशन[2] फल पत्र जल, कसत रसन[3] रस तजत वसत वन ।।
जरत मरत नर गरत परत सर, कहत लहत हय[4] गज[5] दल[6] बल घन ।
पचत पचत भव भय न टरत शठ, घट घट प्रगट रहत न लखत जन ।।२।।

मनहर छन्द

योग करै यज्ञ करै, वेद विधि त्याग करै;
जप करै तप करे, यूंहि आयु[7] [8]खूटि है ।
यम करै नेम करै, तीरथहु व्रत करै,
पुहुमी[9] अटन[10] करै, वृथा श्वास टूटि है ।।
जीवेको यतन[11] करै, मनमें वासना धरै;
पचि पचि यूंहि मरै, काल शिर खूटि है ।
औरहू अनेक विधि, कोटिक उपाय करै;
सुंदर कहत बिन, ज्ञान नहीं छूटि है ।।३।।
बुद्धिकारि हीन नर, [12]रज तम छाय रह्यो;
वन वन फिरत, उदास होइ घरते ।
कठिन तपस्या धरि, मेघ शीत घाम सहै;
कंद मूल खाइ कोउ, कामनाके डरते ।।
अतिहि अज्ञान उर, विविध उपाय करै;
निजरूप भूलिके, बंधन जाइ परते ।
सुंदर कहत औंधी, और कैसे दीखै मुख;

---

१ वस्त्र । २ भोजन । ३ जीभ । ४ घोड़ा । ५ हाथी । ६ सेना । ७ उम्र । ८ खत्म होना । ९ पृथ्वी । १० घूमना । ११ उपाय । १२ रजोगुण, तमोगुण ।

हाथमाहिं आरसी[१] न, फेरै मूढ़[२] करते ।।२।।
मेघ सहै शीत सहै, शीशपर घाम सहै;
[३]कठिन तपस्या करि, कंद मूल खात है ।
योग करै यज्ञ करै, तीरथ रु व्रत करै;
पुण्य नानाविधि करै, मनमें सुहात है ।।
और देवी देवता, उपासना अनेक करै;
आँबनकी होंस कैसे, आक डोडे जात है ।
सुंदर कहत एक, [४]रविके प्रकाश बिनु;
जेंगनाकी[५] ज्योति कहाँ, [६]रजनी बिलात है ।।५।।
कोई फिरै नाँगे पायँ, गुदरी बतायकरि;
देहकी दशा दिखाइ, आइ लोक घूटचो है ।
कोई दूधाहारी होई, कोई फलाहारी होई;
कोई अधोमुख[७] झूलै, झूलि धूम[८] घूटचो है ।
कोई नहीं खाए लौण[९], कोई मुख गहै मौन; [१०]
सुंदर कहत यूंहि, वृथा भूस कूटचो है ।
प्रभुसूं तौ प्रीति नाहिं, ज्ञानसूं परिचै नाहिं;
देखो भाई आँधरेने, ज्यूं बजार लूटचो है ।।६।।

इन्दव छन्द

आसन मारि सँवारि जटा नख, उज्वल अंग बिभूति चढ़ाई ।
या हमकूं कछु देहि दया करि, घेरि रहै बहु लोग लुगाई ।।
कोउक उत्तम भोजन ल्यावत, कोउक ल्यावत पान मिठाई ।
सुंदर लेकरि जात भयो सब, मूरख लोकनि या विधि पाई ।।७।।
ऊरध[११] पाय अधोमुख ह्वै करि, घूटत धूमहि देह झुलावै ।
मेघहु शीतहु घाम सहै शिर, तीनहु काल महादुख पावै ।।

---

१ आईना । २ मूर्ख । ३ कठोर । ४ सूर्य । ५ जुगुनु । ६ रात । ७ शिर नीचे करना ।
८ धूंवा । ९ नमक । १० मुख से कुछ न बोलना । ११ ऊपर ।

हाथ कछू न परै कबहूं कण, मूरख कूकस[1] कूटि उड़ावै ।
सुंदर बंछि विषै सुखकूं घर, बूड़त है अरु झाँझ[2] ले गावै ।।८।।
गेह[3] तज्यो पुनि नेह[4] तज्यो पुनि, खेह[5] लगाइ जु देह सँवारी ।
मेघ सहै शिर शीत सहै तन, धूप सहै जु पँचागिनि बारी ।।
भूख सहै रहि रूख तरै पर, सुंदरदास सहै दुखभारी ।
डासन छाँड़ि जु कासन ऊपर, आसन मारि पै आश न मारी ।।९।।
जो कोउ कष्ट करै बहु भाँतिनि, जात अज्ञान नहीं मन केरो ।
ज्यूं तम[6] पूरि रह्यो घर भीतर, कैसेहु दूर न होय अँधेरो ।।
लाठिनि मारिय ठेलि निकारिय, और उपाय करे बहुतेरो ।
सुंदर शूल प्रकाश भयो तब, तो कितहू नहीं देखिय नेरो ।।१०।।
धार बह्यो बड़ धारि रह्यो जल, धार सह्यो गिरि[7] धार गऱ्यो है ।
भार सँच्यो धन भारतमें कर, भार लह्यो शिर भार पऱ्यो है ।।
भार तप्यो वहि मार गयो यम; मार दई मन तो न मऱ्यो है ।
सार तज्यो षटसार पऱ्यो कहि, सुंदर कारज कौन सऱ्यो है ।।११।।
कोउ भया पय पान करै नित, कोउक खातहि अन्न अलौना ।
कोउक कष्ट करै निशिवासर, कोउक बैठि जु साधत पौना ।।
कोउक वाद विवाद करै अति, कोउक धारि रहै सुख मौना ।
सुंदर एक अज्ञान गये बिन, सिद्ध भये नहिं दीसत कौना ।।१२।।

सवैया छन्द

कोउक अंग विभूति लगावत, कोउक होत निराट दिगंबर[8] ।
कोउक सेन कषायक ओढ़त, कोउक हाथ रँगै बहु अंबर[9] ।।
कोउक [10]वल्कल शीश जटा नख, कोउक ओढ़त है जु बघंबर ।
सुंदर एक अज्ञान गये बिनु, ए सब दीसत आहि अडंबर[11] ।।१३।।

इन्दव छन्द

कोउक जात प्रयाग बनारस, कोउ गया जगनाथहि धावै ।

---

१ भूसी । २ एक बाजे का नाम । ३ घर । ४ स्नेह । ५ भस्म । ६ अंधकार । ७ पहाड़ । ८ नग्न । ९ वस्त्र । १० भोजपत्र । ११ पाखंड ।

कोउ मथुरा बदरी हरिद्वार सु, कोउ गंगा कुरुक्षेत्र नहावै ॥
कोउक पुष्कर ह्वै पंचतीरथ, दौरिहि दौरि जु द्वारका आवै ।
सुंदर वित्त[1] गडचो घरमाहिं सु,बाहिर ढूँढत क्यूंकरि पावै।। १४।।
आगे कछू नहिं हाथ पऱ्यो पुनि पीछे बहारि गयो निज भौना ।
ज्यूं कोइ कामिनि कंतहि मारि,चली सँग औरहि देखि सलौना[2]।।
सोउ गयो तजिके ततकाल, कहे न बनै जु रही मुख मौना ।
तैसेहि सुंदर ज्ञान बिना घर, छाड़ि भये नर भाँड़के दौना ।। १५।।
ज्यूं कोउ कोश कटचो नहिं मारग, तेलकले घर में पशु जोए ।
ज्यूं बनियाँ गयु बीसके तीसकुँ, बीसहु में दशहू नहिं होए ।।
ज्यूं कोउ चौबा छबेकूं चल्यो पुनि, होई दुबे दुई गाँठके खोए ।
तैसेही सुंदर और क्रिया सब, राम बिना निहचै नर रोए ।। १६।।
ज्यूं कोउ राम बिना नर मूरख, औरनिके गुण जीभ भनैगी ।
आन क्रिया गढके गढवा पुनि, होतहि बेर कछू न बनैगी ।।
ज्यूं हथ फेरि दिखावत चामर, अन्त तु धूरिकि धूरि छिनैगी ।
सुंदर भूल भई अतिशै करि, सूतेकि भैंस पाँडाहि [3]जनैगी ।। १७।।
होई उदास बिचार बिना नर, गेह तज्वो वन जाइ रह्यो है ।
अंबर छाँड़ि बघंबर लेकरि, के तपको तन कष्ट सह्यो है ।
आसन मारि सु आसन ह्वै मुख, मौन गही मन तो न गह्यो है ।।
सुंदर कौन कुबुद्धि लगी कहि,या भवसागर माहिं बह्यो है।। १८।।
भेष धऱ्यो परि भेद न जानत, भेद लहै बिन खेदहि[4] पैहैं ।
भूखहि मारत नींद निवारत, अन्न तजै फल पत्र[5] न खैहैं ।।
और उपाय अनेक करै पुनि, ता हित हाथ कछू नहिं ऐहैं ।
या नरदेह वृथा शठ खोवत, सुंदर राम बिना पछतै हैं ।। १९।।
आपन आपन थान सुकाम, सराहनकूं सब भाँति भली है ।
यज्ञ व्रतादिक तीरथ दान, पुरान कथा जु अनेक चली है ।।

---

१ धन । २ नमकीन । ३ जन्म देगी । ४ क्लेश । ५ पात ।

कोटिक और उपाय जहाँ लगि, ते सुनिके नरबुद्धि छली है ।
सुंदर ज्ञान बिना न कहूँ सुख, भूलनकी बहुभाँति गली है ॥२०॥
कोउक चाहत पुत्र धनादिक, कोउक चाहत बाँझ जनायो ।
कोउक चाहत धातु रसादिक, कोउक चाहत पार दिखायो ॥
कोउक चाहत यंत्रनि मंत्रनि, कोउक चाहत रोग गमायो ।
सुंदर राम बिना सबही भ्रम[1], देखहु या जग यूं डहँकायो ॥२१॥
काहेकुं तूं नर भेष बनावत, काहेकुं तूं दशहू दिशि डूलै ।
काहेकुं तूं तनु कष्ट करै अति, काहेकुं तूं मुखते कहि फूलै ॥
काहेकुं और उपाय करै अब, आन क्रिया[2] करके मत भूलै ।
सुंदर एक भजै भगवंतहि, तौ सुखसागरमें नित झूलै ॥२२॥

इति चाणक को अंग संपूर्ण ॥१२॥

अथ विपरीतज्ञानको अंग १३.

मनहर छन्द

एक ब्रह्म मुखसूं, बनायकरि कहत है;
अंतःकरण[3] तौ, विकारनसूं भरचो है ।
जैसे ठग[4] गोबरको कूपो भरि राखत है;
सेर पंच घृत[5] लेके, ऊपर ज्यूं करचो है ॥
जैसे कोई भांडमाहिं, प्याजकूं छिपाय राखै;
चीथरा कपूरको ले, मुख बाँधि धरचो है ।
सुंदर कहत ऐसे, ज्ञानी है जगत माहिं;
तिनकूं तो देखि करि, मेरो मन डरचो है ॥१॥
देहसूं ममत्व[6] पुनि, गेहसूं ममत्व सुत[7];
दारासूं[8] ममत्व मन, मायामें रहतु है ।

---

१ संदेह । २ कार्य । ३ हृदय । ४ धूर्त । ५ घी । ६ ममता । ७ लड़का । ८ स्त्री ।

थिरता न लहै जैसे, कंदुक[1] चौगानमाहिं;[2]
कर्मनिके वश मारचो, धकाकूं बहुत है ।।
अंतहकरण सदा, जगतसूं रँचि रह्यो;
मुखसूं बनाय बात, ब्रह्मकी कहतु है ।
सुंदर अधिक मोहिं, याहिते अंचभो आहि;
भूमिहर परचो कोउ, चन्दकूं गहतु है ।।२।।
मुखसूं कहत ज्ञान, भ्रमैं मन इंद्रि प्रान;
मारगके जलमें न, प्रतिबिंब[3] लहिये ।
गाँठमें न पैसा कोउ, भयो-रहै साहुकार;
वाणिनमें मुहर, रुपैया गिनि लहिये ।।
स्वपने में पंचामृत, जीमके तृपत भयो;
जागेते मरत भूख, खायिबेकूं चहिये ।
सुंदर सुभट[4] जैसे, कायर[5] मारतगाल;[6]
राजा भोज सम कहा, गंगूतेली कहिये ।।३।।
संसारके सुखनिसूं, आसक्त अनेकविधि;
इंद्रिहु लोलुप मन, कबहूँ न गह्यो है ।
कहत है ऐसे मैं तो, एक ब्रह्म जानत हूँ;
ताहिते छोड़िकै शुभ, कर्मनते रह्यो है ।।
ब्रह्मकी न प्राप्ति पुनि, कर्म सब छूटि गये;
दोउनते भ्रष्ट[7] होई, अघबिच[8] बह्यो है ।
सुंदर कहत ताहि, त्यागिये श्वपच[9] जैसे;
याही भाँति ग्रन्थमें, वसिष्ठजीहूं कह्यो है ।।४।।
ज्ञानीकीसी बात कहैं, मन तौ मलिन रहै;
वासना[10] अनेक भरि, नेकु न निवारी है ।

१ गेंद । २ मैदान । ३ छाया । ४ बहादुर । ५ डरपोक । ६ लबार—चुगलखोर । ७ नष्ट । ८ नरक लहर । ९ डोम । १० कामना ।

जैसे कोउ आभूषण,[1] अधिक बनाइ राखे;
कलई ऊपर करि, भीतर भँगारी है ।।
ज्यूंही मन आवै त्यूंही, खेलत निशंक[2] होइ;
ज्ञान सुनि सीखि लियो, ग्रंथ न बिचारी है ।
सुंदर कहत वाके, अटक न कोऊ आहि;
जोई वासूं मिलै जाइ, ताहीकूं बिगारी है ।।५।।
हंस श्वेत बक[3] श्वेत, देखिये समान दोउ;
हंस मोती चुगै बक, मछरीकूं खात है ।
पिक अरु काक दोऊ, कैसे करि जाने जाइ;
पिक[4] अंबडारी काक,[5] करकहि जात है ।।
सैंधौ अरु फटिक[6] पषाणसम[7] देखियत;
वह तो कठोर वह, जलमें समात है ।
सुंदर कहत ज्ञानी, बाहिर भीतर शुद्ध;
ताकी पटत और, बातनिकी बात है ।।६।।

इति विपरीतज्ञानका अङ्ग संपूर्ण १३.

अथ वचनविवेकको अङ्ग १४.

मनहर छन्द

जाके घर ताजी, तुरकिन को तवेलो बाँध्यो;
ताके आगे फेरि, टटुवा दिखाइये ।
जाके खासा मलमल, साफनके[8] ढेर परे;
ताके आगे आनि करि, चौसई रखाइये ।।
जाके पंचामृत खात, खात सब दिन बीते;
सुंदर कहत ताहि, राबरी चखाइये ।

---

१ गहना । २ निडर । ३ बगुला । ४ कोयल । ५ कौवा । ६ स्फटिकमणि । ७ उपमा । ८ टसर ।

चातुर प्रवीण आगे, मूरख उचार करै;
सूरजके आगे जैसे, जुगुनु[१] लखाइये ।।१।।
एक वाणी रूपवंत, भूषण वसन अंग;
अधिक विराजमान, कहियत ऐसी है ।
एक वाणी फाटे टूटे, अंबर उढ़ाय आनि;
ताहिं माहिं विपरीत,[२] सुनियत जैसी है ।।
एक वाणी मृतकसी,[३] बहुत श्रृंगार किये;
लोकनिकूं नीकि लगै, संतनकूं भयसी[४] है ।
सुंदर कहत वाणी, विविध जगत माहिं;
जाने कोई चतुर, प्रवीण जाकी जैसी है ।।२।।
राजाको कुँवर जो, स्वरूप कै कुरूप होई;
ताकूं तौ सलाम करि, गोद[५] ले खेलाइये ।
और कोउ रैयतको स्वरूप होइ शोभन[६] कि;
ताहकूं तो देखि करि, निकट बुलाइये ।।
काहूको कुरूप कारो, कूबरो ह्वै अंगहीन;
वाकी ओर देखि देखि, माथोही हलाइये ।
सुंदर कहत वाकै, बापहीको प्यारो होइ;
यूंहि जानि वाणीको, विवेक[७] ऐसे पाइये ।।३।।
बोलिये तौ तब जब, बोलिबेकी शुधि होइ;
न तौ मुख मौन गहि, चुप होइ रहिये ।।
जोरिये तौ तब जब, जोरिबेकी जानि परै;
तुक छन्द अरध, अनूप जामें लहिये ।।
गाइये तौ तब जब, गायिबेको कंठ होइ;
श्रवणके सुनतही, मन जाइ गहिये ।
तुक भंग छन्द भंग, अरथ न मिले कछु;

---

१ खद्योत । २ उलटा । ३ मुर्दा । ४ डर । ५ अंक । ६ सुहावना । ७ ज्ञान ।

सुंदर कहत ऐसी, वाणी नहीं कहिये ॥४॥
एकनिके वचन सुनत, अतिसुख होइ;
फूलसे झरत हैं, अधिक मनभावने ।
एकनिके वचन तौ, [1]असि मानौ बरषत;
श्रवणके सुनत, लगत अलखावने ॥
एकनिके वचन, कटुक[2] कटु विषरूप;
करत मरम छेद, दुःख उपजावने ।
सुंदर कहत घट, घटमें वचन भेद;
उत्तम मध्यम अरु, अधम सुहावने ॥५॥
काक अरु रासभ,[3] उलूक[4] जब बोलत हैं;
तिनके तौ वचन, सुहात कहु कौनकूं ।
कोकिला रु सारी पुनि, सूवा जब बोलत हैं;
सब कोउ कान दे, सुनत रव रौनकूं ॥
ताहिते सुवचन, विवेककरि बोलिये जू;
यूंहि आकवाक बकि, तोरिये न पौनकूं ।
सुंदर समुझि ऐसे, वचन उचार करौ;
नहिं तौ समुझिकरि, बैठो गहि मौनकूं ॥६॥
प्रथम हिये विचार, ढीमसो न दीजै डार;
ताहिते सुवचन, सँभारि करि बोलिये ।
जानै न कुहेत हेत, भावै तेसी कही देत;
कहिये सु तब जब, मनमाहि तोलिये ॥
सबहीकूं लागै दुःख, कोऊ नहिं पावै सुख;
बोलिये वृथाही ताते, छाती नहिं छोलिये ।
सुंदर समुझिकरि, कहिये सरस[5] बात;
तबहीं तौ वदन कपाट[6] गहि खोलिये ॥७॥

---

१ तलवार । २ तिक्त । ३ गर्दभ । ४ घूघू । ५ रसीली—श्रेष्ठ । ६ किंवाड़ ।

और तौ वचन ऐसे बोलत हैं पशु जैसे;
तिनके तौ बोलिबेमें, ढंगहूं न एक है ।
कोउ रात दिवस, बकतही रहत ऐसे;
जैसी विधि कूपमें, बकत मानो भेक[१] है ।।
विविध प्रकार करि, बोलत जगत सब;
घट घट प्रतिमुख, वचन अनेक हैं ।
सुंदर कहत ताते, वचन विचारि लेहु;
वचन तो वहै जामें, पाइये विवेक है ।।८।।
जैसे हंस नीरकूं,[२] तजत है असार[३] जानि;
सार जानि क्षीरकुं,[४] निरालो करि पीजिये ।
जैसे दधि मथत मथत, काढ़ि लेत घृत;
और रही वही सब, छाँछ छाँड़ि दीजिये ।।
जैसे मधुमक्षिका, सुवासकूं भ्रमर[५] लेत;
तैसेही विचार करि, भिन्न भिन्न कीजिये ।
सुंदर कहत ताते, वचन अनेक भाँति;
वचनमें वचन, विवेक करि लीजिये ।।९।।
प्रथमही गुरुदेव, मुखते उचार करचो;
वेई तौ वचन आय, लगे निज हिये हैं ।
तिनको विवेक करि, अंतहकरण माहिं;
अतिहि अमोल नग, भिन्न भिन्न किये हैं ।।
आपको दरिद्रं गयो, पर उपकार हेत;
नगही निगलिके, उगलि नग लिये हैं ।
सुंदर कहत यह, वाणी यूं प्रगट भई;
और कोई सुनि करि, रंक जीव जिये हैं ।।१०।।
वचनते दूर मिलै, वचन विरोध[६] होइ;

---

१ मेंढक । २ पानी । ३ नीरस । ४ दूध । ५ भँवरा । ६ लड़ाई ।

वचनते राग बढै; वचनते दोष जू ।
वचनते ज्वाला[1] उठै, वचन शीतल होइ;
वचनते मुदित,[2] वचनहीते रोष जू ।।
वचनते प्यारौ लगै, वचनते दूर भगै;
वचनते मरिजाय, वचनते पोष जू ।
सुंदर कहत यह, वचनको भेद ऐसो;
वचनते बंध होत, वचनते मोक्ष जू ।।११।।
वचनते गुरु शिष्य, बाप पूत प्यारो होइ;
वचनते बहुविधि, होत उतपात है ।
वचनते नारि अरु, पुरुष सनेही अति;
वचनते दोऊ आप, आपमें रिसात हैं ।।
वचनते सब आइ, राजाके हुजूर होइ;
वचनते चाकरहू, छोड़िके पलात[3] हैं ।
सुंदर सुवचन, सुनत अतिसुख होइ;
कुवचन सुनतहि, प्रीति घटि जात है ।।१२।।
एक तो वचन सुनि, कर्महिम बहिजाय;
करत बहुतविधि, स्वर्गकी उमेद है ।
एक है वचन दृढ, ईश्वर उपासनाके;[4]
तिनमें तौ सकलही, वासनाको छेद है ।।
एक है वचन तामें, एकही अखंड ब्रह्म;
सुंदर कहत यूं, बतावै अन्त वेद है ।
वचन तौ अनेक, प्रकार सब देखियत;
वचन विवेक किये, वचनमें भेद है ।।१३।।
वचनते योग करै, वचनते यज्ञ करै;
वचनते तप करि, देहकूं दहतु है ।
वचनते बन्धन, करत है अनेक विधि;

---

१ अग्निकी लू । २ प्रसन्न । ३ भागना । ४ भजन—ध्यान ।

वचनते त्याग करि, वचन रहतु है ।
वचनते उरझै रु, सुरझै वचनहूते;
वचनते भाँति भाँति, संकट सहतु है ।
वचनते जीव भयो, वचनते शिव होइ;
सुंदर वचनभेद, वेद यूँ कहतु है ।।१४।।

इति वचन विवेकका अंग संपूर्ण ।।१४।।

अथ निर्गुण उपासनाको अङ्ग १५.

इन्दव छन्द

ब्रह्म कुलाल रचे बहु भाजन, कर्मनिके वश मोहिं न भावै ।
विष्णुहि संकट आय सहै ग्रभ, काहुक रक्षक काहु सतावै ।।
शंकर भूत पिशाचनिको पति, पाणि कपाल[1] लिये बिललावै[2] ।
या हित सुंदर त्रीगुण[3] त्यागि सु,निर्गुण एक निरञ्जन ध्यावै।।१।।

सवैया छन्द

कोटिक बात बनाय कहै कहा, होत भये सबही मन रंजन[4] ।
शास्त्र सुस्मृति[5] रु वेद पुराण, बखानत हैं अति लायके अञ्जन ।।
पानिमें बूड़त पानि गहै कित, पार पहूचत हैं मति भञ्जन[6] ।
सुंदर तहँलगि अंधकि जेवरि,जौ लौं न ध्याइय एक निरञ्जन।।२।।

इन्दव छन्द

व्यञ्जन[7] सो जु मनो मल भञ्जन, सज्जन सो जु कहै गति गूझै ।
गञ्जन सो जु इंद्री गहि गञ्जन, रञ्जन सो जु बुझावे अबूझै ।।
मञ्जन सो जु भऱ्यो रसमाहिं, विद्वज्जन सो कितहू न अरूझै ।
व्यंजन सो जु बढ़ै रुचि सुंदर, अञ्जन सो जु निरञ्जन सूझै ।।३।।
जा प्रभुते उतपत्ति भई यह, सो प्रभु है उर इष्ट हमारे ।

---

१ हाथ पर कपार रखके । २ रोवे । ३ सतोगुण—रजोगुण—तमोगुण । ४ मन को प्रसन्न करनेवाला । ५ धर्मशास्त्र । ६ तोड़ना । ७ भोजन ।

जो प्रभु है सबके शिर ऊपर, ता प्रभुकूं शिरही हम धारे ॥
रूप न रेख अलेख अखंडित, भिन्न[1] रहे सब कारज सारे ।
नाम निरञ्जन है तिनको पुनि, सुंदर ता प्रभु की बलिहारे ॥४॥
जो उपजै विनशै गुण धारत, सो यह जानहु अंजन माया ।
आव न जाय मरै नहिं जीवत, अच्युत[2] एक निरञ्जन राया ॥
ज्यूं तरु तत्त्व रहै रस एकहि, आवत जात फिरै यह छाया ।
सो परब्रह्म सदा शिर ऊपर, सुंदर ता प्रभुसूं मन लाया ॥५॥
जो उपज्यो कछु आहि जहां लगि, सो सब नाश निरंतर होई ।
रूप धरचो सु रहै नहिं निश्चल, तीनहुं लोक गिनै कहँ कोई ॥
राजस तामस सात्त्विक जे गुण, देखत काल ग्रसै पुनि होई ।
आपहि एक रहै जु निरंतर, सुंदरके मन मानत सोई ॥६॥
देवनिके शिर देव विराजित, ईश्वरके शिर ईश्वर कैये ।
लालनिके शिर लाल निरंतर, खूबनिके शिर खूबहि लैये ।
पाकनिके शिर पाक शिरोमणी, देखि विचार उहै दृढ गैये ।
सुंदर एक सदा शिर ऊपर, और कछू हमकूं नहिं चैये ॥७॥
शेष महेश गणेश जहाँ लगि,विष्णु विरिंचिहुके शिर स्वामी ।
व्यापक ब्रह्म अखंड अनावृत, बाहर भीतर अंतरजामी ॥
वोर न छोर अनंत कहै गुण, या हित सुंदर है घन नामी ।
ऐसो प्रभू जिनके शिर ऊपर,क्यूं वरि है तिनकूं कहि स्वामी॥८॥

इति निर्गुण उपासनाको अंग संपूर्ण ॥१५॥

अथ पतिव्रताको अंग १६.

इन्दव छन्द

आनकि ओर निहारही जस, जात पतिव्रत एक व्रतीको ।
होत अनादर ऐसिहि भांति जु, पीछे फिरे नहिं शूर सतीको ॥

---

१ अलग । २ जो अपने नियमों से न हटे—परमेश्वर ।

नेकहि में हरवो हुई जात, खिसै अध बिंदु जु योग यतीको ।
राम हृदैते गये जन सुंदर, एक रती बिन पाव रतीको ।।१।।
जो हरिकूं तजि आन उपासत, सो मति मंद फजीहत होई ।
ज्यूं अपने भरतारहि छांड़ि, भई व्यभिचारिणी[1] कामिनी कोई ।।
सुंदर ताहि न आदर मान, फिरै विमुखी[2] अपनी पत[3] खोई ।
बूड़ि मरै किन कूप मँझार, कहा जग जीवत है शठ सोई ।।२।।
होई अनन्य[4] भजै भगवंतहि, और कछू उरमें नहिं राखै ।
देवि रु देव जहांलग है, डरकै तिनसूं कहि दीन[5] न भाखै ।।
योगहु यज्ञ व्रतादि क्रिया तिनको, तु नहिं स्वप्ने अभिलाखै ।
सुंदर अमृतपान कियो तब, तौ कहु कौन हलाहल[6] चाखै ।।३।।
एक वही सबके उर अंतर, ता प्रभुकूं कहु काहि न गावै ।
संकट माहि सहाय करै पुनि, सो अपनो पति क्यूं बिसरावै ।।
चार पदारथ और जहाँ लगि, आठहु सिद्धि नवौ निधि पावै ।
सुंदर छार परौ तिनके मुख, जो हरिकूं तजि आनकुं ध्यावै ।।४।।
पूरणकाम सदा सुखधाम, निरंजन राम सिरज्जन हारो ।
सेवक होई रह्यो सबको नित, कीटहि कुञ्जर देत अहारो ।।
भंजनदु:ख दरिद्र निवारण, चिंत करै पुनि साझँ सबारो ।
ऐसे प्रभू तजि आन उपासत, सुंदर है तिनको मुख कारो ।।५।।

मनहर छन्द

पतिहीसूं प्रेम होई, पतिहीसूं नेम होई;
पतिहीसूं क्षेम होई, पतिहीसूं रत है ।
पतिही है यज्ञ योग, पतिही है रसभोग;
पतिहीसूं मिटै सोग, पतिहीको यत है ।।
पतिही है ज्ञान ध्यान, पतिही है पुण्य दान;
पतिही है तीर्थ स्नान, पतिही को मत है ।

---

१ पुंश्चली । २ बहिर्मुख । ३ प्रतिष्ठा । ४ एक । ५ दु:खी । ६ विष ।

पति बिनु पति नाहिं, पति बिन गति नाहिं;
सुंदर सकलविधि, एक पतिव्रत है ॥६॥
जलको सनेही मीन, बिछुरत तजै प्रान;
मणि बिनु अहि जैसे, जीवत न लहिये ।
स्वाति बिंदुको सनेह, प्रगट जगतमाहिं;
एक सीप दूसरो सु, चातकहु कहिये ॥
रविको सनेही पुनि, कमल सरोवरमें;
शशिको सनेहीहू, चकोर जैसे रहिये ।
तैसेही सुंदर एक, प्रभुसूं सनेह जोर;
और कछु देखि काहू, और नहिं बहिये ॥७॥

इति पतिव्रताको अंग संपूर्ण ॥१६॥

अथ बिरह उराहनेको अंग १७.

मनहर छन्द

पीयको अँदेशो भारी, तोसूं कहूं सुन प्यारी;
यारी[1] तोरी गये सो वो, अजहूँ न आए हैं ।
मेरे तौ जीवनप्राण, निशि दिन उहै ध्यान;
मुखसूं न कहूं आन, नैन उर लाये हैं ॥
जबते गये बिछोहि,[2] कल न परत मोहिं;
ताते हूं पूछत तोहि, किन विरमाए[3] हैं ।
सुंदरविरहिनीको,[4] शोच सखी बार बार,
हमकूं विसार अब, कौनके कहाये हैं ॥१॥
हमकूं तो रैन दिन, शंक मनमाहिं रहै;

---

१ प्रीति । २ अलग—दर्द छोड़ । ३ ठहराये हैं । ४ वियोगिनी नारी रति के प्रेम में व्याकुल हो ।

उनकी तौ बातनिमें, ढंगहु न पाइये ।
कबहुं सँदेशा सुनि, अधिक उछाह[१] होइ;
कबहुँक रोइ रोइ, आँसुन बहाइये ।
औरनके रस वश, होई रहे प्यारेलाल;
आवनकी कहि कहि, हमकूं सुनाइये ।
सुंदर कहत ताहि, काटिये सु कौन भांति;
जोइ तरु आपने सु, हाथते लगाइये ॥२॥
मोसूं कहै औरसीही, वासूं कहै औरसीही
जाकूं कहै ताहीके, प्रतीत कैसे होत है ।
काहूसूं समास[२] करै, काहूसूं उदास फिरै;
काहूसूं तौ रसवश, एकमें कपोत है ॥
दगाबाजी दुबधा तो, मनकी न दूर होइ;
काहूके अँधेरो घर, काहूके उद्योत[३] है ।
सुंदर कहत जाके, पीर सो करै पुकार;
जाके दुःख दूर गये, ताको भई वोत है ॥३॥
हिये और जिये और, लिये और दिये और;
किये और कौनसी, अनूपपाटी पढ़े हैं ।
मुख और बैन और, नैन और तन और;
मन और काया सब, यंत्रमाहिं कढ़े हैं ॥
हाथ और पाँव और, शीशहू श्रवण और;
नख शिखरोम रोम, कंलईसूं मढ़े हैं ॥
ऐसी तौ कठोरता न, सुनी नहिं देखि जग;
सुंदर कहत कोई, वज्रहीके गढ़े हैं ॥४॥

इति विरह उराहनेको अंग संपूर्ण ॥१७॥

---

१ प्रसन्नता । २ मिलाप । ३ उजेला—प्रकाश ।

अथ शब्दसारको अंग १८.

मनहर छन्द

भूल्यो फिरै भ्रमते, कहत कछु और और;
करत न ताप दूरि, करत संतापकूं[१] ।
दक्ष[२] भयो रहै पुनि, दक्षप्रजापति जैसे;
देत परदीक्षणा[३] न, दीक्षा देत आपकूं ।।
सुंदर कहत ऐसे, जामें न युगति कछु;
और जाप जपै न, जपत निज जापकूं ।
बाल भयो, ज्वान भयो वय बीते वृद्ध भयो;
बपुरूप[४] होइके, बिसरि गयो आपकूं ।।१।।

इन्दव छन्द

पान उहै जु पियूष[५] पिवै नित, दान उहै जु दरिद्र हि मानै[६] ।
कान उहै सुनिये यश केशव, मान उहै करिये सनमानै ।।
तान उहै सुरतान रिझावत, जान उहै जगदीश हि जानै ।
बान उहै मन बेधत सुंदर, ज्ञान उहै उपजै न अज्ञानै ।।२।।
शूर उहै मनको वश राखत, क्रूर उहै मन माँहिं लजै है ।
त्याग उहै अनुराग नहीं कहुँ, भाग उहै मनमोह तजै है ।।
तज्ञ[७] उहै निज तत्त्वहि जानत, यज्ञ उहै जगदीश यजै है ।
रक्त[८] उहै हरिसूं रति सुंदर, भक्त उहै भगवंत भजै है ।।३।।
चाप[९] उहै कहिये रिपु ऊपर, दाप[१०] उहै दलकारहि मारै ।
छाप उहै हरि आप दई शिर, थाप उहै थपि और न धारै ।।
जाप उहै जपिये अजपा[११] नित, व्याप उहै जिन व्याप विचारै ।

---

१ पश्चात्ताप—दुःख । २ प्रवीण । ३ पर उपदेश । ४ परमेश्वर—शरीर । ५ सुधा । ६ नाश । ७ बुद्धिमान् । ८ प्रेमी । ९ धनुष—शरासव । १० क्रोध घमंड । ११ नित्य जपा जाय ।

बाप उहै सबको प्रभु सुंदर, पाप हरै अरु ताप निवारै ।।४।।
भौन[१] उहै भय नाहिं न जामहि, गौन उहै फिरि होई न गौना ।
वौन उहै वमियै विषयारस, रौन उहै प्रभुसूं वहिं रौना ।।
सौन उहै जु लिये हरि बोलत, लौन उहै सब और अलौना ।
सौन उहै गुरु संत मिलै जब, सुंदर शंक रहै नहिं कौना ।।५।।
कार उहै अविकार[२] रहै नित, सार उहै जु असारहि नाखै ।
प्रीति उहै जु प्रतीति धरै उर, नीति उहै जु अनीति न भाखै ।
तंत उहै लगि अंत न टूटत; संत उहै अपनो सत[३] राखै ।।
नाद[४] उहै सुनि वाद[५] तजै सब, स्वाद उहै रस सुंदर चाखै ।।६।।
श्वास उहै जु उश्वास न छाँड़त, नाश उहै फिरि होइ न नाशा ।
पास उहै सतपास लगै जम,-पास कटै प्रभुके नित पासा ।।
वास उहै गृहवास तजै वन,-वास सही तिहि ठोहर वासा ।
दास उहै जु उदास रहै, हरिदास सदा कहि सुंदरदासा ।।७।।
श्रोत्र[६] उहै श्रुतिसार[७] सुनै अरु, नैन उहै निजरूप निहारै ।
नाक उहै हरि नाकहि राखत, जीभ उहै जगदीश उचारै ।।
हाथ उहै करिये हरिको कृत, पाँव उहै प्रभुके पथ धारै ।
शीश उहै करि श्याम समर्पण, सुंदर यूं सब कारज सारै ।।८।।
सोवत सोवत सोइ गयो शठ, रोवत रोवत कै बेर रोयो ।
गोवत गोवत गोइ धर्‍यो धन, खोवत खोवत तैं सब खोयो ।।
जोवत जोवत बीत गये दिन, बोवत बोवत तैं विष बोयो ।
सुंदर सुंदर राम भज्यो नहिं, ढोवत ढोवत बोझहि ढोयो ।।९।।
देखत देखत देखत मारग, बूझत बूझत बूझत आयो ।
सूझत सूझत सूझ परी सब, गावत गावत गोविंद गायो ।।
साधत साधत साध भयो पुनि, तावत तावत कंचन[८] तायो ।
जागत जागत जागि पर्‍यो जब, सुंदर सुंदर सुंदर पायो ।।१०।।

इति शब्दसारको अंग संपूर्ण ।।१८।।

---

१ गृह–घट । २ निर्दोष । ३ सत्य प्रण । ४ शब्द । ५ बाजा । ६ कान । ७ वेद का सारांश । ८ सुवर्ण ।

अथ भक्तिज्ञानमिश्रितको अंग १९.

इन्दव छन्द

बैठत रामहि ऊठत रामहि, बोलत रामहि राम रह्यो है ।
खावत रामहि पीवत रामहि,धामहिं रामहि राम गह्यो है ।।
जागत रामहि सोतहु रामहि, जोवत रामहि राम लह्यो है ।
देतहु रामहि लेतहु रामहि, सुंदर रामहि राम रह्यो है ।।१।।
श्रोत्रहु रामहि नेत्रहु रामहि, वक्त्रहु रामहि रामहि गाजै ।
शीशहु रामहि हाथहु रामहि, पाँवहु रामहि रामहि छाजै ।।
पेटहु रामहि पीठिहु रामहि, रोमहु रामहि रामहि बाजै ।
अंतर राम निरंतर रामहि, सुंदर रामहि राम बिराजै ।।२।।
भूमिहु रामहि आपहु रामहि, तेजहु रामहि वायुहि रामे ।
व्योमहु[1] रामहि चंदहु रामहि, सूरहु[2] रामहि शीतहि घामे ।।
आदिहु रामहि अंतहु रामहि, मध्यहु रामहि पुर्ष रु बामे ।
आजहु रामहि कालहु रामहि, सुंदर रामहि रामहि थामे ।।३।।
देखहु राम अदेखहु रामहि, लेखहु राम अलेखहु रामे ।
एकहु राम अनेकहु रामहि, शेषहु राम अशेषहु तामे ।।
मौनहु राम अमौनहु रामहि, गौनहु रामहि ठाम कुठामे ।
बाहिर रामहि भीतर रामहि, सुंदर रामहि है जग जामे ।।४।।
दूरहु राम नजीकहु रामहि, देशहु राम प्रदेशहु रामे ।
पूरब रामहि पश्चिम रामहि, दक्षिण रामहि उत्तर धामे ।
आगेहु रामहि पीछेहु रामहि, व्यापक रामहि हैं वन ग्रामे ।
सुंदर राम दशोदिशि पूरण, स्वर्गहु राम पतालहु तामे ।।५।।
आपहु राम उपावत रामहि, भंजन राम सँवारन वामे ।
दृष्टहु राम अदृष्टहु[3] रामहि, इष्टहु राम करै सब कामे ।।

---

१ आकाश शून्य । २ सूर्यनारायण । ३ अदेख ।

पूर्णहु राम अपूर्णहु रामहि, रक्त[1] न पीत न श्वेत न श्यामे ।
शून्यहु राम अशून्यहु रामहि, सुंदर रामहि नाम अनामे ।।६।।

इति भक्तिज्ञानमिश्रितको अंग संपूर्ण ।।१९।।

अथ विपर्ययको अंग २० .

सवैया—(इकतीस मात्रात्मक)

श्रवणहु देखि सुनै पुनि नयनहु, जिह्वा सुनै नासिका[2] बोल ।
गुदा खाय इंद्रिय जल पीवै, विनही हाथ सुमेरहि[3] तोल ।।
ऊंच पाँव मुंडी नीचेकुं, तीन लोक में विचरत डोल ।
सुंदरदास कहै सुन ज्ञानी, भली भाँति या अर्थही खोल ।।१।।
अंधा तीन लोककूं देखै, बहिरा सुनै बहुत विधि नाद ।
नकटा वास कमलकी लेवै, गूँगा करै बहुत संवाद ।।
ठुंठा पकरि उठावै पर्वत, पंगू करे निरत अह्लाद[4] ।
जो कोउ याको अर्थ विचारै, सुंदर सोई पावै स्वाद ।।२।।
कुंजरकूं कोरी गिलि बैठी, सिंहहि खाय अघानो स्याल ।
मछरी अग्निमाँहिं सुख पायो, जलमें बहुत हुती बेहाल ।।
पंगु चढ्यो पर्वतके ऊपर, मृतकहि देखि डरानो काल ।
जो को अनुभवि[5] होय सु जानै, सुंदर ऐसा उलटा ख्याल ।।३।।
बूँदहि माहिं समुद्र समानो, राई माँहि समानौ मेर ।
पानी माहि तुंबिका डूबी, पाहन तरत न लागी बेर ।।
तीन लोकमें भया तमासा, सूरज कियो सकल अँधेर ।
मूरख होय सु अर्थही पावै, सुंदर कहै शब्दमें फेर ।।४।।
मछरी बगलाकूं गहि खायो, मूषा खायो कारो—साँप ।
सूवे पकरि विलारी खाई, ताके मुवे गयो संताप ।।
बेटी अपनी मैया खाई, बेटे अपने खायो बाप ।

---

१ लाल । २ नाक । ३ पहाड़ । ४ प्रसन्नता । ५ ज्ञानी ।

सुंदर कहै सुनौ हो संतो, तिनकूं कोउ न लाग्यो पाप ।।५।।
देवमांहिते देवल प्रगटचो, देवल मांहि प्रगटचो देव ।
शिष्य गुरुहि उपदेशन[1] लाग्यो, राजा करैं रंककी सेव ।।
वंध्यापुत्र पंगु इक जायो, ताकूं घर खोवनकी टेव ।
सुंदर कहत सु पंडित ज्ञाता, जो कोइ याको जानै भेव ।।६।।
कमल माँहिते पानी उपज्यो, पानी मांहिते निपज्यो सूर ।
सूरमाँहिं शीतलता उपजी, शीतलतामें सुख भरपूर ।।
ता सुखको क्षय[2] होय न कबहुँ, सदा एकरस निकट न दूर ।
सुंदर कहत सत्य यह यूंही, यामें रति न जानहु क्रूर ।।७।।
हंस चढ़चो ब्रह्माके ऊपर, गरुड़ चढ़चो पुनि हरिकी पीठ ।
बैल चढ़्यो है शिवके ऊपर, सो हम दीठो[3] अपनी दीठ ।।
देव चढचो पातीके ऊपर, जर्ख चढ़चो दायनि पर नीठ ।
सुंदर एक अचंभा हूवा, पानीमाँही जरै अगीठ ।।८।।
कपरा धोबीकूं गहि धोवै, मांटी बपुरी घड़े कुम्हार ।
सूइ बिचारी दर्जिहि सीवै, सोना तावै पकरि सुनार ।।
लकरी बढ़ईकूं गहि छीले, खाल सु बैठी धमें लुहार ।
सुंदरदास कहै सो ज्ञानी, जो कोइ याको करै विचार ।।९।।
जो घर मांहिं बहुत सुख पायो, तो घरमाहिं बसै अब कौन ।
लागी सबै मिठाई खारी, मीठो लग्यो एक वह लौन ।।
पर्वत उड़ै रूइ थिर बैठी, ऐसो कोइक बाज्यो पौन ।
सुंदर कहै न मानै कोई, ताते पकरी रहिये मौन ।।१०।।
रजनी[4] मांहि दिवस हम देख्यो, दिवस मांहिं देखि हम रात ।
तेल भरचो संपूरण तामें, दीपक जरै जरै नहिं बात[5] ।।
पुरुष एक पानीमें प्रगटचो, ता निगुराकी कैसी जात ।
सुंदर सोई लहे अर्थकूं, जो नित करै पराई तात ।।११।।

---

१ सिखलाना । २ नाश । ३ देखा । ४ रात । ५ बत्ती ।

उनयो मेघ बढ़चो चहुँ दिशिमें, वर्षन लग्यो अखंडित धार ।
बूड़चो मेरु नदी सब सूखी,उर लाग्यो निशि दिन इक तार ।।
काँसा परचो बीजली, ऊपर कीनो सब कुटुंब संहार ।
सुंदर अर्थ अनूपम याको, पंडित होय सु करै विचार ।।१२।।
बाड़ी माँहीं माली निपज्यो, हाली माँहीं निपज्या खेत ।
हंसहि उलटि श्याम रँग लायो,भ्रमर[१] उलटि करि हूयो श्वेत ।
शशिधर उलटि राहुकूं ग्रास्यो, सूर उलटि करि ग्रासो केत ।
सुंदर सुगराकूं तजि भाग्यो, निगुरा[२] सेती बाँध्यो हेत ।।१३।।
अग्नि मथन करि लकरी काढ़ी,सो वह लकरि प्राण अधार ।
पानी मथि करि घीउ निकस्यो, सो घृत खायो बारंबार ।।
दूध दहीकी इच्छा भागी, जाकूं मथत सकल संसार ।
सुंदर अब तौ भये सुखारे, चिंता रही न एक लगार ।।१४।।
पात्रमाँहिं[३] झोलि गहि राखै, योगी भिक्षा माँगन जाइ ।
जागै जगत सोवही गोरख, ऐसी शब्द सुनावै आइ ।।
भिक्षा फिरै बहुत गुरु ताकूं, सो वही भिक्षा चेले खाइ ।
सुंदर योगी युग युग जीवै, ता अवधूत[४] कि दूर बलाइ ।।१५।।
परधन हरै करै परनिंदा, परतियकूं राखें घर माँहि ।
मांस खाय मदिरा[५] पुनि पीवै, ताहिं मुक्तिको संशय[६] नाहिं ।
अकर्म गहैं कर्म सब त्यागैं, ताकी संगत पाप नशाहिं ।
ऐसी करै सुसंत कहावै, सुंदर और उपजि मरि जाहिं ।।१६।।
निर्दय[७] होई तरै पशु घातिक,[८] दयावंत बूड़ै भवमाहिं[९] ।
लोभी लागै सबनकूं प्यारे, निर्लोभीकूं ठोहर नाहिं ।।
मिथ्यावादी[१०] मिलै ब्रह्मकूं, सत्य कहै ते यमपुरी जाहिं ।
सुंदर धूममाहिं शीतलता, जरत रहै सो बैठे छाहिं ।।१७।।

---

१ काला भौरा । २ निगोड़ा । ३ बर्तन । ४ योगी । ५ शराब । ६ संदेह । ७ कठोर । ८ कसाई । ९ संसार । १० झूठ बोलनेवाला ।

बढ़ई चरसा भला संवारचो, फिरने लाग्यो नीकी भात ।
बहू सासूकूं कहि समुझावै, तू मेरे ढिग बैठी कात ।।
ताको तार न टूटै कबहूं, प्यूनी घटै नहीं दिन रात ।
सुंदर विधिसूं बुनै जुलाहा, खासा निपजै ऊंची जात ।।१८।।
माइ बाप तजि घी उमड़ानी, हरषत चली खसमके[1] पास ।
बहू बिचारी बड़ि बख्खावर[2] जाके कहे चलति है सास ।।
भाई खरो भलो हितकारी, सब कुटुम्बको कीनो नास ।
ऐसी विधि[3] घर बस्यो हमारो, कहि समुझावें सुंदरदास ।।१९।।
घर घर फिरै कुँवारी[4] कन्या, जने जनेसूं करती संग ।
वेश्या सो तौ भई पतिव्रत, एक पुरुषके लागी अंग ।।
कलियुगमाहीं सतयुग थाप्यो, पापी उदय धर्मको भंग[5] ।
सुंदर कहत अर्थ[6] सो पावै, जो नीके करि भजै अनंग[7] ।।२०।।
विप्र रसोई करने लाग्यो, चौका भीतर बैठो आइ ।
लकरी माहीं चूला दीयो, रोटी ऊपर तवा चढ़ाइ ।।
खिचरी माँहीं हँड़िया रांधी, सालन आक[8] धतूरा खाइ ।
सुंदर जीमत अतिसुख पायो, अबके भोजन कियो अघाइ ।।२१।।
बैल उलटि नायककूं[9] लाद्यो, वस्तु माहिं भरि गूण अपार ।
भलीभांतिका सौदा कीया, आय दिशांतर या संसार ।।
नायिकिनी पुनि हर्षन लागी, मोहिं मिल्यो नीको भरतार ।
पूँजी जाइ साइकूं[10] सोपी, सुंदर शिरते डारचो भार[11] ।।२२।।
बनियाँ एक बनजकूं आयो, परे तावरा भारी भैठ ।
भली वस्तु कछु लीनी दीनी, खैंचि गठरिया बाँधी ऐंठ ।।
सौदा किया चल्यो पुनि घरकूं, लेखा कियो वारितर[12] बैठ ।
सुंदर शाह खुशी अति हूवो, बैल गयो पूंजीमें पैठ ।।२३।।

---

१ सौहर । २ खुश किस्मत । ३ तरह । ४ अनव्याही । ५ नाश । ६ द्रव्य । ७ कामदेव ।
८ मदार । ९ वनिजारा । १० शाह । ११ बोझ । १२ पानी ।

पहरायत घर घुसे शाहके, रक्षा करने लागे चोर ।
कोतवाल काठहुकरि बांध्यो, छूंटे नहिं साँझ अरु भोर ।।
राजा ग्राम छोड़िकै भाग्यो, हुवो सकल जगत्में शोर ।
परजा सुखी भई नगरीमें, सुंदर कोई जुलुम न जोर ।।२४।।
राजा फिरै विपतिको मार्‍यो, घर घर टुकड़ा माँगै भीख ।
पाँव पियादो निशि दिन डोलै, घोड़ा चालि सकै नहिं बीख ।।
आक अरंड[1] कि लकरी चूशै, छाँड़ै बहुत रस भरे ईख ।
सुंदर कोउ जगत्में बिरलो, या मूरखकूं लावै सीख ।।२५।।
पानी जरै पुकारै निशि दिन, ताकूं अग्नि बुझावे आइ ।
मैं शीतल तूं तपत भया क्यूं, बारंबार कहै समुझाइ ।।
मेरी झपट[2] तोहिं जो लागै, तौ तू भी शीतल[3] ह्वै जाइ ।
कबहूं झरनी फेरि न उपजै, सुंदर मुखमें रहै समाइ ।।२६।।
खसम पर्‍यो जोरूके पीछे, कह्यो न मानै भुंडीरांड़[4] ।
जित तित फिरै भटकती यूंहीं, तैं तो कियो जगतमें भांड़ ।।
तौ हू भूख न भागी तेरी, तैं गिल बैठो सारी भांड़ ।
सुंदर कहै सीख[5] सुनि मेरी, अब तू घर घर फिरबो छांड़ ।।२७।।
पन्थी[6] माँहि पंथ चलि आयो, सो वह पंथ लख्यो नहिं जाइ ।
वाही पन्थ चल्यो उठि पन्थी, निर्भय[7] देश पहूँच्यो आइ ।।
तहाँ दुकाल परै नहिं कबहूं, सदा सुभिक्ष रह्यो ठहराइ ।
सुंदर दुःखि न कोई दीसै, अक्षय[8] सुखमें रहै समाइ ।।२८।।
एक अहेरी[9] वनमें आयो, खेलन लाग्यो भली शिकार ।
करमें धनुष कमरमें तरकस, सावज[10] घेरे बारंबार ।।
मार्‍यो सिंह व्याघ्र पुनि मार्‍यो, मारी बहुत मृगनकी डार ।

---

१ अण्डी । २ लू । ३ ठंढा । ४ बदमाश औरत । ५ शिक्षा । ६ राही । ७ निडर । ८ निर्नाश । ९ शिकारी । १० शिकार ।

ऐसे सकल मारि घर लायो, सुंदर राजहि कियो जुहार[1] ॥२९॥
शुकके[2] वचन अमृतमय ऐसे, कोकिल[3] धारि रहै मन माहिं ।
सारो सुनै भागवत कबहूं, सारस तौ उपजावै नाहिं ॥
हंस चुगै मुक्ताफल[4] अर्थहि, सुंदर मानसरोवर ताहिं ।
काक कवीश्वर नीके जेते, सो सब दौरि करंकहि जाहिं ॥३०॥
नष्ट होय द्विज[5] भ्रष्ट क्रिया करि, कष्ट किये नहिं पावै ठौर ।
महिमा सकल गई तिनकेरी, रंहत पगनतर सब शिरमौर ।
जित तित फिरै नहीं कछु आदर, तिनकूं कोउ न घालौ कौर ।
सुंदरदास कही समुझावै, ऐसी कोउ करौ मति और ॥३१॥
शास्त्र रु वेद पुराण पढ़ै किन, पुनि व्याकरण पढ़ै जे कोइ ।
संध्या करै गहै षटकर्महि,[6] गुण अरु काल विचारै सोइ ॥
सारा काम तबै बनि आवै, मनमें सब तजि राखै दोइ ।
सुंदरदास कहै सुन पंडित, राम नाम बिनु मुक्त न होइ ॥३२॥

श्लोक

श्लोकार्द्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रन्थकोटिभिः ।
ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः ॥१॥

दोहा

पीवत विपरीत यह, ताहि होत निज ज्ञान ।
बहुरि जन्म होवै नहीं, रहत सु पूर्ण प्रमाण ॥१॥

इति रहस्यार्थदीपिका सहित विपर्ययका अंग संपूर्ण ॥२०॥

अथ स्वरूपविस्मरणको अंग २१.

इन्दव छन्द

जा घटकी उनहार है जैसिहि, ता घट चेतन तैसोहि दीसै ।

---

१ सलाम—नजर । २ सुग्गा । ३ कोयल । ४ मोतीफल । ५ ब्राह्मण । ६ पढ़ाना, पढ़ना, दान देना, दान लेना, यज्ञ करना, यज्ञ कराना ।

हाथिकि देहमें हाथिसों मानत, चींटिकी देहमें चिंटि करीसै ।।
सिंहकि देहमें सिंहसो मानत, कीशकि देहमें मानत कीसै ।
जैसि उपाधि भई जहँ सुंदर, तैसोहि होइ रह्यो नख शीसै ।।१।।
जैसेहि पावक काठके योगते, काठसो होइ रह्यो इक ठौरा ।
दीरघ[1] काठमें दीरघ लागत, चौरस काठमें लागत चौरा ।।
आपनो रूप प्रकाश करै जब, जारि करै तब और को औरा ।
तैसेहि सुंदर चेतन आपहि, आपकूँ जानत नाहिन बौरा ।।२।।

मनहर छन्द प्रश्न

अजर[2] अमर अविगत,[3] अविनाशी अज;[4]
कहत सकल जन, श्रुति अवगाहेते ।
निर्गुण निर्मल अति, शुद्ध निरबंध नित;
ऐसेहि कहत और, ग्रन्थनके थाहेते ।।
व्यापक अखण्ड एक, रस परिपूर्ण हैं;
सुंदर सकल रमि, रह्यो ब्रह्म ताहेते ।
सहज सदा उदोत, याहीते अचंभा होत;
आपहीकूं आप भूलि, गयो सो तौ काहेते ।।३।।

उत्तर

जैसे मीन मांसकूं, निगलि जात लोभ लगि;
लोहको कंटक नहिं, जानत उमाहेते ।
जैसे कपि गागरमें; मूठ बाँधि राखै शठ;
छाँड़ि नहिं देत सो तौ, स्वादहीके वाहेते ।।
जैसे शुक नारियर, चंचू मारि लटकत;
सुंदर कहत दुःख, देत याहि लाहेते ।
देहको सँयोग पाइ, इंद्रिनके वश परचो;
आपहीकूं आप भूलि, गयो सुख चाहेते ।।४।।

---

१ बढ़ा । २ जिसे बुढ़ापा न हो । ३ व्याप्त । ४ अजन्मा—स्वयं उत्पन्न ।

इन्दव छन्द

ज्यूं कोई मद्य पिये अति छाकत्त, नाहिं कछू सुधि है भ्रम ऐसो ।
ज्यूं कोई खाइ रहै ठग मूरिहि, जानै नहीं कछु कारण तैसो ।।
ज्यूं कोइ बालक शंक[1] उपावत, कम्पि उठै अरु आनत भैसो[2] ।
तैसेहि सुंदर आपकूं भूलि सु, देखहु चेतन[3] मानत कैसो ।।५।।
ज्यूं कोइ कूपमें झांकि अलापत,[4] ऐसेहि भांति सुकूप अलापै ।
ज्यूं जल हालत है लगि पौन, कहै भ्रमत्ते प्रतिबिंबहि काँपै ।।
देहके प्राणके औ मनके कृत, मानत है सब मोहिकूं व्यापै ।
सुंदर पेचपऱ्यो अतिशै करि, भूलिगयो भ्रमते ब्रह्म आपै ।।६।।
ज्यूं द्विज कोउक छाँड़ि महातम, शुद्र भयो करि आपकूं मान्यो ।
ज्यूं कोउ भूपति[5] सोवत्त सेज[6] सु रंक भयो सुपनो महि जान्यो ।।
ज्यूं कोउ रूपकि राशि अत्यंत, कुरूप कहै भ्रम मैचक[7] आन्यो ।
तैसेहि सुंदर देहसो होयके, या ब्रह्म आपहि आप भुलान्यो ।।७।।
एकहि व्यापक वस्तु निरंतर,[8] विश्व नहीं यह ब्रह्म विलासै ।
ज्यूं नट[9] मन्त्रनसूं दृग बांधत है कछु औरहि औरहि भासै ।।
ज्यूं रजनीमहँ बूझ परै नहिं, ज्यूं लगि सूरज नाहिं प्रकासै ।
ज्यूं यह आपहि आप न जानत, सुंदर ह्वै रह्यो सुन्दरदासै ।।८।।

मनहर छन्द

इंद्रिनकूं प्रेरि पुनि, इंद्रिनके पीछे परयो;
आपनी अविद्या करि, आप तनु गह्यो है ।
जोइ जोइ देहकूं, संकट आइ परै कछु;
सोइ सोइ मानै आप, याते दुःख सह्यो है ।।
भ्रमत भ्रमत कहुँ, भ्रमको न आवै अन्त;
चिरकाल[10] बीत्यो पै, स्वरूपकूं न लह्यो है ।

---

१ डर पैदा करना । २ डर । ३ चैतन्य । ४ शब्द करना । ५ राजा । ६ शय्या । ७ हकबकाना । ८ सर्वदा । ९ बाजीगर । १० बहुत दिन ।

सुंदर कहत देखौ, भ्रमकी प्रवलताई,
भूतनमें[१] भूत मिलि, भूत होइ रह्यो है ।।९।।
जैसे शुक नलिका,[२] न छांड़ि देत पगनते;
जानै काहू और मोहिं, बांधि लटकायो है ।
जैसे कपि गुंजनको,[३] ढेर करि मानै आग;
आगे धरि तापै कछु, शीत न गमायो है ।।
जैसे कोऊ कारजकूं, जात हुतो पूरबकूं;
भ्रमते उलटि फिरि, पश्चिमकूं आयो है ।
तैसेहि सुंदर सब आपहीकूं भ्रम गयो;
आपहीकूं भूलिकरि, आपही बंधायो है ।।१०।।
जैसे कोऊ कामिनीके, हिये पर चूस बाल;
सुपनेमें कहै मेरा, पुत्र[४] कहूं गयो है ।
जैसे काहू पुरुषके, कंठ हुती मणि सोही;
ढूँढ़त फिरत कछु, ऐसो भ्रम भयो है ।।
जैसे कोऊ वायु करि, बावरो बकत ढोल,
औरहीकी और कहँ, सुधि भूलि गयो है ।
तैसेहि सुंदर निज, रूपकूं बिसारि देत;
ऐसो भ्रम आपहीकूं, आप करि लयो है ।।११।।
दिन दिन छिन छिन, होइ जात भिन्न[५] भिन्न;
देहके सँयोग पराधीन,[६] सो रहतु है ।
शीत लगै घाम लगै, भूख लगै प्यास लगै;
शोक मोह मति अति, खेदकूं लहतु है ।।
अंध भयो पंगु भयो, मूकहूं[७] बधिर[८] भयो;
ऐसे मानि मानि भ्रम, नदीमें बहतु है ।

---

१ तत्त्व । २ कम्पा । ३ लाल करजनी । ४ लड़का । ५ जुदा जुदा । ६ परवश ।
७ गूंगा । ८ बहरा ।

सुंदर अधिक मोहिं, याहिते अंचभा आही,
भूलिकै स्वरूपकूं, अनाथ[1] सो कहतु है ॥१२॥
जैसे कोई कहै मैं तौ, स्वपनेमें ऊंट भयो;
जागि करि देख वही, मानुष स्वरूप है ।
जैसे कोई राजा पुनि, सोवत भिखारी[2] होई;
आँख उघरै तौ महा, भूपनको[3] भूप है ॥
जैसे कोउ भ्रमहूते, कहै मेरो शिर कहां;
भ्रमके गयेते जानै, शिर तदरूप[4] है ।
तैसेही सुंदर यह, भ्रम करि भूल्यो आप;
भ्रमके गयेते यह, आतमा अनूप है ॥१३॥
जैसे काहू पोसतीकी, पाग परी भूमिपर;
हाथ लेके कहै एक, पाग मैं तो पाई है ।
जैसे शेखसली, मनोरथनको कियो घर;
कहै मेरो घर गयो, गागरि गिराई है ॥
जैसे काहू भूत लग्यो, बकत है आक बाक;
शुद्धि सब दूर भई, और मति आई है ।
तैसे सुंदर यह, भ्रमकारि भूलो आप;
भ्रमके गयेते एक, आतमा सदाई है ॥१४॥
आपही चेतन यह, इंद्रिन चेतनकारि;
आपही मगन होई, आनँद बढ़ायो है ।
जैसे नर शीतकाल, सोवत निहाली[5] वोढ;
आपही तपत होइ, आप सुख पायो है ॥
जैसे बाल लकरीकूं, घोड़ा करि डाक चढे;
आप असवार होइ, आपही कुदायो है ।
तैसेही सुंदर यह, जड़को सँयोग पाय;

---

१ यतीम । २ रंक-दरिद्री । ३ महाराज । ४ सदृश । ५ रजाई ।

आप सुख मानि मानि, आपही भुलायो है ॥१५॥
कहूं भल्यो कामरत, कहूं भूल्यो साधी जत;
कहूं भूल्यो गृहमध्य, कहूं वनवासी है।
कहूं भूल्यो नीच मानि, कहूं भूल्यो ऊंच मानि;
कहूं भूल्यो मोहि बाँधि, कहूं तौ उदासी[१] है।
कहूं भूल्यो मौन धरि, कहूं बकवाद करि;
कहूं भूल्यो मक्के जाइ, कहूं भूल्यो काशी है।
सुंदर कहत, अहंकारहूते भूल्यो आप;
एक आवै रोन अरु, दूजे आवे हांसी है ॥१६॥
मैं बहुत दुःख पायो, मैं बहुत सुख पायो;
मैं अनन्त[२] पुण्य किये, मेरे अति पाप है।
मैं कुलीन विद्यावन्त, पंडित प्रवीन महा;
मैं तौ मूढ़ अकुलीन,[३] मेरो नीच बाप है॥
मैं हूं राजा मेरी आन, फिरै चहूं चक्रमांहि;
मैं सो रंक द्रव्यहीन, मोहिं तौ संताप है।
सुंदर कहत, अहंकारहीते जीव भयो;
अहंकार गये यह, एक ब्रह्म आप है ॥१७॥
देहही सु पुष्ट लगै, देहही दूबरी लगै;
देहहीकूं तीर लगै, देहहीकूं तोप लगै;
देहहीकूं शीत लगै, देहहीकूं तावरो।
देहहीकूं कृपाण[४] लगै, देहहीकूं घावरो॥
देहही सुरूप लगै, देहही कुरूप लगै;
देहही यौवन लगे, देह वृद्ध दावरो।
देहहीकूं बांधि हेत, आपविषे मानि लेत;
सुंदर कहत ऐसो, बुद्धिहीन बावरो ॥१८॥

---

१ संन्यासी। २ अनगिनत। ३ कुलहीन—नीचकुल। ४ तलवार।

इन्दव छन्द

आपहि चेतन ब्रह्म—अखंडित, सो भ्रमते कछु अन्य परेखै ।
ढूँढत ताहि फिरै जितही तित, साधत योग बनावत भेखै ।।
औरहु कष्ट करे अतिशय[1] करि, प्रत्यक—आतमतत्व न पेखै ।
सुंदर भूलिगयो निजरूपहि, है कर कंकण दर्पण देखै ।।१९।।
सूत गलेमहिं मेलि[2] भयो द्विज, ब्राह्मण होईके ब्रह्म न जान्यो ।
क्षत्रिय होईकी छत्र धर्‍यो शिर, हय गज पैदलसूं मन मान्यो ।
वैश्य भयो वपुकी[3] वय[4] देखत, झूठ प्रपंच बनीजहि ठान्यो ।
शूद्र भयो मिलि शूद्र—शरीरही,सुंदर आप नहीं पहिचान्यो।।२०।
ज्यूं रविकूं रवि ढूंढ़त है कहुँ, तप्त मिलै तन शीत गमाऊं ।
ज्यूं शशिकूं शशि चाहत है पुनि, शीतल ह्वै करि तप्त बुझाऊं ।।
ज्यूं सँनिपात भये नर टेरत, है घर में अपने घर जाऊं ।
त्यूं यह सुंदर भूलि स्वरूपहि, ब्रह्म कहै कब ब्रह्महि पाऊं ।।२१।।
आप न देखत है अपनो मुख, दर्पण कांटि[5] लग्यो अतिथूला ।
ज्यूं दृग देखत तेरहि जात, भयो जबही पुतरी परि फूला ।।
छाय अज्ञान रह्यो अभि अंतर, जानि सकै नहिं आतम मूला ।।
सुंदर यूं उपज्यो मनके मल, ज्ञान विना निज रूपहि भूला ।।२२।।
दीन हुवो बिललात फिरे नित, इंद्रिनके वश छिल्लक छोलै ।
सिंह नहीं अपनो बल जानत, जंबुक[6] ज्यूं जितही तित डोलै ।।
चेतनता विसराइ निरंतर, लै जड़ता भ्रम गाँठ न खोलै ।
सुंदर भूलि गयो निज रूपहि, देह स्वरूप भयो मुख बोलै ।।२३।।
मैं सुखिया सुखसेज सुस्वासन, हय गज भूमि महारजधानी ।
हूं दुखिया दिन रैन मरू दुःख, मोहिं विपत्ति परी नहिं छानी ।।
हूं अति उत्तम जाति बड़ो कुल, हूं अति नीच क्रिया कुलहानी ।
सुंदर चेतनता न संभारत, देहस्वरूप भयो अभिमानी ।।२४।।

---

१ अत्यंत करके । २ डाले । ३ शरीर । ४ अवस्था । ५ मैल । ६ सियार ।

गर्भ विषे उतपत्ति भई जब, जन्म लियौ शिशु शुद्धि न जानी ।
बाल कुमार किशोर युवादिक, वृद्ध भयो अति बुद्धि नशानी ।।
जैसिहि भाँति भई वपुकी गति, तैसोहि होई रह्यो यह पानी ।
सुंदर चेतनता न सँभारत, देह स्वरूप भयो अभिमानी ।।२५।।
ज्यूं कोइ त्याग करे अपनो घर, बाहिर जाइके वेष बनावै ।
मूँड मुँडाइ रु कान फराइ, विभूति[1] लगाइ जटाहु बढ़ावै ।।
जैसोहि स्वांग करै वपुको[2] पुनि, तै सोहि मानत त्यूं हुइ जावै ।
त्यूं यह सुंदर आप न जानत, भूलि स्वरूपही और कहावै ।।२६।।

इति स्वरूपविस्मरणको अंग संपूर्ण ।।२१।।

अथ विचारको अंग २२ .

मनहर छन्द

प्रथम श्रवण करि, चितहि एकाग्र[3] धरि;
गुरु सत आगम कहैं, सु उर धारिये ।
दुतिय मनन[4] वार,—वारहि विचारि देख;
जोइ कछु सुनै ताहि, फिरके सँभारिये ।।
तृतीय प्रकार, निदिध्यासही[5] जु नीके करि;
निस्संग विचारते, अपनपो सु टारिये ।
तैसेही साक्षात याहि, साधन करत होइ;
सुंदर कहत द्वैत[6]—बुद्धिकूं निवारिये ।।१।।
देखै तौ विचार करि, सुनै तौ विचार करि;
बोलै तौ विचार करि, करै तो विचार है ।
खावै तौ विचार करि, पीवै तौ विचार करि;
सोवै तौ विचार करि, जागै ऊ न टार है ।।
बैठे तौ विचार करि, उठै तौ विचार करि;

---

१ भस्म । २ शरीर । ३ सावधान । ३ चिन्तवन । ५ ध्यानावस्था । ६ द्विविधा ।

चलै तौ विचार करि, सोई मत सार है ।
देई तौ विचार करि, लेई तौ विचार करि;
सुंदर विचार कर, याही निरधार है ॥२॥
एकही विचार करि, सुख दुःख सम[1] जानै;
एकही विचार करि, मल[2] सब धोई है ।
एकही विचार करि, संसार—समुद्र तरै;
एकही विचार करि, पारंगत होई है ॥
एकही विचार करि, बुद्धि नानाभाव तजै;
एकही विचार करि, दूसरो न कोई है ।
एकही विचार करि, सुंदर संदेह मिटै;
एकही विचार करि, एक ब्रह्म जोई है ॥३॥

इन्दव छन्द

रूपको नाश भयो कछु देखिये, रूप अरूपही माहिं समावै ।
रूपके मध्य अखंडित[3] सो तौ कहूँ कछु जाय न आवै ॥
बीच अज्ञान भयो नवतत्त्वको, वेद पुराण सबै कोउ गावै ।
सोई विचार करै जब सुंदर, शोधत[4] ताहि कहूं नहिं पावै ॥४॥
भूमि सु तौ नहिं गंधकुं छाँड़त, नीर सु तौ रसते नहिं न्यारो ।
तेज सु तौ मिलि रूप रह्यो पुनि, वायु सपर्स[5] सदा सु पियारो ॥
व्योम[6] रु शब्द जुदे नहिं होवत, ऐसेहि अंतहकरण विचारो ।
ए नवतत्त्व मिले इन तत्त्वनि, सुंदर भिन्न स्वरूप हमारो ॥५॥
क्षीण रु पुष्ट शरीरको धर्म जु, शीतहु उष्ण[7] जरामृत[8] ठानै ॥
भूख—तृषा गुण प्राणकू व्यापत, शोक रु होत उभैमन आनै ॥
बुद्धि विचार करै निशि—वासर, चित्त चितै सु अहं[9] अभिमानै ।
सर्वको प्रेरक सर्वको साक्षि[10] जु,सुंदर आपकुँ न्यारोहि जानै॥६॥

---

१ बराबर। २ पाप। ३ निराकार। ४ ढूंढ़ना। ५ लगना। ६ आकाश। ७ गरम।
८ बुढ़ापा। ९ मैं। १० साखी।

एकही कूपते नीरहि सिंचत, ईख अफीमहि अंब अनारा ।
होत उहै जल स्वाद अनेकनि, मिष्ट कटूक[१] खटा अरु खारा ।।
त्यूंही उपाधि सँयोगते आतम, दीसत आहि मिल्यो सविकारा ।
काढ़ि लिये सु विवेक विचारसुं, सुंदर शुद्धस्वरूपहि न्यारा ।।७।।
रूप पराको न जानि परै कछु, ऊठत है जिहि मूलते छानी ।
नाभिविषे मिलि सप्त किये स्वर, पुर्ष संयोग पश्यंति[२] बखानी ।।
नाद संयोग हृदै पुनि कंठजु, मध्यम याहि विचारते जानी ।
अक्षर भेद मिलै मुखद्वारा सु, बोलत सुंदर बैखरि वानी ।।८।।
ज्यूं कोइ रोग भयो नरके घट, वैद्य कहै यह वायु विकारा ।
कोउ कहै ग्रह आइ लगै ताते, पुण्य किये कछु होइ उबारा ।।
कोउ कहै यह चूक परी कछु, देवनि दोष दियो निरधारा ।
तैसेहि सुंदर तंत्रनिके मत, भिन्नहि भिन्न कहै जु विचारा ।।९।।
जे विषयातम पूरि रहै तिनकू, रजनी महँ बादर छायो ।
कोउ मुमुक्षु किये गुरुदेव तु, निर्भययुक्त जु शब्द सुनायो ।।
बादर दूर भये उनके पुनि, तारनसूं रजु[३] सर्प दिखायो ।
सुंदर शूर प्रकाशतही भ्रम, दूर भयो रजुको[४] रजु पायो ।।१०।।
कर्म शुभाशुभ भी रजनी[५] पुनि, अर्ध तमोमय[६] अर्ध उजारी ।
भक्ति सु तौ यह है अरुणोदय,[७] अंत निशा दिन संधि विचारी ।।
ज्ञान सु भानु[८] उदै निशि वासर, वेद पुराण कहै जु पुकारी ।
सुंदर तीन प्रभाव[९] बखानत, यूं निहचै समुझै विधि सारी ।।११।।

मनहर छन्द

देहहीसो आप मानि, देहहीसो होइ रह्यो;
जड़ता अज्ञान तम, शूद्र सोइ जानिये ।
इंद्रिनके व्यापारनि, अत्यंत निपुण बुद्धि;

---

१ कड़ुवा । २ देखना । ३ जेवड़ी । ४ जेवड़ी । ५ रात्रि—निशा—यामिनी ।
६ अंधकारमय । ७ सूर्योदय । ८ सूर्य । ९ प्रताप ।

तम रज दुहुँ करि, वैश्यहु प्रमानिये ॥
अन्तहकरणमाहिं, अहंकार बुद्धि जाके;
रंजगुण वर्धमान, क्षत्री पहिंचानिये ।
सत्त्वगुण बुद्धि एक, आतमविचार जाके;
सुंदर कहत वही, ब्राह्मण बखानिये ॥१२॥
आतमाके विषे देह, आइकर नाश होइ;
आतम अखंड सदा, एकही रहतु है ।
जैसे साँप कंचुकीकूं,[1] लिये रहै कोउ दिन;
जीरन[2] उतारि करि, नूतन गहतु है ॥
जैसे द्रुमके पत्र, फूल फल आइ होत;
तिनके गयेते द्रुम, औरहु लहतु है ।
जैसे व्योममाहिं अभ्र,[3] होइके बिलाइ जात;
ऐसोहि विचार करि, सुंदर कहतु है ॥१३॥
खरीकी डलासूं अंक, लिखत विचारियत;
लिखत लिखत वही, डली घिसि जातु है ।
लेखो समुझ्यो है जब, समुझ परी है तब;
जोइ कछु सही भयो, सोई ठहरातु है ॥
दारुहीसु[4] दारु मथि, प्रगट पावक भयो;
वहै दारु जारी पुनि, पावक समातु है ।
तैसेही सुंदर बुद्धि, ब्रह्मको विचार करि;
करत करत वह, बुद्धिहू बिलात है ॥१४॥
आपकूं समुझि देखौ, आपही सकल माहिं;
आपहीमें सकल, जगत देखियतु है ।
जैसे व्योम व्यापक, अखंड परिपूरण है;
बादल अनेक नाना, रूप लेखियतु है ॥

---

१ केंचली । २ पुराना । ३ बादल । ४ लकड़ी ।

जैसे भूमि घट जल, तरंग पावक दीप;
वायुमें बबूरा[१] सोई, विश्व रेखियतु है ।
ऐसेही विचारत, विचारहु विलीन होइ;
सुंदरही सुंदर, रहत पेखियतु है ।।१५।।
देहको सँयोग पाइ, जीव ऐसो नाम भयो;
घटके संयोग मठा -काशही कहायो है ।
ईश्वर सकल हैं, विराटमें[२] विराजमान;
मठके संयोग मठा -काश नाम पायो है ।।
महाकाशमाँहि सब, घट मठ देखियत;
बाहिर भीतर एक, गगन[३] समायो है ।
तैसेही सुंदर ब्रह्म, ईश्वर अनेक जीव;
द्विविध उपाधि भेद, ग्रंथनमें गायो है ।।१६।।

प्रश्न

देह दुःख पावे किधौं ? इंद्रि दुःख पावै किधौं ?
प्राण दुःख पावे किधौं ? लहे न अहारकूं ?
मन दुःख पावे किधौं ? बुद्धि दुःख पावे किधौं ?
चित्त दुःख पावे किधौं ? दुःख अहंकारकूं ?
गुण दुःख पावे किधौं ? श्रोत्र दुःख पावैं किधौं ?
प्रकृति दुःख पावै किधौं ? पुरुष आधारकूं ?
सुंदर पूछत कछु, जानि न परत ताते;
कौन दुःख पावै गुरु, कहो या विचारकूं ।।१७।।

उत्तर

देहकूं तो दुःख नाहिं, देह पंचभूतनको;
इंद्रिनकूं दुःख नाहिं, दुःख नाहिं प्राणकूं ।।

---

१ बवंडर । २ भारी–ब्रह्मांड–परमेश्वर का रूप । ३ आकाश ।

मनहूकूं दुःख नाहिं, बुद्धिहूकूं दुःख नाहिं;
चित्तहूकूं दुःख नाहिं, नाहिं अभिमानकूं ।।
गुणनकूं दुःख नाहिं, श्रोत्रहूकूं दुःख नाहिं;
प्रकृतिकूं[1] दुःख नाहिं, दुःख न पुमानकूं ।
सुंदर विचारि ऐसे, शिष्यसूं कहत गुरु;
दुःख एक देखियत, बीचके अज्ञानकूं ।।१८।।
पृथिवि भाजन अंग, कनक कुण्ड पुनि;
जलहि तरंग दोउ, देखि करि मानिये ।
कारण कारज एतो, प्रगटही स्थूलरूप;
ताहिते नजरमाहिं, देखि करि आनिये ।।
पावक पवन व्योम, एतो नहिं देखियत;
दीपक बघूरा अभ्र, प्रत्यक् बखानिये ।
आतमा अरूप अति, सूक्षमते सूक्षम है;
सुंदर कारण ताते, देहमें न जानिये ।।१९।।
जैन मत उहे जिन, राजकूं न भूली जाय;
दान तप शील सत्य, भावनाते[2] तरिये ।
मन वच काय शुद्ध, दया सबसूं दयालु (रहै;)
दोषबुद्धि दूरी करि, दया उर धरिये ।।
बौध नाम तब जब, मनकी निरोध[3] होइ;
बोधके विचार शोध, आतमाको करिये ।
सुंदर कहत ऐसे, जीवतही मुक्ति होइ;
मुएते मुकति कहै, ताकूं परिहरिये ।।२०।।
देह बोर देखिये तौ, देह पंचभूतनको;
ब्रह्मा अरु कीट लग, देहही प्रधान[4] है ।
प्राण वोर देखिये तौ, प्राण सबहीके एक;

---

१ शरीर—पुरुष । २ इच्छा—विचार । ३ रोकना । ४ मुख्य ।

क्षुधा पुनि तृषा दोऊ, व्यापत समान है ।।
मन वोर देखिये तौं, मनको स्वभाव[१] एक;
संकल्प विकल्प करै, सदाही अज्ञान है ।
आतम विचार किये, आतमाही दीसै एक,
सुंदर कहत कोऊ, देखिये न आन है ।।२१।।

इति विचारको अंग संपूर्ण ।।२२।।

अथ सांख्यज्ञानको अंग २३.

मनहर छन्द

क्षिति[२] जल पावक, पवन नभ[३] मिलि करि;
शब्द अरु सपरस, रूप रस गंध जू ।
श्रोत्र त्वक[४] चक्षु[५] घ्राण[६], रसना[७] रसको ज्ञान;
वाक[८] पाणि[९] पाद पायु,[१०] उपस्थहि[११] बंध जू ।।
मन बुद्धि चित्त अहंकार, ये चौबीस तत्त्व;
पञ्चविंश जीवतत्त्व, करत है द्वंद्व जू ।
षटविंश जागु ब्रह्म, सुंदर सु निहकर्म;
व्यापक अखंड एक, रस निरसंध जू ।।१।।
श्रोत्र दिग त्वक वायु, लोचन प्रकाश रवि;
नासिका अश्विनी जिह्वा, वरुण बखानिये ।
वाक अग्नि हस्त इन्द्र, चरण उपेंद्र बल;
मेढ्र प्रजापति गुदा, मृत्युहूकूं ठानिये ।।
मन चंद्र बुद्धि विधि, चित्त वासुदेव आहि;
अहंकार रुद्रको, प्रभाव करि मानिये ।
जाकी सत्ता पाइ सब, देवता प्रकाशत है;
सुंदर सो आतमाहिं, न्यारो करि जानिये ।।२।।

---

१ प्रवृत्ति—निवृत्ति । २ पृथ्वी । ३ आकाश । ४ त्वचा । ५ नेत्र । ६ नासिका । ७ जिह्वा । ८ वाणी । ९ हाथ । १० गुदा । ११ गुप्तेन्द्रिय ।

इन्दव छन्द

श्रोत्र सुनैं दृग देखत हैं रसना, रस घ्राण सुगंध पियारो ।
कोमलता त्वक जानत है पुनि, बोलत है मुख शब्द उचारो ।।
पाणि[1] ग्रहै पद गौन करें मल, मूत्र तजै उभयो[2] अध—द्वारो ।
जासु प्रकाश प्रकाशत हैं सब, सुंदर सोइ रहै घट न्यारो ।।३।।
बुद्धि भ्रमैं मन चित्त भ्रमैं, अहंकार भ्रमैं कछु जानत नाहीं ।
श्रोत्र भ्रमैं त्वक घ्राण भ्रमैं, रसना दृग देखि दशोदिश जाहीं ।।
वाक भ्रमैं कर पाद भ्रमैं, गुदद्वार उपस्थ भ्रमैं कहु काहीं ।
तेरे भ्रमाये भ्रमैं सबही पुनि, सुंदर क्यूं तु भ्रमैं उनमाहीं ।।४।।
बुद्धिको बुद्धि रु चित्तको चित्त, अहंको अहं मनको मन वोई ।
नैनको नैनहि बैनको बैनहि, कानको कान त्वचा त्वक होई ।।
घ्राणको घ्राणहि जीभको जीभहि, हाथको हाथ पगौ पग दोई ।
शीशको शीशहि प्राणको प्राणहि,जीवको जीवहि सुंदर सोई।।५।

मनहर छन्द

कैसेके जगत यह, रच्यो है जगतगुरु;
मोसूं कहा प्रथमहि, कौन तत्त्व कीनो है ?
पुरुष कि प्रकृति कि, महतत्त्व अहंकार;
किधौं उपजाय तम, रज—सत्त्व तीनों हैं ?
किधौं व्योम वायु तेज, आप कै अवनि कीन्ह ,
किधौं पंचविषय पसार, करि लीनों है ?
किधौं दश इन्द्री किधौं, अंतःकरण कीन्ह;
सुंदर कहत किधौं, सकल विहीनो[3] है ।।६।।

उत्तर

ब्रह्मते पुरुष अरु, प्रकृति प्रगट भई,

---

१ हाथ । २ दोनों । ३ बिना-रहित ।

प्रकृतिते महतत्त्व, पुनि अहंकार है ।।
अहंकारहुते तीन,—गुण सत्त्व रज तम,
तमहूते महाभूत, विषय पसार है ।
रजहूते इन्द्री दश, पृथक् पृथक् भइ;
सत्त्वहूते मन आदि, देवता विचार है ।।
ऐसे अनुक्रम[1] करि, शिष्यसूँ कहत गुरु;
सुंदर सकल यह, मिथ्या भ्रम—जाल है ।।७।।

प्रश्न

मेरो रूप भूमि है कि ? मेरो रूप आप है कि ?
मेरो रूप तेज है कि ? मेरो रूप पौन है ।
मेरो रूप व्योम है कि ? मेरो रूप इन्द्री दश ?
अन्तःकरण है कि ? बैठी है कि गौन[2] है ?
मेरो रूप त्रिगुण कि ? अहंकार महतत्त्व ?
प्रकृतिपुरुष किधौं ? बोले है कि मौन है ?
मेरो रूप स्थूल है कि ? सूक्ष्म है मेरो रूप ?
सुंदर पूछत गुरु, मेरो रूप कौन है ।।८।।

उत्तर

तू तौ कछु भूमि नाहिं, आप तेज वायु नाहिं;
व्योम पंच विषै नाहिं, सो तौ भ्रमकूप है ।
तू तौ कछु इन्द्रिय रु, अन्तःकरण नाहिं;
तीन गुण तू तो नाहिं, न तौ छाहिं धूप है ।।
तू तौ अहंकार नाहिं, पुनि महतत्व नाहिं;
प्रकृति पुरुष नाहिं, तू तौ स्वअनूप है ।
सुंदर विचार ऐसे शिष्यसूं कहत गुरु;
नाहिं नाहिं कहत रहैं, सोई तेरो रूप है ।।९।।

---

१ क्रम क्रम से-रीतिवार । २ चलता ।

तेरो तौ स्वरूप है, अनूप चिदानंद घन;
देह तौ मलीन जड़, या विवेक कीजिये ।
तू तौ निहसंग निराकार, अविनाशी अज;
देह तौ विनाशवंत, ताहि नाहिं धीजिये ।।
तू तौ षट उरमी रहित, सदा एक रस;
देहकी विकार सब देह शिर दीजिये ।
सुंदर कहत यूं विचारि, आपु भिन्न जानि;
परकी उपाधि कहा, आप खैंच लीजिये ।।१०।।
देहही नरकरूप, दु:खको न वारापार;
देहही है स्वर्गरूप, झूठो सुख मान्यो है ।
देहहीकूं बंध—मोक्ष, देह अपरोक्ष[1] प्रोक्ष;[2]
देहहीके क्रिया कर्म, शुभाशुभ ठान्यो है ।।
देहहीमें और देह, सुखी ह्वै विलास करै;
वाहीकूं समझे विना, आतमा बखान्यो है ।
दोउ देहते अलिप्त,[3] दोउको प्रकाशक है;
सुंदर चैतन्य रूप, न्यारो करि जान्यो है ।।११।।
देह हलै देह चलै, देहहीसूं देह मिलै;
देह खाई देह पीवै, देहही मरत है ।
देहही हिमालय गलै, देहही पावक जलै;
देह रणमाहिं जूझै, देहही परत है ।।
देहही अनेक कर्म, करत विविध भांति;
चमककी सत्ता पाइ, लोह ज्यूं फिरत है ।
आतमा चैतन्यरूप, व्यापक साक्षी[4] अनूप;
सुंदर कहत सो तौ, जन्मैं न मरत है ।।१२।।

---

१ प्रत्यक्ष—सामने । २ गुप्त—अप्रत्यक्ष । ३ अलग । ४ साखी ।

प्रश्नोत्तर

देह यह किनको हैं ? देह पंचभूतनको;
पंचभूत कौनते हैं ? तामस हंकारतें ।
अहंकार कौनते हैं ? जासू महतत्व कहैं,
महतत्त्व कौनते हैं ? प्रकृति मँझारतें ॥
प्रकृति सो कौनतें ? पुरुष है जाको नाम;
पुरुष सो कौनतें हैं ? ब्रह्म निराधारतें ।
ब्रह्म अब जान्यो हम ? जान्यो है तौ निश्चैकर;[1]
निश्चै हम कियो है तौ ? चुप मुखद्वारतें ॥१३॥

पूर्ववत् मनहर छन्द

एक घट माँहिं तौ, सुगंध जल भरि राख्यो;
एक घट माँहिं तौ, दुर्गंध जल भरचो है ।
एक घट माँहिं पुनि, गंगोदक[2] राख्यो आनि;
एक घटमाँहिं आनि, मदिराहू करचो है ॥
एक घृत एक तेल, एकमाँहिं नवनीत;
सबहीमें सविताको,[3] प्रतिबिंब परचो है ।
तैसेही सुंदर ऊंच, नीच मध्य एक ब्रह्म;
देह भेद देखि भिन्न-भिन्न नाम धरचो है ॥१४॥
भूमिपर अप,[4] अपहूके परे पावक है;
पावकके परे पुनि, वायुहू बहत है ।
वायू परे व्योम व्योम,—हूके परे इंद्री दश;
इंद्रियनके परे, अंतःकरण रहत है ॥
अंतहकरण पर, तीनों गुण अहंकार;
अहंकार पर, महत्तत्वकूं लहत है ।

---

१ विश्वासकर । २ गंगाजी का जल । ३ सूर्य । ४ पानी ।

महत्तत्व पर मूलमाया-माया पर ब्रह्म;
ताहिते परातपर, सुंदर कहत है ॥१५॥
भूमि तौ विलीन[१] गंध, गंध तो विलीन अप;
अपहू विलीन रस, रस तेज खात है।
तेज रूप रूप वायु, वायुही सुपर्स लीन;
सो परम व्योम शब्द, तमही बिलात है॥
इन्द्री दश रज मन, देवता विलीन सत्त्व;
तीनगुण अहं महत्तत्व, गलि जात है।
महत्तत्व प्रकृति[२] रु, प्रकृति पुरुष लीन;
सुंदर पुरुष जाइ, ब्रह्ममें समात है ॥१६॥
आतमा अचल शुद्ध, एकरस रहै सदा;
देह व्यवहारनमें, देहहीसों जानिये।
जैसे शशिमंडल[३] अभंग,[४] नहिं भंग होइ;
कला आवे जाइ घट, बढ़ सौ बखानिये॥
जैसे द्रुम स्थिर नदीके, तट देखियत;
नदीके प्रवाह[५] माँहिं, चलत सो मानिये।
तैसे आतमा अनंत, देहसों प्रकाश करै;
सुंदर कहत यूं, विचारि भ्रम मानिये ॥१७॥
आतमा शरीर दोऊ, एकमेक देखियत;
जबलगि अन्तहकरण में, अज्ञान है।
जैसे अँधियारी रैन, घरमें अँधेरो होय;
(जैसे)आँखिन को तेज ज्यूको, त्यूंही विद्यमान[६] है।
यद्यपि अँधेरे माँहिं, नैनसूं न सूझै कछु;
तदपि अँधेरे सूं अलेप,[७] सो बखान है।
सुंदर कहत तौलौं, एकमेक जानियत;

---

१ मिला हुआ। २ माया। ३ चन्द्रमण्डल। ४ अटूट। ५ धारा। ६ मौजूद। ७ जिसे तीनों गुण न व्यापैं।

जौलौं नहिं प्रगट, प्रकाश ज्ञानभान है ।।१८।।
देहजड़ देवलमें, आतम चेतनदेव;
याहीकूं समुझि करि, यासूं मन लाइये ।
देवलकूं विनशत,[१] बेर नहिं लागै कछु;
देव अभंग सदा, देवलमें पाइये ।।
देवकी शकति[२] करि, देवलकी पूजा होत,
भोजन विविध भाँति, भोगहू लगाइये ।
देवलते न्यारो देव, देवलमें देखियत;
सुंदर विराजमान, और कहां जाइये ।।१९।।
प्रीतिसी न पाती कोऊ, प्रेमसे न फूल और;
चित्तसो न चंदन, सनेह सो न सेहरा ।
हृदै सो न आसन, सहजसो न सिंहासन;
भावसो न सेज और शून्यसो[३] न गेहरा ।।
शीलसो न स्नान अरु, ध्यानसो न धूप और;
ज्ञानसो[४] न दीपक, अज्ञान तम केहरा ।
मनसी न माला कोऊ, सोहं सो न जाप और;
आतमा सो देव नाहिं, देहसो न देहरा ।।२०।।
श्वासोच्छ्वास रातिदिन, सोहं सोहं होय जाय;
याही माला वारंवार, दृढके धरतु है ।
देह परे इंद्रि परे, अंतहकरण परे;
एकही अखंड जाप, तापकूं[५] हरतु है ।।
काष्ठकी रुद्राक्षकी रु, सूतहूकी माला और;
इनके बिराये कछु, कारज सरतु है ।
सुंदर कहत ताते, आतमा चैतन्यरूप;
आपको भजन सो तो, आपही करतु है ।।२१।।

---

१ नाश । २ शक्ति । ३ आकाश । ४ आत्मज्ञान । ५ पीड़ा ।

क्षीर नीर मिलै दोऊ, एकठेही होइ रहे;
नीर जैसे छाँड़ि हंस, क्षीरकूं गहतु है ।
कंचनमें और धातु, मिलि करि बनि परचो;
शुद्ध करि कंचन, सुनार ज्यूं लहतु है ॥
पावकहूं दारु[1] मध्य, दारुहूसो होइ रह्यो;
मथि करि काढ़ै वह, दारुकूं दहतु है ।
तैसेहि सुंदर मिल्यो, आतमा अनातमा जू,
भिन्न भिन्न[2] करै सो, तौ सांख्यही कहतु है ॥२२॥
अन्नमयकोश[3] सो तौ, पिंड है प्रगट यह;
प्राणमयकोश पंच,[4] वायू ही बखानिये ।
मनोमयकोश पञ्च, कर्म इंद्रि है प्रसिद्ध;
पंच ज्ञान इंद्रिय, विज्ञानमय जानिये ॥
जाग्रत[5] स्वपन विषे, कहिये चत्वार कोश;
सुषुपतिमाँहिं कोश, आनँदमें मानिये ।
पञ्चकोश आतमाको, जीव नाम कहियत;
सुंदर शंकर-भाष्य, सांख्य ये बखानिये ॥२३॥
जाग्रत—अवस्था जैसे, सदनमें बैठियत
तहाँ कछु होइ ताहि, भलीभाँति देखिये ।
स्वपन-अवस्था जैसे, देहरीमें बैठे जाइ;
रहै जोई वहाँ ताकी, वस्तु सब लेखिये ॥
सुषुपति[6] भोहरेमें,[7] बैठते न सूझ परै;
वहाँ अंधघोर तहाँ, कछुही न पेखिये ।
व्योम अनुस्यूत घर, देहरे भोहरे माँहिं;
सुंदर साक्षीस्वरूप, तुरिया[8] विशेषिये ॥२४॥

---

१ काष्ठ । २ अलग अलग । ३ पेट । ४ प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान ।
५ जागना । ६ किंचित् निद्रा । ७ भुइँघर । ८ चतुर्थ अवस्था ।

जाग्रतके विषे जीव, नैननमें देखियत;
विविध व्योहार सब, इंद्रिय गहतु है ।
स्वपनेहू माहिं पुनि, वैसेही व्योहार होत;
नैननते आइ करि, कण्ठमें रहतु है ।
सुषुपति हृदयमें, लीन होइ जात सब;
जाग्रत सुपनकी तौ, सुधि न लहतु है ।
तीनहू अवस्थाकूंही, साक्षी जब जानै आप;
तुरिया स्वरूप यह, सुंदर कहतु है ।।२५।।

इन्दव छन्द

भूमिते सूक्षम[1] आपकुँ जानहु, आपते सूक्षम तेजको अंगा ।
तेजसे सूक्षम वायु बहे नित, वायुते सूक्षम ब्योम उतंगा ।।
व्योमते सूक्षम है गुण तीन, तिहूँते अहं महतत्त्व प्रसंगा ।
ताहिते सूक्षम मूलप्रकृति जु, मूलते सुंदर ब्रह्म अभंगा ।।२६।।
ब्रह्म निरंतर व्यापक अग्नि, अरूप अखंडित है सबमाहीं ।
ईश्वर पावक राशि प्रचंड जु, संग उपाधि लिये वरताहीं ।।
जीव अनंत मशाल चिराग सु, दीप पतंग[2] अनेक दिखाहीं ।
सुंदर द्वैत उपाधि मिटै जब, ईश्वर जीव जुदे कछू नाहीं ।।२७।।
ज्यूं नर पावक लोह तपावत, पावक लौह मिले सु दिखाहीं ।
चोट अनेक परै घनकी शिर, लोह बधै कछु पावक नाहीं ।।
पावक लीन भयो अपने घर, शीतल लोह भयो तब ताहीं ।
त्यूं यह आतम देह निरंतर, सुंदर भिन्न रहै मिलि माहीं ।।२८।।
आतम चेतन शुद्ध निरंतर, भिन्न रहै कहुं लिप्त[3] न होई ।
है जड़ चेतन अंतहकर्ण जु, शुद्ध अशुद्ध लिये गुण दोई ।।
देह अशुद्ध मलीन महाजड, हालि न चालि सकै पुनि होई ।
सुंदर तीन विभाग किये बिन, भूलि परै भ्रमते सब कोई ।।२९।।

---

१ महीन । २ पाखी । ३ लीन ।

सवैया— (इकतीसमात्रिक)

ब्रह्म अरूप अरूपी पावक, व्यापक युगल न दीसत रंग ।
देह दारुते प्रकट देखियत, अंतःकरण अग्नि द्वय अंग ॥
तेज प्रकाश कल्पना तौ लगी, जौ लगी रहै उपाधि प्रसंग ।
जहँके तहाँ लीन पुनि होई, सुंदर दोई सदा अभंग ॥३०॥
देह शराव[१] तेल पुनि मारुत,[२] बाती अंतःकरण विचार ।
प्रगट ज्योति यह चेतन दीसे, जाते भयो सकल उजियार ॥
व्यापक अग्नि मथन करि जोए, दीपक बहुत भाँति विस्तार ।
सुंदर अद्‌भुत रचना तेरी, तूही एक अनेक प्रकार ॥३१॥
तिलमें तेल दूधमें घृत[३] है, दारुमाँहिं पावक पहिचान ।
पुहुपमाहीं[४] ज्यूं प्रगट वासना, ईखमाहिं रस कहत बखान ॥
पोसतिमाहिं[५] अफीम निरंतर, वनस्पतीमें शहद प्रमान ।
सुंदर भिन्न मिल्यो पुनि दीसत, देहमाहिं यूं आतम जान ॥३२॥

सवैया— (बत्तीसमात्रिक)

जाग्रत स्वप्न सुषुपति तीनूं, अंतःकरण अवस्था पावै ।
प्राण चलै जाग्रत अरु स्वप्न, सुषुपतिमें कछु वे न रहावै ॥
प्राण गयेते रहै न कोऊ, सकल देखते ठाड बिलावैं ।
सुंदर आतमतत्त्व निरंतर, सो तौ कितहू जाय न आवै ॥३३॥

सवैया— (इकतीसमात्रिक)

पद्रहतत्त्व स्थूल कुंभमें[६] सूक्ष्म, लिंग भरचो ज्यूं तोय[७] ।
इहाँ जीव आभास जानु उत, ब्रह्म इंद्र प्रतिबिंब जु दोय ॥
घट फूटे जल गयो विलय ह्वै; अंतःकरण कहै नहिं कोय ।
तब प्रतिबिंब[८] मिलै शशिही महँ,सुंदर जीव ब्रह्ममय होय॥३४॥

---

१ दीया। २ पवन। ३ घी। ४ पुष्प। ५ पोस्तका दाना। ६ भारी घड़ा। ७ जल।
८ परछाईं।

मनहर छन्द

जैसे व्योम कुंभके, बाहिर रु भीतर है,
कोऊ नर कुंभकूं, हजार कोश ले गयो ।
ज्यूं व्योम इहाँ त्यूंही, उहाँ पुनि है अखंड;
इहाँ न विछोह, न उहाँ मिलापके भयो ।।
कुँभ तौ नयो पुरानौ, होईके विनशि जाइ;
व्योम तौ न है पुरानौ, न तौ कछू है नयो ।
तैसेही सुंदर देह, आवे रहै नाश होइ;
आतमा अचल, अविनाशी है अनामयो[1] ।।३५।।
देहके सँयोगहिते, शीत लगे घाम लगे;
देहके सँयोगहिते, क्षुधा तृषा पौनकूं ।
देहके संयोगहिते, कटुक[2] मधुर स्वाद;
देहके सँयोग कहै, खोटो खारो लौनकूं ।।
देहके सँयोग कहै, मुखते अनेक बात;
देहके संयोगही, पकरि रहै मौनकूं ।
सुंदर देहके योग, दुःख मानै सुख मानै;
देहको सँयोग गये, दुःख सुख कौनकूं ।।३६।।
आपकी प्रशंसा सुनि, आपही खुशाल होई;
आपही की निंदा सुनि, आप मुरझाई है ।
आपहीकूं सुख मानि, आप सुख पावत है;
आपहीकूं दुःख मानि, आप दुःख पाई है ।।
आपहीकी रक्षा करै, आपहीकी घात करै;
आपही हत्यारो होइ, गंगा जाइ न्हाई है ।
सुंदर कहत ऐसे, देहहीकूं आप मानि;
निजरूप भूलिके, करत हाई हाई है ।।३७।।

इति सांख्यज्ञानको अंग संपूर्ण ।।२३।।

---

१ रोगरहित । २ कडुवा ।

अथ अपने भावको अंग २४.

इन्दव छन्द

एकहि आपनु भाव जहाँ तहँ, बुद्धिके योगते विभ्रम भासै ।
जो यह क्रूर तु क्रूर वही पुनि, याके खसेते वहाँ पुनि खासै ।।
जो यह साधु तु साधु वहै पुनि, याके हँसेते उहां पुनि हाँसै ।
जैसेहि आप करै मुख सुंदर, तैसेहि दर्पण माँहिं प्रकाशै ।।१।।

मनहर छन्द

जैसे श्वान काचके, सदन[1] मध्य देखि और;
भूँकि भूँकि मरत, करत अभिमान[2] जू ।
जैसे गज फटिक, शिलासूं लरि तोरै दंत;
जैसे सिंह कूपमाहिं, उझक भुलान जू ।।
जैसे कोउ फेरि खात, फिरत सु देखैं जग;
तैसेही सुंदर सब, तेरोही अज्ञान जू ।
अपनोही भ्रम सो तौ, दूसरो दिखाई देत;
आपकूं विचारे कोऊ, देखिये न आन जू ।।२।।
नीच ऊंच भलो बुरो, सज्जन दुर्जन पुनि;
पंडित मूरख शत्रु, मित्र रंक राव है ।
मान अपमान पुण्य, पाप सुख दु:ख सोऊ;
स्वरग नरक बंध, मोक्षहूको चाव है ।।
देवता असुर भूत, प्रेत कीट[3] कुंजरहु;[4]
पशु अरु पक्षी श्वान,[5] शूकर बिलाव है ।
सुंदर कहत यह, एकही अनेक रूप;
जोई कछु देखिये सो, अपनोहि भाव है ।।३।।

---

१ घर के भीतर । २ अहंकार । ३ कीड़ा । ४ नाग हाथी धारण । ५ कुत्ता ।

याहीके जागत काम, याहीके जागत क्रोध;
याहीके जागत लोभ, येही मोह माता है ।
याहीको तौ याही वैरी, याहीको तौ याही मित्र;
याकूं याही सुख देत, याही दुःख दाता है ।।
याही ब्रह्मा याही रुद्र, याही विष्णु देखियत;
याही देव दैत्य यक्ष, सकल संघाता है ।
याहीके प्रभावसौं[१] तौ, याहीकूं दिखाइ देत;
सुंदर कहत येही, आतमा विख्यात है ।।४।।
याहीको तौ भाव याकूं, शंक उपजावत[२] है;
याहीको तौ भाव याही, निःशंक करतु है ।
याहीको तौ भाव याकूं, भूत प्रेत होइ लगै;
याहीको तौ भाव[३] याही, कुमति[४] हरतु है ।।
याहीको तौ भाव याही, वायुको[५] बघूरा करै;
याहीको तौ भाव याही, थिरके धरतु है ।
याहीको तौ भाव याकूं, धारमें बहाइ देत;
सुंदर याहीको भाव, याहि ले तरतु है ।।५।।
आपहीको भाव, सो तौ, आपकूं प्रगट होत;
आपही आरोप करि, आप मन लायो है ।
देवी अन्य देव कोउ, भावकूं उपासै ताही;
कहे मैं तो पुत्र धन, इनहीते पायो है ।।
जैसे श्वान हाड़कूं, चचोरि करि मानै मोद;[६]
आपहीको मुख फोरि, लोहू चाटि खायो है ।
तैसेही सुंदर यह, आपुही चेतन आहि;
अपने अज्ञान करि, औरसूं बंधायो है ।।६।।

---

१ इसका फल । २ प्रकट । ३ मन की भावना—कामना । ४ दुष्ट बुद्धि । ५ पवन हवा—समीर । ६ प्रसन्नता ।

इन्दव छन्द

नीचते नीच रु ऊँचते ऊपर, आगेते आगे रु पीछेते पीछो ।
दूरते दूर नजीकते नेरेहु, आड़ेते आड़ोहि तीछेते तीछो ।।
बाहिर भीतर भीतर बाहिर, ज्यूं कोउ जानत त्यूं कर ईछो ।
जैसोहि आपनो भाव है सुंदर, तैसोहि है दृग खोलिके पीछो ।।७।।
आपने भावते सूरसों दीसत, आपने भावते चन्द्रसों भासै ।
आपने भावते तारे अनंत जु, आपने भावते बीज चकासै ।।
आपने भावते नूर है तेज है, आपने भावते ज्योति प्रकासै ।
तैसोहि ताहि दिखावत सुंदर,जैसोहि होत है जाहिको आसै।।८।।
आपने भावते सेवक साहिब, आपने भाव सबै कोउ ध्यावै ।
आपने भावते अन्य[1] उपासत, आपने भावते भक्तहु गावै ।।
आपने भावते दुष्ट संहारन, आपने भावते बाहिर आवै ।
जैसोहि आपनो भाव है सुंदर, ताहिकूं तैसोहि होइ दिखावै ।।९।।
आपने भावते दूर बतावत, आपने भाव नजीक बखान्यो ।
आपने भावते दूध पियावत, आपने भावते बीठल जान्यो ।।
आपने भावते चारभुजा पुनि, आपने भावते सिंहसो मान्यो ।
सुंदर आपने भावको कारण, आपहि पूरण ब्रह्म पिछान्यो ।।१०।।
आपने भावते होइ उदास जु, आपने भावते प्रेमसूं रोवै ।
आपने भाव मिल्यो पुनि जानत, आपने भावते अंतर[2] जोवै[3] ।।
आपने भाव रहे नित जाग्रत, आपने भाव समाधिमें सोवै ।
सुंदर जैसोहि भाव है आपनो,तैसोहि आप तहाँ तहाँ होवै।।११।।
आपने भावते भूलि परयो भ्रम, देहस्वरूप भयो अभिमानी ।
आपने भावते चंचलता अति, आपने भावते बुद्धि थिरानी ।।
आपने भावते आप बिसारत, आपने भावते आतमज्ञानी ।
सुंदर जैसोहि भाव है आपनो,तैसोहि होइ गयो यह प्रानी।।१२।।

इति अपने भावको अंग संपूर्ण ।।२४।।

---

१ दूसरा-आन । २ गुप्त । ३ देखना ।

अथ जगन्मिथ्याको अंग २५.

मनहर छन्द

किंयो न विचार कछु, भनक परी है कान;
धारि आई सुत करि, डरि विष खायो है ।
जैसे कोई अनछतो, ऐसेही बुलाइयत;
बार बीत गई पर, कोऊ नहीं आयो है ।।
वेदहु वरणिके जगत,[1] तरु ठाढ़ो कियो;
अंत पुनि वेद जर, मूलते उठायो है ।
तैसेही सुंदर याको, कोई एक पावै भेद;
जगतको नाम सुनि, जगत भुलायो है ।।१।।
ऐसोहि अज्ञान कोई, आयके प्रगट भयो;
दिव्य दृष्टि दूर गई, देखै चामदृष्टिकूं[2]।
जैसे एक आरसी, सदाही हाथमाहिं रहै;
सुमुख न देखै फेर, फेर देखै पृष्टिकूं[3] ।।
जैसे एक व्योम पुनि, बादरसूं झाइ रह्यो;
व्योम नहिं देखत, देखत बहु वृष्टिकूं[4] ।
तैसे एक ब्रह्महो, विराजमान सुंदर है;
ब्रह्मकूं न देखै कोऊ, देखै सब सृष्टिकूं[5] ।।२।।
अनछतो जगत, अज्ञानते प्रगट भयो;
जैसे कोई बालक, बैताल देखि डर्‍यो है ।
जैसे कोई स्वपनेमें, दाव्यो है ओथारे आइ;
मुखते न आवै बोल, ऐसे दुःख पर्‍यो है ।।
जैसे अँधियारी रैन, जेवरी न जानै ताहि;
आपहीते साँप मानि, भय अति कर्‍यो है ।

---

१ संसार रूपी वृक्ष । २ चर्मदृष्टि । ३ पीठ । ४ वर्षा । ५ रचना ।

तैसेही सुंदर एक, ज्ञानके प्रकाश बिनु;
आप दु:ख पाय आय, आप पचि मर्‍यो है ।।३।।
मृत्तिका समाइ रही, भाजनके रूपमाहिं;
मृत्तिकाको नाम मिट्टि, भाजनहि गह्यो है ।
कनक समाइ ज्यूंही, होइ रह्यो आभूषण;
कनक कहै न कोई, आभूषण कह्यो है ।।
बीजहू समाइ करि, वृक्ष होइ रह्यो पुनि;
वृक्षहीकूं देखियत, बीज नहिं लह्यो है ।
सुंदर कहत यह, यूंहि करि जान्यो सब;
ब्रह्महीं जगत होइ, ब्रह्म दूरि रह्यो है ।।४।।
कहत है देहमाहिं, जीव आइ मिलि रह्यो;
कहाँ देह कहाँ जीव, वृथा चूक पर्‍यो है ।
जेवरीको साँप मानि, सीपविषे रूपो जानि;
औरको औरहि देखि, यूंहि भ्रम कर्‍यो है ।।
सुंदर कहत कह, एकही अखण्ड ब्रह्म;
ऐसे नहिं जान यह, मृगजल[१] भर्‍यो है ।
बूड़िबैकै डरते, तरनको उपाव करै;
ताहिकूं पलटिके, जगत नाम धर्‍यो है ।।५।।

इति जगन्मिथ्याका अंग संपूर्ण ।।२५।।

अथ अद्वैतज्ञानको अंग २६.

इन्दव छन्द । प्रश्नोत्तर

हौ तुम कौन ? हुँ ब्रह्म अखंडित, देहमें क्यूं नहिं ? देहके नेरे ।
बोलत कैसे ? कहूँ नहिं बोलत, जानिये कैसे ? अज्ञान है तेरे ।।

---

१ मृगजल वह है कि, जब जेठ वैशाख के दिनों में दोपहर के समय सूर्य की प्रचण्ड किरणें अपारदर्शक वस्तु पर पड़कर नाचने लगती हैं और जलकी कांति प्रकट करती हैं ।

दूर करौ भ्रम निश्चय धारि, कहौ गुरुदेव कहूं नित टेरे ।
हौ तुम ऐसे तुहूं पुनि ऐसेहि, दोइ नहीं नहिं, द्वैतहि मेरे ।।१।।

बोधोक्ति

हूं कछु और कि तू कछु और कि, ये कछु और कि सो कछु औरे ।
हूं अरु तू यह है कछु सो नहिं, बुद्धिविलास भयो झक झोरे ।।
हूं नहिं तू नहिं है कछु सो नहिं, बूझ विना जितही तित दौरे ।
हूं पुनि तू पुनि है कछु सो पुनि, सुंदर व्यापि रह्यो सब ठौरे ।।२।।
उत्तम मध्यम और शुभाशुभ,[1] भेद अभेद जहां लग जोहै ।
दीसत भिन्न तवो अरु दर्पण[2], वस्तु विचारत एकहि लोहै ।।
जो सुनिये अरु दृष्टि परै कछु, वा विन और कहूं अब को है ।
सुंदर सुंदर व्यापि रह्यो सब, सुंदरमें पुनि सुंदर सो है ।।३।।
ज्यूं वन एक अनेक भये द्रुम, नाम अनंतनि जातिहु न्यारी ।
वापि तडाग रु कूप नदी सब, है जल एक सु देखु निहारी ।।
पावक एक प्रकाश बहूविधि, दीप चिराग मसालहु बारी ।
सुंदर ब्रह्म विलास अखंडित, भेद अभेद कि बुद्धि सु टारी ।।४।।
एक शरीरमें अंग भये बहु, एक धरापर[3] धाम[4] अनेका ।
एक शिलामहँ[5] कोर किये सब, चित्र बनाई धरे इकठेका ।।
एक समुद्र तरंग अनेकहु, कैसे जु कीजिये भिन्न विवेका ।
द्वैत कछू नहिं देखिय सुंदर, ब्रह्म अखंडित एकको एका ।।५।।
ज्यूं मृतिका घट नीर तरंगहि, तेज मसाल किये जु बहूता ।
वाय बघूरानि गाँठ परी बहु, बादल व्योमसु व्योम जु भूता ।
वृक्ष सु बीजहि बीज सु वृक्षहि, पूत सु बापहि बाप सु पूता ।
वस्तु विचारत एकहि सुंदर, तान[6] रु वान तु देखिय सूता[7] ।।६।।
भूमिहु चेतन आपहु चेतन, तेजहु चेतन है जु प्रचण्डा ।

---

१ मंगल अमङ्गल । २ आरसी । ३ पृथ्वी । ४ घर । ५ पत्थर । ६ तानाभरना । ७ सूत ।

वायुहि चेतन व्योमहु चेतन, शब्दहु चेतन पिंड ब्रह्मंडा ॥
है मन चेतन बुद्धिहु चेतन, चित्तहु चेतन आहि उदंडा[१] ।
जो कछु नाम धरै सुहि चेतन, चेतन सुंदर ब्रह्म अखंडा ॥७॥
एक अखंडित ब्रह्म विराजित, नाम जुदो करि विश्व कहावै ।
एकही ग्रंथ पुराण बखानत, एकहि दत्त वरिष्ठ सुनावै ॥
एकहि अर्जुन उद्धवसूं कहि, कृष्ण कृपा करिके समुझावै ।
सुंदर द्वैत[२] कछू मति जानहु, एकहि व्यापक वेद बतावै ॥८॥

मनहर छन्द । प्रश्नोत्तर

शिष्य पूछैं गुरुदेव, गुरु कहै पूछै शिष्य;
मेरे एक संशय है, क्यूं न पूछै अबही ।
तुम कहो एक ब्रह्म, अजहूं मैं कहूं एक;
एकता अनेकताको, यह भ्रम सबही ॥
भ्रम यह कौनकूं है, भ्रमहिकुं भ्रम भयो;
भ्रमहिकूं भ्रम कैसे, तू न जानै कबही ।
कैसे करि जानूं प्रभु, गुरु कहै निश्चै धरि;
निश्चै ऐसे जान्यो अब, एक ब्रह्म तबही ॥९॥

बोधोक्ति

ब्रह्म है ठौरको ठौर, दूसरो न कोउ और;
वस्तुको विचार किये, वस्तु पहिचानिये ।
पंचतत्त्व[३] तीन गुण, विस्तरे विविध[४] भाँति;
नाम रूप जहाँ लगि, मिथ्या माया मानिये ।
शेषनाग आदि देके, वैकुंठ गोलोक पुनि;
वचन विलास[५] सब, भेद भ्रम मानिये ।
न तौ कछु उरझ्यो[६] न सुरझ्यो कहूं सो कौन;

---

१ प्रबल। २ द्विविध। ३ आग, पानी, वायु, आकाश, पृथ्वी पञ्चतत्त्व है। ४ अनेक। ५ केलि—विनोद। ६ लिपटन।

सुंदर सकल यह, उहावाही जानिये ॥१०॥
प्रथमहि देहमेंते, बाहिरकूं चूंकि[१] पर्‍यो ;
इंद्रिय व्यापार[२] सुख, सत्य करि जान्यो है ।
कोउक संयोग पाइ, सद्‌गुरुसूं[३] भेंट भई ;
उन उपदेश देके, भीतरकूं आन्यो है ॥
भीतरके आवतहि, बुद्धिको प्रकाश भयो ;
कौन देह कौन मैं, जगत किन मान्यो है ।
सुंदर विचारत यूं, उपजै अद्वैत[४] ज्ञान ;
आपकूं अखंड ब्रह्म, एक पहिचान्यो है ॥११॥

हँसाल छन्द

सकल संसार विस्तार[५] करि वरणियो, स्वर्गपाताल मृत[६] ब्रह्महीे है ।
एकते गिनतही गिनिय जो सौ लगे, फेरि करि एकको एक ही है ॥
ये नहीं ये नहीं रहै अवशेष[७] सौ, अंतही वेदने यूं कही है ।
कहत सुंदर सही अपनपो जानु जब, आपनै आपमें आपही है ॥१२॥
एक तू दोय तू तीन तू चार तू पांच तू तत्त्वते जगत कीयो ।
नामअरु रूप ह्वै बहुत विधि विस्तर्‍यो, तुम बिना औरको नाहिं बीयो ॥
राव तू रंक तू दीन तू दानि[८] तू, दोइ करि मेलते लीय दीयो ।
सकलही एह तुव माहिं उपजै [९]खपै,कहत सुंदर बड़ो [१०]विपुल हीयो॥१३॥

मनहर छन्द

तोहि में जगत यह, तूहि है जगतमाहिं ;
तोमें अरु जगतमें, भिन्नता कहां रही ।
भूमिहीते भाजन अनेक, विधि नाम रूप,
भाजन[११] विचारि देखे, उहै एकहो मही[१२] ॥

---

१ भूल । २ काया । ३ सच्चागुरु । ४ एकता । ५ फैलाव । ६ मृतलोक । ७ बाकी ।
८ दाता । ९ पचना, नष्ट होना । १० अधिक । ११ बर्तन-पात्र ।
१२ पृथ्वी-धरती-सुवर्ण ।

जलते तरंग[1] फेन, बुद्बुद अनेक भाँति;
सोउ तौ विचारे एक, बहै जल है सही।
जेते महापुरुष है, सबको सिद्धांत एक;
सुंदर अखिल[2] ब्रह्म, अंत वेद ये कही ॥१४॥
जैसे ईख रसकी मिठाई, भाँति भाँति भई;
फेरि करि गारे इक्षु, रसही लहतु है।
जैसे घृत थीजके, डरासो बांधि जात पुनि;
फेरि पिघलेते वह, घृतही रहतु है ॥
जैसे पानी जमिके, पषाण हू सो देखियत;
सो पषाण फेरि पानी, होयके बहतु है।
तैसेही सुंदर यह, जगत है ब्रह्ममय;
ब्रह्म सो जगतमय, वेद सु कहतु है ॥१५॥
जैसे काट कोरि तामें, पूतरी बनाय राखी;
सो विचारि देखिये तौ, उहै एक दार है।
जैसे माला सूतहूकी, मणिकाहू सूतहिके;
भीतरहू पायो पुनि, सूतहीको तार है।
जैसे एक समुद्रके, जलहीको लौण भयो;
सोउ तो विचारे पुनि, उहै जल खार है।
तैसेही सुंदर यह, जगत सो ब्रह्ममय;
ब्रह्म सो जगतमय, याही निरधार है ॥१६॥
जैसे एक लोहके, हथ्यार नाना विधि किये;
आदि मध्य अंत एक, लोहही प्रमानिये।
जैसे एक कंचनमें,[3] भूषण अनेक भये;
आदि मध्य अंत एक, कंचनही जानियें ॥
जैसे एक मेनके, सवारे नर होय यह;

---

१ लहर। २ संपूर्ण ब्रह्मांड। ३ सुवर्ण।

आदि अंत मध्य एक, मेनही बखानिये ।
तैसेही सुंदर यह, जगत सो ब्रह्ममय;
ब्रह्म सो जगतमय, निश्चै करि मानिये ।।१७।।
ब्रह्ममें जगत यह, ऐसी विधि देखियत;
जैसी विधि देखियत, फूलरी महीरमें ।
जैसी विधि गिलिम, दुलीचेमें अनेक भाँति;
जैसी विधि देखियत, चूनरीहू चीरमें ।।
जैसी विधि कांगरेहु, कोट पर देखियत;
जैसी विधि देखियत, बुदबुदा नीरमें ।
सुंदर कहत लीक, हाथ परी देखियत;
जैसी विधि देखियत, शीतल शरीरमें ।।१८।।
ब्रह्म अरु माया जैसे, शिव अरु शक्ति पुनि;
पुरुष प्रकृति दोऊ, कहिके सुनाये हैं ।
पति अरु पतनी,[1] ईश्वर अरु ईश्वरीहु;[2]
नारायण लक्ष्मी द्वे, वचन कहाये हैं ।
जैसे कोई अर्धनारी, नटेश्वर रूप धरै;
एक बीजहूते दोऊ, दाली नाम पाये हैं ।
तैसेही सुंदर वस्तु, ज्यूं है त्यूंही एकरस;
उभय प्रकार होई, आपही दिखाये हैं ।।१९।।

इन्दव छन्द

ब्रह्म निरीह[3] निरामय[4] निर्गुण, नित्य निरंजन और न भासै ।
ब्रह्म अखंडित है अध ऊरध, बाहिर भीतर ब्रह्म प्रकासै ।।
ब्रह्महि सूक्षम स्थूल जहाँ लगि, ब्रह्महि साहिब ब्रह्महीं दासै ।
सुंदर और कछू मत जानहु, ब्रह्महि देखत ब्रह्म तमासै ।।२०।।
ब्रह्महि माहिं विराजत ब्रह्महि, ब्रह्मविना जनि औरही जानौ ।

---

१ स्त्री । २ लक्ष्मी । ३ चेष्टा रहित । ४ रोगरहित ।

ब्रह्महि कुंजर[1] कीटहु ब्रह्महि, ब्रह्महि रंक रु ब्रह्महि रानौ ॥
कालहि ब्रह्म स्वभावहु ब्रह्महि, कर्महु जीवहु ब्रह्म बखानौ ।
सुंदर ब्रह्मविना कछु नाहिं न ब्रह्महि जानिसबै भ्रम भानौं ॥२१॥
आदिहुतो सुहि अंतहि है पुनि, मध्य कहा कछु और कहावै ।
कारण कारज नाम धरै पुनि, कारज कारणमाहिं समावै ॥
कारज देखि भयो बिच विभ्रम, कारण देखि विभर्म[2] समावै ।
सुंदर निश्चय ये अभि अंतर, द्वैत गये फिर द्वैत न आवै ॥२२॥

मनहर छन्द

द्वैत करि देखै जब, द्वैतही दिखाई देत;
एक करि देखै तब, उहै एक अंग है ।
सूरजकूं देखै जब, सूरज प्रकाशि रह्यो;
किरणकूं देखै तौ, किरण नाना रंग है ॥
भ्रम जब भयो तब, माया ऐसी नाम धरचो;
भ्रमके गयेते एक, ब्रह्म सरवंग है ।
सुंदर कहत याकी, दृष्टिहूको फेर भयो;
ब्रह्म अरु मायाके तौ माथे नहिं शृंग है ॥२३॥
श्रोत्र कछु और नाहिं, नेत्र कछु और नाहिं;
नासा कछु और नाहिं, रसना न और है ।
त्वक[3] कछु और नाहिं, वाक[4] कछु और नाहिं;
हाथ कछु और नाहिं, पाँवनकी दौर है ॥
मन कछु और नाहिं, बुद्धि कछु और नाहिं;
चित्त कछु और नाहिं, अहंकार तीर है ।
सुंदर कहत एक, ब्रह्म विना और नाहिं;
आपहिमें आप व्यापि, रह्यो सब ठौर है ॥२४॥

इति अद्वैतज्ञानका अंगसंपूर्ण ॥२६॥

---

१ हाथी । २ संदेह । ३ खाल । ४ वाणी ।

अथ ब्रह्म निष्कलङ्कको अंग २७.

मनहर छन्द

एक कोउ दाता गउ, ब्राह्मणकूं देत दान;
एक कोउ दयाहीन, मारत निशंक है ।
एक कोउ तपस्वी, तपस्यामाहिं सावधान;
एक कोउ काम क्रीडा, कामिनीको अंग है ।।
एक कोउ रूपवंत, अधिक विराजमान;
एक कोउ कोढ़ि कोढ़, चुवत करंक[1] है ।
आरसीमें प्रतिबिंब, सबहीको देखियत;
सुंदर कहत ऐसे, ब्रह्म निष्कलंक है ।।१।।
रविके प्रकाशते, प्रकाश होत नेत्रनको;
सब कोउ शुभाशुभ, कर्मकूं करतु है ।
कोउ यज्ञ दान तप, जप नेम व्रत कोउ;
इंद्रिवशकरि कोउ, ध्यानकूं धरतु है ।।
कोउ परदारा, परधनकूं तकत जाइ;
कोउ हिंसा करि करि, उदर भरतु है ।
सुंदर कहत ब्रह्म, साक्षीरूप एकरस;
याहीमें उपजि करि, याहीमें मरतु है ।।२।।
जैसे जलजंतु जलहीमें, उतपन्न होय;
जलहीमें विचरत, जलके आधार है ।
जलहीमें क्रीडा करि, विविध व्योहार होत;
काम क्रोध लोभ मोह, जलमें संहार है ।।
जलकूं न लागै कछु, जीवनके राग द्वेष;
उनहीके क्रिया कर्म, उनहीके लार है ।
तैसेही सुंदर यह, ब्रह्ममें जगत सब;

---

१ मज्जा-पीव ।

ब्रह्मकूं न लागे कछु, जगत विकार है ।।३।।
स्वेदज[1] जरायुज[2] अंडज,[3] उदभिज्ज[4] पुनि;
चार खानि तिनके, चौरासीलक्ष जंत हैं ।
जलचर थलचर, व्योमचर भिन्न भिन्न;
देह पञ्च भूतनकी, उपजि खपंत हैं ।।
शीत घाम पवन, गगनमें चलत आइ;
गगन अलिप्त जामें, मेघहू अनंत हैं ।
तैसेही सुंदर यह, सृष्टि सब ब्रह्ममाहिं;
ब्रह्म निष्कलंक सदा, जानत महंत हैं ।।४।।

इति ब्रह्म निष्कलंकको अंग संपूर्ण ।।२७।।

अथ शूरातनको अंग २८.

मनहर छन्द

सुनत नगारे चोट, विकसै[5] कमल मुख;
अधिक उछाह[6] फूल्यो, मायहू[7] न तनमें ।
फरै जब सांग[8] तब, कोई नहिं धीर धरै;
कायर[9] कंपायमान, होत देखि मनमें ।।
कूदके पतंग[10] जैसे, परत पावकमाहिं,[11]
ऐसे टूटि परै बहु, सांवतके घनमें ।
मारि घमसान[12] करि, सुंदर जुहारै[13] श्याम;
सोई शूरवीर रोपि, रहै जाइ रनमें[14] ।।१।।
हाथमें गहै खडग,[15] मारवेकूं एक पग;

---

१ पसीने से पैदा हुआ जीव। २ पिंडज पशु मनुष्यादि। ३ अण्डों से पैदा हुए जीव चिड़ियाँ इत्यादि। ४ स्थावर वृक्षादि। ५ फूल की कलियों का फूलना। ६ आनंद। ७ नहीं समाता है शरीर में। ८ अस्त्र का नाम। ९ डरपोक। १० पांखी, कीड़ा। ११ अग्नि में। १२ धूमधाम। १३ बंदगी करना। १४ संग्राम। १५ तलवार।

तन मन अपनो, समरपण कीनो है ।
आगे करि मीचकू[१] जु, परचो डाकि रण बीच;
टूक टूक होइके, भगाइ दल दीनो है ।।
खाइ लौन श्यामको, हरामखोर कैसे होई;
नाम याद जगतमें, जीत्यो पन तीनों है ।
सुंदर कहत ऐसो, कोउ एक शूरवीर;
शीशकूं उतारिके, सुयश जाइ लीनो है ।।२।।
पाँव रोपि रहै रण-मांहिं रजपूत[२] कोउ;
हय गज गात, जुरत जहाँ दल है ।
बाजत जुझाऊ सह-नाइ सिंधु राग पुनि;
सुनतही कायरकि, छूटि जात कल है ।।
झलकत बरछी, तिरछी तरवार बहै;
मार मार करत, परत खल भल है ।
ऐसे युद्धमें अडिग्गं,[३] सुंदर सुभट सोई;
घरमाहिं शूरमा, कहावत सकल है ।।३।।
अशन[४] वसन[५] बहु, भूषण सकल अंग;
संपत्ति विविध भाँति, भरचो सब घर है ।
श्रवण नगारो सुनि, छिनकमें छांड़ि जात;
ऐसे नहिं जानै कछु, मेरो वहां मर है ।।
मनमें उछाह रणमाहिं, टूक टूक होई;
निर्भय निःशंक वाके, रंचहू न डर है ।
सुंदर कहत कोउ, देहको ममत्व नाहिं;
शूरमाको देखियत, शीश बिनु घर है ।।४।।
जूझिबेको चाव जाके, ताकि ताकि करै घाव;

---

१ मृत्यु में। २ ठाकुर—क्षत्रिय। ३ मन में कायरता न हो पैर पीछे न पड़े। ४भोजन। ५ वस्त्र।

आगे धरि पाँव फिर, पीछे न संभार है ।
हाथ लिये हथियार, तीछन लगावे धार;
बार नहिं लागै सब, पिसुन प्रहारि है ।।
वोट नहिं राखै कछु, लोटपोट होइ जाइ;
चोट नहिं चूकै शीश, रिपुको उतारि है ।
सुंदर कहत ताहि, नेकहू न शोच पोच;
सोई शूरवीर धीर, मरजाइ मारि है ।।५।।
अधिक आजानुबाहु, मनमें उछाह किये;
दीये गज ढाहि मुख, वरषत नूर है ।
काढ़ै जब तरवार, बाल सब ठाढ़े होइ;
अति विकराल[1] पुनि, देखत करूर है ।।
नेक न उसास लेत, फौजकूं फिटाइ[2] देत;
खेत[3] नहिं छाँड़ै मारि, करै चकचूर है ।
सुंदर कहत ताकि, कीरति प्रसिद्ध होई;
सोइ शूर वीर धीर, श्यामके हजूर है ।।६।।
ज्ञानको कवच[4] अंग[5] काहकूं न होइ भंग;
टोप शीश झलकत[6], परम विवेक है ।
तन वाजी[7] असवार, लिये समशेर[8] सार;
आगेहीकूं पाँव धरै, भागने की टेक[9] है ।।
छूटत बंदूक बान, मचै जहाँ घमसान;
देखिके पिसुन दल, मारत अनेक हैं ।
सुंदर सकल लोकमाहिं, ताको जै जैकार,
ऐसो शूरवीर कोउ, कोटिनमें एक है ।।७।।
शूरवीर रिपु[10] सनमुख, देखि चोट करै;

---

१ भयानक । २ हटा देना । ३ मैदान । ४ बख्तर । ५ बदन—शरीर देह ।
६ प्रकाशित—शोभित । ७ घोड़ा । ८ तलवार । ९ प्रण । १० शत्रु ।

मारै तब ताकि ताकि, तरवार तीरसूं ।
साधु आठों याम बैठो, मनहीसूं युद्ध करै;
जाके मुँह माथो नहिं, देखिये शरीरसूं ।।
शूरवीर भूमि पर, दूरहीते दौरि लगै;
साधुसों न कोप करै, राखै धीर धीरकूं
सुंदर कहत तहाँ, काहुको न पाँव टिकै;
साधुको संग्राम है, अधिक शूर वीरसूं ।।८।।
खैंचि करडी कमान, ज्ञानको लगायो बान;
मार्‍यो महाबल मन, जग जिन रार्‍यो है ।
ताके अगवानी पंच, योधाहु कतल[१] किये;
और रह्यो पर्‍यो सब, अरि[२] दल भार्‍यो[३] है ।।
ऐसो कोउ सुभट,[४] जगतमें न देखियत;
जाके आते कालहूसों, कंपिके परार्‍यो[५] है ।
सुंदर कहत ताकी, शोभा तिहूँ लोकमाहिं;
साधुसों न शूरवीर, कोई हम जान्यो है ।।९।।
कामसों प्रबल महा, जीते जिन तीन लोक;
सो तौ एक साधुके, विचार आगे हार्‍यो है ।
क्रोधसों कराल जाके, देखत न धीर धरै;
सोउ साधु क्षमाके, हथ्यारसूं विदार्‍यो[६] है ।।
लोभसों सुभट साधु, तोपसूं गिराय दियो;
मोहसों नृपति साधु, ज्ञानसूं प्रहार्‍यो है ।
सुंदर कहत ऐसो, साधु कोउ शूरवीर;
ताकि ताकि सबही, पिसुन[७] दल मार्‍यो है ।।१०।।
मारे काम क्रोध सब, लोभ मोह पीसि डारे;

---

१ मार डाला। २ शत्रु की सैन्य। ३ नाश किया। ४ योद्धा। ५ भागना। ६ फारना। ७ चुगुलखोर।

इंद्रिहु कतल करि, कियो रजपूतो है ।
मारयो महामत्त मन, मारे अहंकार मीन;
मारे मद मत्सर, ऐसो रण रूतो है ।।
मारी आशा तृष्णा पुनि, पापिनी साँपिनी दोउ;
सबको पहार करि, निज पद हूतो है ।
सुंदर कहत ऐसो, साधु कोई शूरवीर;
वैरी सब मारिके, नीचिन्त होइ सूतो है ।।११।।
कियो जिन मन हाथ, इंद्रिनको सब साथ;
घेरि घेरि आपनेही, नाथसूं लगाये हैं ।
औरहु अनेक वैरी, मारि सब युद्ध करि;
काम क्रोध लोभ मोह, खोदके बहाये हैं ।।
कियो है संग्राम[1] जिन, दियो है भगाइ दल;
ऐसे महा सुभट सु, ग्रंथनमें गाये हैं ।
सुंदर कहत और, शूर यूंहि खपि[2] गये;
साधु शूरवीर वेई, जगतमें आये हैं ।।१२।।
महामत्त हाथी मन, राख्यो है पकरि जिन;
अतिहि प्रचंड[3] जामें, बहुत गुमान है ।
काम क्रोध लोभ मोह, बाँधे चारों पाँव पुनि;
छूटने न पावै नेक, प्राण पीलवान[4] है ।।
कबहूँ जो करै जोर, सावधान साँझ भोर;
सदा एक हाथमें, अंकुश गुरु ज्ञान है ।
सुंदर कहत और, काहुके न वश होइ;
ऐसो कौन शूर वीर, साधुके समान है ।।१३।।

इति शूरातनको अंग संपूर्ण ।।२८।।

---

१ लड़ाई । २ बिलाय गये । ३ तेज । ४ हाथीवान ।

अथ साधुको अंग २९.

इन्दव छन्द

प्रीति प्रचंड लगै परब्रह्महि, और सबै कछु लागत फीको ।
शुद्ध हृदै मन होइ सु निर्मल, द्वैत प्रभाव मिटै सब जीको ।।
गोष्ठि रु ज्ञान अनंत चलै जहँ, सुंदर जैसे प्रवाह नदीको ।
ताहिते जानि करौ निशिवासर, साधुको संगसदा अतिनीको।।१।।
जो कोइ जाइ मिलै उनसूं नर, होत पवित्र लगै हरि रंगा ।
दोष कलंक सबै मिटि जाइ सु, नीचहु जाइ जु होत उतंगा[1] ।।
ज्यूं जल और मलीन महा अति, गंग मिल्यो हुइ जातहि गंगा ।
सुंदर शुद्ध करै ततकाल जु, है जगमाहिं बड़ो सतसंगा ।।२।।
ज्यूं लट भृंग करै अपने सम, तासु जु भिन्न कहै नहिं कोई ।
ज्यूं द्रुम[2] और अनेकन भाँतिन, चन्दनके ढिग चंदन होई ।।
ज्यूं जल क्षुद्र[3] मिलै जब गंगहि, होइ पवित्र उहै जल सोई ।
सुंदर जाति स्वभाव मिटे सब, साधु कि संगति साधुहि होई ।।३।।
जो कोउ आवत है उनके ढिग, वाहि सुनावत शब्द सँदेसो ।
तांहिकुं तैसिहि औषधि लावत, जाहिकुँ रोगहि जानत जैसो ।।
कर्म कलंकहि काटत हैं सब, शुद्ध करै पुनि कंचन तैसो ।
सुंदर वस्तु विचारत है नित, संतनको जु प्रभाव हि ऐसो ।।४।।
जो परब्रह्म मिल्यो कोउ चाहतु, तौ नित संत समागम[4] कीजै ।
अंतर मेटि निरंतर ह्वै करि, ले उनकूं अपनो मन दीजै ।।
वे मुखद्वार उचार करै कछु, सो अनयास सुधारस पीजै ।
सुंदर शूर प्रकाश भयो जब, और अज्ञान सबै तम छीजै ।।५।।
जा दिनसे सतसंग मिल्यो तब, ता दिनसे भ्रम भाजि गयो है ।
और उपाय थके सबही तब, संतनि अद्वय ज्ञान दयो है ।।

---

१ ऊंचा । २ वृक्ष-विटप । ३ अपवित्र । ४ मिलाप ।

पीत प्रवालहिं क्यूं करि छूवत, एक अमूलक लाल लयो है ।
कौन प्रकार रहै रजनी तम, सुंदर शूर प्रकाश भयो है ।।६।।
संत सदा सबको हित बंछत, जानत है नर बूड़त काढ़ै ।
दे उपदेश मिटाइ सबै भ्रम, ले करि ज्ञान जहाजहि बाढ़ै ।।
जे विषयासुख नाहिन छांड़त, ज्यूं कपि[1] मूठ गहै शठ गाढ़ै[2] ।
सुंदर वे दुखकूं सुख मानत, हाटहि हाट[3] विकावत आढै ।।७।।
सो अनयास[4] तरै भवसागर,[5] जो सतसंगतमें चलि आवै ।
ज्यूं कनिहार[6] न भेद करै कछु, आइ चढ़ै तिहि नाव चढ़ावै ।।
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य रु शूद्र, मलेच्छ चंडालहि पार लगावै ।
सुंदर बेर नहीं कछु लागत, या नरदेह अभैपद पावै ।।८।।
ज्यूं हम खाइ पिवै अरु ओढ़हिं, तैसेहि ये सब लोक बखानै ।
ज्यूं जलमें शशिके[7] प्रतिबिंबहि,[8] आप समा जलजंतु प्रमानै ।।
ज्यूं खग[9] छाँह धरापर दीसत, सुंदर पंछि उड़ै असमानै ।
त्यूं शठ देहनके कृत देखत, संतनकी गति क्यूं कोउ जानै ।।९।।
जो खपरा कर ले घर डोलत, मांगत भीखहि तौ नहिं लाजै ।
जो सुखसेज पटम्बर भूषण, लावत चन्दन तौ नहिं राजै ।
जो कोउ आय कहै मुखते कछु, जानत ताहि बयारहि बाजै ।
सुंदर संशय दूर भयो सब, जो कछु साधु करै सोइ छाजै ।।१०।।
कोउक निंदत कोउक वन्दत, कोउक देतहि आइ जु भक्षण ।
कोउक आय लगावत चन्दन, कोउक डारत धूरि ततक्षण ।।
कोउ कहै यह—मूरख दीसत, कोउ कहै यह आहि विचक्षण ।
सुंदर काहुसुँ राग न द्वेष न, ये सब जानहु साधुके लक्षण ।।११।।
तात मिलै पुनि मात मिलै सुत, भ्रात मिलै युवती सुखदाई ।
राज मिलै गज वाजि मिलै, सब साज मिलै मन वांछित पाई ।।

---

१ बंदर। २ दृढ़-मजबूत। ३ बाजार। ४ बेप्रयत्न। ५ दु:खरूपी समुद्र—सम दुनियाँ से। ६ मल्लाह। ७ चन्द्रमा। ८ छाँह । ९ पक्षी।

लोक मिलै सुरलोक मिलै, विधि लोक मिलै वैकुण्ठहू जाई ।
सुंदर और मिलै सबही सुख, संतसमागम दुर्लभ भाई ।।१२।।

मनहर छन्द

देवहू भयेते कहा इंद्रहू भयेते कहा;
विधिहूके[1] लोकते, बहूरि आइयतु है ।
मानुष भयेते कहा, भूपति[2] भयेते कहा;
द्विजहू[3] भयेते कहा, पार जाइयतु है ।।
पशुहू भयेते कहा, पंछिहू भयेते कहा;
पन्नग[4] भयेते कहा, क्यूं अघाइयतु है ।
छुटिबेको सुंदर उपाय, एक साधुसंग;
जिनकी कृपाते अति, सुख पाइयतु है ।।१३।।
इन्द्राणी शृंगार धरि, चन्दन लगायो अंग;
वाहि देखि इंद्र अति, कामवश भयो है ।
शूकरिहू करदम,[5] बीचमाहि लोटि करि;
आगे जाइ शूकरको, मन हरि लयो है ।।
जैसो सुख शूकरको तैसो सुख मघवाको;[6]
तैसो सुख नर पशु, पक्षिनकूं दयो है ।
सुंदर कहत जाके, भयो ब्रह्मानंद सुख;
सोई साधु जगतमें, जीतिकरि गयो है ।।१४।।
धूलि जैसो धन जाके, शूलि सो संसार सुख;
भूलि जैसो भाग देखै, अन्तकसी यारी है ।
पाप जैसी प्रभुताई, शाप जैसो सनमान;
बड़ाई बिच्छुन जैसी, नागनी सी नारी है ।।
अग्नि जैसो इंद्र लोक, विघ्न जैसो विधि लोक;

---

१ ब्रह्मा–विधाता । २ राजा । ३ ब्राह्मण । ४ सांप । ५ कूड़ा–कीच–धूर नरक । ६ इन्द्र ।

कीरति कलंक जैसी, सिद्धिसी ठगारी है ।
वासना[1] न कोई बाकी, ऐसी मति[2] सदा जाकी;
सुंदर कहत ताहि, वंदना[3] हमारी है ॥१५॥
कामही न क्रोध जाके, लोभही न मोह ताके;
मदही न मत्सर न, कोउ न विकारो है ।
दु:खही न सुख मानै, पापही न पुण्य जानै;
हरष न शोक आनै, देहहीते न्यारो है ॥
निंदा न प्रशंसा करै, रागही न द्वेष धरै;
लेनहि न देन जाके, कछु न पसारो है ।
सुंदर कहत ताकी, अगम अगाध गति;
ऐसो कोउ साधु सो तो, रामजीकूं प्यारो है ॥१६॥
आठौ याम[4] यम नेम, आठौ याम रहै प्रेम;
आठौ याम योग यज्ञ, किया बहु दान जू ।
आठौ याम जप तप, आठौ याम लीयो व्रत;
आठौ याम तीरथमें, करत है स्नान जू ॥
आठौ याम पूजाविधि, आठौ याम आरतिहु;
आठौ याम दंडवत, सुमिरण ध्यान जू ।
सुंदर कहत जिन, कियो सब आठौ याम;
सोई साधु जाके उर, एक भगवान जू ॥१७॥
जैसे आरसीको मैल, काटत शिकलिगर;
मुखमें न फेर कोऊ, वहै वाको पोत है ।
जैसे वैद्य नैनमें शलाका,[5] मेलि शुद्ध करै;
पटल गयेते तहाँ, ज्यूंकी त्यूंही जोत है ॥
जैसे वायू बादल, बिखरिके उड़ाइ देत;

---

१ चाह—इच्छा । २ बुद्धि । ३ नमस्कार । ४ पहर । ५ सलाई ।

रवि[1] तौ आकाशमाहिं, सदाही उदोत[2] है ।
सुंदर कहत भ्रम, क्षणमें बिलाय जात;
साधुहीके संगते, स्वरूपज्ञान होत है ।।१८।।
मृतक[3] दादुर[4] जीव, सकल जिवाये जिन;
वरषत वाणि मुख, मेघकीसी धारकूं ।
देत उपदेश कोउ, स्वारथ न लवलेश;
निशिदिन करत है, ब्रह्मके विचारकूं ।।
औरहु संदेह सब, मेटत निमिषमा[5]हिं;
सूरज मिटाई देत, जैसे अन्धकारकूं ।
सुंदर कहत हंस, वासी सुखसागरके;
सन्त जन आये हैं सो, पर उपकारकूं ।।१९।।
हीराही न लालही न, पारस न चिंतामणि;
औरहु अनेक नग, कहौ कहा कीजिये ।
कामधेनु[6] सुरतरु, चंदन नदी समुद्र;
नौकाहू जहाज बैठ, कबहूँक छीजिये ।।
पृथ्वी अप तेज वायु, व्योम लौं सकल जड़;
चन्द्र सूर शीतल, तपत गुण लीजिये ।
सुंदर विचारि हम, शोधि सब देखे लोक;
सन्तनके सम कहौ, और कहा दीजिये ।।२०।।
जिन तन मन प्राण, दीने सब मेरे हेत;
औरहू ममत्व बुद्धि, अपनो उठाई है ।
जागत हु सोवतहु, गावत है मेरे गुण;
करत भजन ध्यान, दूसरी न कोई है ।।
तिनके मैं पीछे लग्यो, फिरतहूं निशिदिन;

---

१ श्रीसूर्यनारायण। २ उदय होते हैं। ३ मुर्दा। ४ मेंढक। ५ पलमात्र। ६ गौ–जो सदा दूध देती है।

सुंदर कहत मेरी, उनते बड़ाई है।
वहै मेरे प्रीय[1] मैं हूं, उनके आधीन सदा;
संतनकी महिमा[2] तौ, श्रीमुख सुनाई है ॥२१॥
जगत व्योहार सब, देखत है ऊपरको;
अंतहकरणकूं तौ, नेक[3] न पिछान है।
भोजनकि भोजनकि, हलन चलन कछु;
और कोऊ क्रियाकी तौ, मध्यही बखान है ॥
आपनेही अवगुण, आरोपै अज्ञानी जीव;
सुंदर कहत ताते, निंदाहीकूं ठान है।
भावमें[4] तौ अंतर[5] है, राति अरु दिनकेसो;
साधुकी परीक्षा[6] कोउ, कैसे करि जान है ॥२२॥
वही दगाबाज वही, कुष्ठी[7] जु कलंक भय्यो;
वही महापापी वाके, नख शिख कीच है।
वही गुरुद्रोहि[8] गऊ, ब्राह्मण हननहार;
वही आतमाको घाती, ऐसो वाके बीच है ॥
वही अघको[9] समुद्र, वही अघको पहाड़;
सुंदर कहत वाकी, बुरी भाँति मीच[10] है।
वही है मलेच्छ वही, चांडाल[11] बुरेते बुरो;
संतनको निंदा करै, सो तौ महानीच है ॥२३॥
परि है बीजुरी ताके, ऊपरसूं अचानक;
धूरि उड़ि जाय कहूं, ठौर नहिं पाई है।
पीछे केउ युग महा, नरकमें परै जाइ;
ऊपरते यमहूकी, मार बहु खाई है ॥
ताके पीछे भूत प्रेत, स्थावर जंगम योनि;

---

१ प्यारा। २ प्रताप। ३ तनिक। ४ मतलब। ५ फर्क। ६ इम्तिहान। ७ कोढ़ी। ८ गुरु के शत्रु। ९ पाप। १० मौत। ११ श्वपच—डोम।

सहैगौ संकट तब, पीछे पछताई है ।
सुंदर कहत और, भुगतै अनंत[१] दु:ख;
संतनकूं निन्दै[२] ताको, सत्यानाश जाई है ।।२४।।
कूपमें को मेंडुक सो, कूपकूं सराहत है;
राजहंससूँ कहत, केतो तेरा सर है ।
मशका कहत मेरी, सरवरि[३] कौन उड़ै;
मेरे आगे गरुड़की, केती एक जर है ।।
गुबरीला गोलीकूं लड़ाई, करि मानै मोद;
मधुपकूं निंदत, सुगंधि जाको घर है ।
अपनी न जानै गति, संतनको नाम धरै;
सुंदर कहत देखौ, ऐसो मूढ़ नर है ।।२५।।
कोउ साधु भजनीक, हुतो लवलीन अति;
कबहूँ प्रारब्ध कर्म, धका आइ दयो है ।
जैसे कोउ मारगमें, चलत आखरी परै;
फेर करि उठै तब, वहै पथ लयो है ।।
जैसे चंद्रमाकी सुनि, कला क्षीण होइ गई;
सुंदर सकल लोक, द्वितीयाका नयो है ।
देवहुकी देवतन, गयो तामें कहा भयो;
पीतरको मोल सो तौ, नाहीं कछु गयो है ।।२६।
ताहिके भगति भाव, उपजत अनायास;
जाकी मति संतनसूं, सदा अनुरागी[४] है ।
अति सुख पावै ताके, दु:ख सब दूर होई;
औरही काहूकी जिन, निंदा सब त्यागी है ।।
संसारकी पाँश काटी, पाइ है परमपद;[५]
सतसंगहीते जाकी, ऐसी मति जागी है ।

---

१ अथाह । २ अपवाद । ३ बराबरी । ४ प्रेमी । ५ मोक्ष ।

सुंदर कहत ताको, तुरत कल्याण[1] होई;
सन्तनको गुण गहै, सोई बड़भागी है ।।२७।।
योग यज्ञ जप तप, तीरथ व्रतादि दान;
साधन सकल नहिं, याकी सरवर है ।
और देवी देवता, उपासना[2] अनेक भांति;
शंक सब दूर करि, तिनते न डर है ।।
सबहीके शीश पर, पांव दे मुकति होइ;
सुंदर कहत सो तौ, जनमैं न मरै है ।
मन वच काय करि, अंतर न राखै कछु;
सन्तनकी सेवा करै, सोइ निसतार[3] है ।।२८।।
प्रथम सुयश लेत, शीलहु संतोष लेत;
क्षमा दया धर्म लेत, पापते डरतु है ।
इंद्रिनकूं घेरि लेत, मनहीकूं फेरि लेत;
योगकी युगति लेत, ध्यानही धरतु है ।।
गुरुको वचन लेत, हरिजीको नाम लेत;
आतमाकूं सोधि लेत, भौजल तरतु है ।
सुंदर कहत जग, संत कछु देत नाहिं;
सन्तजन निशि दिन, लेवो हि करतु है ।।२९।।
सांचो उपदेश[4] देत, भली भली सीख देत;
समता[5] सुबुद्धि देत, कुमति हरतु है ।
मारग दिखाई देत, भावहु भगति देत;
प्रेमकी[6] प्रतीति देत, अभरा भरतु है ।।
ज्ञान देत ध्यान देत, आतमविचार देत;
ब्रह्मकूं बताई देत, ब्रह्ममें चरतु है ।

---

१ भला । २ पूजा–ध्यान । ३ पार उतर जाना । ४ शिक्षा। ५ बराबरी। ६ मुहब्बत।

सुंदर कहत जग, संत कछु लेत नाहीं;
संत जन निशिदिन, देवोही करतु है ।।३०।।

इति साधुको अंग संपूर्ण ।।२९।।

अथ ज्ञानीको अंग ३०.

इन्दव छन्द

जाहि हृदै महँ ज्ञान प्रकाशत, तासु सुभावै[१] रहै नहिं छानौ ।
नैनहिं बैनहिं सैनहिं जानिय,[२] ऊठत बैठतही अलसानौ ।।
ज्यूं कछु भक्ष[३] किये उदगारत,[४] कैसहि राखिसकै न अघानौ ।
सुन्दरदास प्रसिद्ध[५] दिखावत, धान्यको खेत परारते जानौ ।।१।।
ज्ञान प्रकाश भयो जिनके उर, वे घट क्यूंहि छिपे न रहैंगे ।
भोडलमाहिं जुरै नहिं दीपक, यद्यपि वे मुख मौन गहैंगे ।।
ज्यूं घनसारहि[६] गौप्य[७] छिपावत, तौहुँ सुगंध सु तज्ञ[८] लहैंगे ।
सुंदर और कहा कोऊ जानत, बूढ़ोंकी बात बटाऊ[९] कहैंगे ।।२।।
बोलत चालत बैठत ऊठत, पोवत खातहुँ सूँघत श्वासै ।।
ऊपर तौ व्यवहार करै सब, भीतर स्वप्न समान जु भासै ।।
लेकरि तीर पतालहि साधत, मारत है पुनि फेर अकाशै ।
सुंदर देह क्रिया सब देखत, कोउक पावक ज्ञानिको आशै ।।३।।
बैठे तो बैठे चलै सु चलै पुनि, पीछे तु पीछे रु आगे तु आगे ।
बोलै तु बोले न बोले तु मौनहिं, सोवे तु सोवै रु जागै तु जागै ।
खाइ तु खाइ नहीं तु नहीं जु, गहै तु गहै पुनि त्यागि तु त्यागै ।
सुंदर ज्ञानिकि ऐसी दशा[१०] यह,जानै नहीं कछुराग विरागै।।४।।
देखत है पै कछु नहिं देखत, बोलत है नहिं बोल बखानै ।
सूंघत है नहिं सूंघत घ्राण, सुनै सब हैं न सुनै यह कानै ।।
भक्ष करै अरु नाहिं भखे[११] कछु, भेटत है नहिं भेटत प्रानै ।

---

१ प्रकृति। २ इशारा। ३ खाद्य। ४ डकार। ५ मशहूर। ६ कर्पूर। ७ गुप्त। ८पंडित। ९ पथिक। १० अवस्था। ११ खाय।

लेतहि देतहि लेत न देतहि, सुंदर ज्ञानिकि ज्ञानिहि जानै ॥५॥
काज अकाज भलो न बुरो कछु, उत्तम मध्यम दृष्टि न आवै ।
कायिक[1] वाचिक मानस कर्म सु, आप विषे न तिहूं ठहरावै ॥
हूं करिहूं न कियो न करूं अब, यूं मन इंद्रिनकूं वरतावै ।
दीसत है व्यवहार विषे नित, सुंदर ज्ञानिकि कोउक पावै ॥६॥
देखत ब्रह्म सुनै पुनि ब्रह्म हि, बोलत है वहि ब्रह्महि बानी ।
भूमिहु नीरहु तेजहु वायुहु, व्योमहु ब्रह्म जहाँ लग प्रानी ॥
आदिहु अंतहु मध्यहु ब्रह्महि, है सब ब्रह्म यहै मति ठानी ।
सुंदर ज्ञेय[2] रु ज्ञानहु ब्रह्महि, आपहु ब्रह्महि जानत ज्ञानी ॥७॥
बैठत केवल ऊठत केवल, बोलत केवल[3] बात कही है ।
जागत केवल सोवत केवल, जोवत केवल दृष्टि लही है ॥
भूतहु केवल भव्यहु[4] केवल, वर्त्तत केवल ब्रह्म सही है ।
है सबही अध ऊर्ध्व सु केवल, सुंदर केवल ज्ञान वही है ॥८॥
केवल ज्ञान भयो जिनके उर, ते अध ऊर्ध्व सु लोकन जाहीं ।
व्यापक ब्रह्म अखंड निरंतर, वा बिन और कहूँ कछु नाहीं ॥
ज्यूं घट नाश भयो घट व्योमसु, लीन[5] भयो पुनि है नभमाहीं ।
त्यूं पुनि भक्ति जहाँ वपु छाँड़त, सुंदर मोक्ष शिलाकहु काहीं ॥९॥
आदि हुतो नहिं अंत रहै नहिं, मध्य शरीर गयो भ्रमकूपा ।
भासत है कछु औरकुँ औरहि, ज्यूं रजुमें अहि सीपिमें रूपा ॥
देखि मरीचि उठ्यो बिच विभ्रम, जानत नाहिं वहै रनि धूपा ।
सुंदर ज्ञान प्रकाश भयो जब, एक अखंडित ब्रह्म अनूपा ॥१०॥

मनहर छन्द

जाहिके विवेक ज्ञान, ताहिके कुशल[6] भयो;
जाहि ओर जाहि वाकूं, ताहि ओर सुख है ।

---

१ शारीरिक । २ जानने योग्य । ३ सिर्फ । ४ भविष्यत् । ५ लिप्त होना ।
६ मंगल–शुभ ।

जैसे कोई पाँवनि, पैजार[1] कूं चढ़ाइ लेत;
ताकूं तौ न कोउ काटे, खोंभरेको दु:ख है ।।
भावै कोउ निंदा करै, भावै तौ प्रशंसा करै;
वे तौ देखे आरसीमें, आपनोहि मुख है ।
देहको व्योहार सब, मिथ्या करि जानत है;
सुंदर कहत एक, आतमाही रुख[2] है ।।११।।
अंतहकरण जाके, तमगुण छाइ रह्यो;
जड़ता[3] अज्ञान वाके, आलसमें त्रास[4] है ।
रजोगुणका प्रभाव,[5] अंतहकरण जाके;
त्रिविध करम वाके, कामनाको[6] वास है ।।
सत्त्वगुण अंतहकरण, जाके देखियत;
क्रिया करि शुद्ध वाके, भक्तिको निवास है ।
त्रिगुण अतीत[7] साक्षी, तुरिया स्वरूप जान;
सुंदर कहत वाके, ज्ञानको प्रकाश है ।।१२।।
तमोगुण बुद्धि सो तौ, तवाके समान जैसे;
ताके मध्य सूरजकी, रंचहूं न जोत है ।
तमोगुण बुद्धि जैसे, आरसीकि औंधी और;
ताके मध्य सूरजकी, कछुक[8] उदोत[9] है ।।
सत्त्वगुण बुद्धि जैसे, आरसी सूधी ओर;
ताके मध्य प्रतिबिंब, सूरजको पोत है ।
त्रिगुण अतीत जैसे, प्रतिबिंब मिटि जात;
सुंदर कहत एक, सूरजही होत है ।।१३।।
सबसूं उदास होइ, काढ़ि मन भिन्न करै;
ताको नाम कहियत, परम वैराग है ।

---

१ जूता। २ मुख्य। ३ मूर्खता। ४ डर। ५ प्रताप। ६ ख्वाहिश, इच्छा। ७ विरक्त। ८ लेशमात्र। ९ प्रकाश—उदय होना।

अन्तहकरणहूकी, वासना निवृत्त[1] होई;
ताकूं मुनि कहत हैं, वहै बड़ो त्याग[2] है ।।
चित्त एक ईश्वरसूं, नेकहू न न्यारो होइ;
वहै भक्ति कहियत, वहै प्रेम भाग है ।
आप ब्रह्म जगतकूं, एक करि जानै सब;
सुंदर कहत वह, ज्ञान भ्रम भाग है ।।१४।।
कोउ नृप फूलनकी, सेजपर सूतो आइ;
जब लग जाग्यो तौलों, अति सुख मान्यो है ।
नींद जब आई तब, वाहीकूं स्वपन भयो;
जब परचो नरकके, कुण्डमें यूं जानो है ।।
अतिदुःख पावै परि, निकस्यो न क्यूंही जाहि;
जागि जब परचो तब, स्वपन बखान्यो है ।
यह झूंठ वह झूंठ, जाग्रत स्वपन दोऊ;
सुंदर कहत शानी, सब भ्रम भान्यो है ।।१५।।
स्वनेमें राजा होइ, स्वपनमें रंक[3] होइ;
स्वपनेमें सुख दुःख सत्यकरि जानै है ।
स्वपनेमें बुद्धिहीन,[4] मूढ़[5] न समुझै कछु;
स्वपनमें पंडित बहु, ग्रंथनि बखानै है ।।
स्वपनमें कामी होइ, इंद्रिनके वश परचो;
स्वपनेमें यती[6] होई, अहंकार आनै है ।
स्वपनेते जाग्यो जब, समुझ परी है तब;
सुंदर कहत सब, मिथ्या करि मानै है ।।१६।।
विधि न निषेध कछु, भेद न अभेद पुनि;
क्रिया सो करत दीसै, यूंही नितप्रति है ।।

---

१ शांत । २ छोड़ । ३ दरिद्री । ४ निर्बुद्धि । ५ मूर्ख । ६ संन्यासी ।

काहूकूं निकट राखै, काहूकूं तौ दूर भाषै;
काहूसूं नेरे न दूर, ऐसी जाकी मति है ॥
रागहू न द्वेष कोउ, शोक न उछाह दोउ;
ऐसी विधि रहै कहूँ, रति न विरति है ।
बाहिर व्योहार ठानै, मनमें स्वपन जानै;
सुंदर ज्ञानीकी कछु, अदभुत गति[1] है ॥१७॥
कामी है न यति है न, सूम है न सती है न;
राजा है न रंक है न, तन है न मन है ।
सोवै है न जागै है न, पीछे है न आगे है न;
गहै है न त्यागै है न, घर है न वन है ॥
थिर है न डोलै है न मौन है न बोलै है न;
बंध है न मोक्ष है न, स्वामी है न जन है ।
वैसो कोउ होवै जब, वाकी गति[1] जानै तब;
सुंदर कहत ज्ञानी, ज्ञान शुद्धघन है ॥१८॥
श्रवण सुनत मुख, बोलत वचन घ्राण;
सूँघत फूलन रूप, देखत दृगन[2] है ।
त्वक सपरस रस, रसना ग्रसत कर;
गहत अशन मुख, चलत पगन है ॥
करत गमन सुनि, बैठत भवन[3] सेज;
सोवत रवन पुनि, वोढ़त नगन है ।
जो जो कछु व्यवहार, जानत सकल भ्रम;
सुन्दर कहत ज्ञानी, ज्ञानमें मगन है ॥१९॥
कर्म न विकर्म करे, भाव न अभाव धरै;
शुभ न अशुभ परै, याते निधरक है ।
वस तीन शून्य जाके, पापहू न पुण्य ताके;

---

१ चाल । २ नेत्र । ३ घर ।

अधिक न न्यून वाके, स्वर्ग न नरक है ।।
सुखदु:ख सम दोउ, नीचहू न ऊंच कोउ;
ऐसी विधि रहै सोऊ, मिल्यो न फरक है ।
एकहि न दोय जानै, बंध मोक्ष भ्रम मानै;
सुंदर कहत ज्ञानी, ज्ञानमें गरक है ।।२०।।
अज्ञानीकूं दु:खको, समूह जग जानियत;
ज्ञानीकूं जगत सब, आनँद स्वरूप है ।
नैनहिकूं तौ घर, बाहिर न सूझै कछु;
जहाँ जहाँ जाय तहाँ, तहाँ अंधकूप है ।।
जाके चक्षु है प्रकाश, अंधकार भयो नाश;
वाके जहाँ रहै तहाँ, सूरजकी धूप है ।
सुंदर अज्ञानी ज्ञानी, अंतर[१] बहुत आहि;
वाके सदा राति वाके, दिवस[२] अनूप[३] है ।।२१।।
ज्ञानी अरु अज्ञानीकी,[४] क्रिया सब एकसीही;
अज्ञ आशवान ज्ञानी, आश न निराश है ।
अज्ञ जोई जोई करै, अहंकार बुद्धि धरै;
ज्ञानी अहंकार बिनु, करत उदास है ।।
अज्ञ सुख दु:ख दोऊ, आपविषे मानि लेत;
ज्ञानी सुख दु:खकूं, न जानै मेरे पास है ।
अज्ञकूं[४] जगत यह, सकल सन्ताप[५] कहै;
ज्ञानीकूं सुंदर सब, ब्रह्मको विलास है ।।२२।।
ज्ञानी लोक संग्रहकूं, करत व्योहार विधि;
अंतहकरणमें तौ, स्वप्नकीसी दौर है ।
देत उपदेश नाना,–भाँतिक वचन कहि;
सब कोऊ जानत, सकल सिरमौर है ।।

---

१ बीच । २ दिन । ३ जिसकी उपमा न हो । ४ अज्ञानी–मूर्ख । ५ दु:ख ।

हलन चलन पुनि, देहको करत नित;
ज्ञानमें गरक[1] गति, लिये निज ठौर है ।
सुंदर कहत जैसे, दंत गजराज मुख;
खाईबेके और रु, दिखाइबेके और है ।।२३।।
इंद्रिनको ज्ञान जाके, सो तौ है पशु समान;
देह अभिमान खान,-पानहीसूं लीन है ।।
अन्तहकरण ज्ञान, कछुक विचार जाके;
मनुष्य व्योहार शुभ,-कर्मके आधीन है ।।
आतमविचार ज्ञान, जाके निशि-वासर है;
सोही साधु सकलही, बातमें प्रवीण[2] है ।
एक परमातमाको, ज्ञान अनुभव जाके;
सुंदर कहत वह, ज्ञानी भ्रम छीन है ।।२४।।
जाहि ठौर रविको, प्रकाश भयो ताहि ठौर;
अंधकार भागि गयो, गृह वनवासते ।
न तौ कछु वनते, उलटी आवै घरमाहिं;
न तौ वन चलि जाए, कनक[3] आवासते ।।
जैसे पक्षी पक्ष टूटि, जाहि ठौर पर्‍यो आइ;
ताहि ठौर गिरि रह्यो, उड़िबेकी आशते ।
सुंदर कहत मिटि ज़ाइ सब दौड़ दुःख;
धोको न रहत कोउ, ज्ञानके प्रकाशते ।।२५।।
जैसे कोउ देश जाइ, भाषा कहै औरसीही;
समुझे न कोउ वासूं, कहै क्या कहतु है ।
कोउ दिन रहि करि, बोली सीखै उनहींकी;
फेरि समुझावै तब, सबको लहतु है ।।
तैसे ज्ञान कहेते, सुनत विपरीत[4] लागै;

१ डूबा । २ चतुर । ३ सोने का गृह । ४ उलटा ।

आप आपनोही मत, सबको गहतु है ।
उनहीके मत करि, सुंदर कहत ज्ञान;
तबहीते ज्ञान, ठहराइके रहतु है ॥२६॥
एक ज्ञानी कर्मनमें, ततपर[1] देखियत;
भक्तिको प्रभाव नाहिं, ज्ञानमें गरक है ।
एक ज्ञानी भगतिको, अत्यन्त प्रभाव लिये;
ज्ञानमाहिं निश्चै करि, कर्मसूं तरक है ॥
एक ज्ञानी ज्ञानहीमें, ज्ञानको उचार करै;
भक्ति अरु कर्म इन, दुहूंते फरक है ।
कर्म भक्ति ज्ञान तीनूं, वेदमें बखानि कहै;
सुंदर बतायो गुरु, ताहीमें लरक है ॥२७॥
जैसे पक्षी पगनसूं, चलत है अवनि[2] आइ;
तैसे ज्ञानी देह करि, करम करतु है ।
जैसे पक्षी चंचू करि, चुगत आहार पुनि;
तैसे ज्ञानी उरमें, उपासना धरतु है ॥
जैसे पक्षी पक्षनसूं, उड़त गगन[3] माहिं;
तैसे ज्ञानी ज्ञान करि, ब्रह्ममें चरतु है ।
सुंदर कहत ज्ञानी, तीनूं भाँति देखियत;
ऐसी विधि जानै सब, संशय हरतु है ॥२८॥

इन्दव छन्द

एक क्रिया करि किर्षि[4] निपावत, आदि रु अन्त ममत्व बँध्यो है ।
एक क्रिया करि पाक[5] करै जब, भोजनकूं कछु अन्न रँध्यो है ॥
एक क्रिया मल त्यागत है लघु,[6] नीत करै कहूँ नाहिं फँध्यो है ।
त्यूं यह कर्म उपासन ज्ञानहिं, सुंदर तीन प्रकार सँध्यो है ॥२९॥

---

१ आरूढ़ । २ पृथ्वी–धरा । ३ आकाश । ४ खेती । ५ रसोई । ६ छोटा ।

दोउ जने मिलि चौपर खेलत, सारि मरै पुनि डारत पासा ।
जीतत है सु खुशी मनमें अति, हारत है सु भरेहि उसासा ।।
एक जनो दोउ औरहि खेलत, हार न जीत करै जु तमासा ।
त्यूंहि अज्ञानिकूं द्वैत भयो भ्रम, सुन्दर ज्ञानिकूं एक प्रकासा ।।३०।।

सवैया- (इकतीसमात्रिक)

जीव नरेश[१] अविद्या[२] निद्रा,[३] सुख शय्या[४] सोयो करि हेत ।
कर्म खवारा पुट भरि लाई, ताते बहुविधि भयो अचेत ।।
भक्ति प्रधान जगायो कर गहि, आलस भरी जँभाई लेत ।
सुंदर अब निद्रा वश नाहीं, ज्ञान जागरण सदा सुचेत ।।३१।।

सवैया- (बत्तीसमात्रिक)

ज्ञानी कर्म करै नाना विधि, अहंकार या तनको खोवै ।
कर्मनका फल कछू न जोवे, अन्त:करण वासना बोवै ।।
ज्यूं कोऊ खेतीकूं जोतत, लेकरि बीज भूनिके बौवै ।
सुंदर कहै सुनो दृष्टांतहि, नाँग नहाई काह निचोवै ।।३२।।

इति ज्ञानीको अङ्ग संपूर्ण ।।३०।।

अथ नि:संशय ज्ञानीको अङ्ग ३१.

मनहर छन्द

भावै देह छूटि जाहु, काशीमाहिं गंगातट;
भावै देह छूटि जाहु, क्षेत्र मगहरमें ।
भावै देह छूटि जाहु, विप्रके सदन[५] मध्य;
भावै देह छूटि जाहु, श्वपचके[६] घरमें ।।
भावै देह छूटै देश, आरय अनारयमें;
भावै देह छूटि जाहु, वनमें नगरमें ।

---

१ राजा । २ मूर्खता । ३ नींद–शयन । ४ सेज । ५ घर । ६ चांडाल ।

सुंदर ज्ञानीको कछु, संशय रहत नाहिं;
स्वरग नरक सब, भागि गयो भरमें ॥१॥
भावै देह छूटि जाहु, आजही पलकमाहिं;
भावै देह रहु चिर[१]-काल युग अन्त जू ।
भावै देह छूटि जाहु, ग्रीषम पावस[२] ऋतु;
शरद शिशिर शीत, छूटत वसन्त जू ॥
भावै दक्षिणायनहु, भावै उत्तरायणहु;
भावै देह सर्प सिंह, बीजली हनँत जू ।
सुंदर कहत एक, आतमा अखंड जानि,
याही भाँति निरसंशै, भये सब संत जूं ।

इन्दव छन्द

कै यह देह गिरो वन पर्वत, कै यह देह नदीहि बहो जू ।
कै यह देह धरो धरतीमहिं, कै यह देह कृशानु[३] दहो जू ॥
कै यह देह निरादर निंदक, कै यह देह सराह कहो जू ।
सुंदर संशय दूर भयो सब, कै यह देह चलो कि रहो जू ॥३॥
कै यह देह सदा सुख सम्पति, कै यह देह विपत्ति[४] परो जू ।
कै यह देह निरोग रहो नित, कै यह देहहि रोग चरो जू ॥
कै यह देह हुताशन पैठहु, कै यह देह हिमार गरो जू ।
सुंदर संशय दूर भयो सब, कै यह देह जिवो कि मरो जू ॥४॥

इति निःसंशय ज्ञानीको अंग संपूर्ण ॥३१॥

अथ प्रेमज्ञानीको अंग ३२.

इन्दव छन्द

प्रीतिकि रीति कछू नहिं राखत, जाति न पाति नहीं कुल गारौ ।
प्रेमकूं नेम कहूं नहिं दीसत, लाज न कान लग्यो सब खारो ॥

---

१ बहुत काल तक । २ वर्षा । ३ अग्नि । ४ दुःख ।

लीन[१] भयो हरिसूं अभिअंतर,[२] आठहु याम[३] रहै मतवारो ।
सुंदर कोउक जानि सकै यह,गोकुल गांवको पैंड़ोहि[४] न्यारो।।१।।
ज्ञान दियो गुरु देव कृपाकरि, दूरि कियो भ्रम खोरि किवाँरो ।
और क्रिया कहि कौन करै अब, चित्त लग्यो परब्रह्म पियारो ।।
पाँव विना चलबो किहि ठौरहु, पंगु[५] भयो मन चित्त हमारो ।
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँवको पैंड़ोहि न्यारो ।।२।।
एक अखंडित ज्यूं नभव्यापक, बाहिर भीतर है इक सारो ।
दृष्टि न मुष्टि न रूप न रेख न, श्वेत न पीत न रक्त न कारो ।।
चक्रित होइ रहै अनुभौ बिनु, जौं लगि नाहिं न ज्ञान उजारो ।।
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गांवको पैंड़ोहि न्यारो ।।३।।
द्वंद्व विना विचरै वसुधापर, जो घट आतम ज्ञान अपारो ।
काम न क्रोध न लोभ न मोह न, राग न द्वेष न मारु न थारो ।।
योग न भोग न त्याग न संग्रह, देह दशा न ढँक्यो न उघारो ।
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँवको पैंड़ोहि न्यारो ।।४।।
लक्ष अलक्ष अदक्ष न दक्ष न, पक्ष अपक्ष न तूल न भारो ।
झूँठ न साँच अवाच न वाच न, कंचन काँच न दीन उदारो ।।
जान अजान न मान अमान न, सान गुमान न जात न हारो ।
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँवको पैंड़ोहि न्यारो ।।५।।

इति प्रेमज्ञानीको अग संपूर्ण ।।३२।।

अथ आत्म अनुभवको अंग ३३.

इन्दव छन्द

है दिलमें दिलदार सही अँखियाँ, उलटी करि ताहि चितैये ।
आबमें[६] खाकमें[७] बादमें[८] आतश,[९] जानमें सुंदर जानि जनैये ।।
[१०]नूरमें नूर है तेजमें तेजहिं, ज्योतिमें ज्योति मिले मिलि जैसे ।

---

१ लिप्त । २ अन्तःकरण । ३ प्रहर । ४ राह । ५ लगड़ा । ६ पानी । ७ मिट्टी । ८ हवा । ९ अग्नि । १० रोशनी ।

क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहतेहि लजैये ।।१।।
जो कहूँ है सबमें यह एक तु, सो कहैं केसु हैं आँखि दिखैये ।
जो कहूँ रूप न रेख दिसै कछु, तौ सब झूँठकि मानिहि कैये ।।
जो कहूँ सुंदर नैननि माँझ तु, नैन रु बैन गये पुनि हैये ।
क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहतेहि लजैये ।।२।।
होत विनोद जितो अभिअंतर, सो सुख आपमें आपहि पैये ।
बाहिरकूं उमँग्यो पुनि आवत, कण्ठते सुंदर फेर पठैये ।।
स्वाद निवेर निवेर्‍यो न जात सु, मानहुँ गुड़ गूँगे नित खैये ।
क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहतेहि लजैये ।।३।।
व्योमको व्योम[1] अनंत अखंडित, आदि न अन्त सु मध्य कहाँ है ।
को परमान करै परिपूरण, द्वैत अद्वैत कछू न जहाँ है ।।
कारण कारज भेद नहीं कछु, आपमें आपहि आप तहाँ है ।
सुंदर दीसत सुंदरमाहिं सु, सुंदरता कहि कौन उहाँ है ।।४।।

प्रश्नोत्तर

एक कि दोइ ? न एक न दोइ,
उही कि इही ? न उही न इही है ।
शून्य कि स्थूल ? न शून्य न स्थूल,
जिही कि तिही ? न जिही न तिही है ।।
मूल कि डाल ? न मूल न डाल,
वही कि मही ? न वही न मही है ।
जीव कि ब्रह्म ? न जीव न ब्रह्म,
तु है कि नहीं ? कछु है न नहीं है ।।५।।

पूर्ववत् इन्दव छन्द

एक कहूं तु अनेक सु दीसत, एक अनेक नहीं कछु ऐसो ।
आदि कहूँ तहाँ अंतहु आवत, आदि न अन्त न मध्य सु कैसो ।।

---

१ आकाश ।

गोप्य[१] कहूं तु अगोप्य[२] कहाँ यह, गोप्य अगोप्य न ऊभो न बैसो[३]।
जोइ कहूं सोइ हैं नहीं सुंदर है तु सही परि जैसेको तैसो ॥६॥

मनहर छन्द

एकको कहै जु कहूं, एकही प्रकाशत है;
दोऊही कहै जु कोऊ, दूसरोहू देखिये ।
अनेक कहै जु कोऊ, अनेक आभासै ताहि;
जाके जैसे भाव तैसो, ताकूंही विशेखिये ॥
वचन विलास कोऊ, कैसेही बखानि कहैं;
व्योममाहिं चित्र कहौ, कैसे करि लेखिये ।
अनुभव किये एक, दोई न अनेक कछु;
सुंदर कहत ज्यूं है, त्यूंही ताहि पेखिये ॥७॥
वचनहि वेद विधि, वचनहि शास्त्र पुनि;
वचन समृति अरु, वचन पुराण जू ।
वचनही और ग्रंथ, वचनही व्याकरण,
वचनही काव्य छंद, नाटक बखान जू ॥
वचनही संसकृत, वचनही पराकृत;
वचनही भाषा सब, जगतमें जान जू ।
वचनके परे है सो, वचनमें आवै नहीं;
सुंदर कहत वही, अनुभौ प्रमान जू ॥८॥
इंद्रि नहिं जानि सकै, अल्प ज्ञान इंद्रिनको;
प्राणहु न जानि सकैं, श्वास आवै जाइ है ।
मनहुँ न जानि सकै, संकल्प[४] विकल्प करै;
बुद्धिहु न जानि सकै, सुन्यो सब ताइ है ॥
चित्त अहंकार पुनि, एकहू न जानि सकै;
शब्दहु न जानि सकै, अनुमान पाइ है ।

---

१ गुप्त–छिपा । २ प्रकट । ३ बैटा । ४ मनकी भावना करना और लीन होना ।

सुंदर कहत ताहि, कोऊ नहिं जानि सकै;
दीवा करि देखिये सो, ऐसा नहिं लाइ है ॥९॥

इन्दव छन्द

श्रोत्र[1] न जानत चक्षु[2] न जानत, जानत नाहिं जु सूंघत घ्रानै ।
जानि सपर्स त्वचा न सकै पुनि, जानत नाहिं जु जीभ बखानै ।
मन न जानत बुद्धि न जानत, चित्त अहंकार क्यूं पहिचानै ।
सुंदर शब्दहु जानि सकै नहिं, आतम आपकूं आपहि जानै ॥१०॥
सूरके तेजसे सूरज दीसत, चन्द्रके तेजसे चन्द्र उजासै ।
तारेके तेजते तारेहु दीसत, बीजुल तेजते बीजु चकासै ॥
दीपके तेजते दीपक दीसत, हीरेके तेजते हीरोहि भासै ।
तैसेही सुंदर आतम जानहु, आपके ज्ञानते आप प्रकासै ॥११॥
कोउ कहै यह सृष्टि स्वभावते, कोउ कहै यह कर्मते सृष्टी ।
कोउ कहै यह काल उपावत, कोउ कहै यह ईश्वर तिष्टी ॥
कोउ कहै यह ऐसेही होवत, क्यूं करि मानिय बात अनिष्टी ।
सुंदर एक किये अनुभौ[3] बिनु, जानिसकै नहिं बाझहि दृष्टी ॥१२॥
कोउ तौ मोक्ष अकाश बतावत, कोउ तौ मोक्ष पतालके माहीं ।
कोउ तौ मोक्ष कहै पृथिवीपर, कोउ कहै कहुँ और कहाहीं ॥
कोउ बतावत मोक्ष शिलापर, कोउक मोक्ष मिटै परछाहीं ।
सुंदर आतमके अनुभौ[4] बिनु, और कहूं कोइ मोक्षहि नाहीं ॥१३॥
मूएते मोक्ष कहें सब पंडित, मूएते मोक्ष कहैं पुनि जैना ।
मूएते मोक्ष कहैं ऋषि तापस, मूएते मोक्ष कहै शिव सैना ॥
मूएते मोक्ष मलेच्छ कहैं पुनि, धोखेहि धोखे बखानत बैना ।
सुंदर आतमको अनुभौ सोइ, जीवत मोक्ष सदा सुखचैना ॥१४॥

मनहर छन्द

कोऊ तौ कहत ब्रह्म, नाभिके[5] कमल मध्य;

---

१ कान । २ आंखें । ३ निश्चय । ४ ज्ञान । ५ तोंदी ।

कोऊ तौ कहत ब्रह्म, हृदयमें प्रकाश है ।
कोऊ तौ कहत कंठ, नासिकाके अग्रभाग;
कोऊ तौ कहत ब्रह्म, भ्रुकुटीमें[1] वास है ।।
कोऊ तौ कहत ब्रह्म, दशवें दुबार बीच;
कोऊ तौ कहै भ्रमर, गुफामें निवास है ।
पिंडमें ब्रह्मांडमें, निरंतर विराजै ब्रह्म;
सुंदर अखंड जैसे, व्यापक आकाश है ।।१५।।
पाँव जिन गह्यो सो तो, कहत है ऊखर सो;
पुच्छ जिन गह्यो तिन, लावसो सुनायो है ।
सूंड जिन गहि तिन, डगलेकी बाँह कही ।
दंत जिन गही तिन, मूसर दिखायो है ।।
कान जिन गह्यो तिन, सूपसो बनाय कह्यो;
पीठ जिन गही तिन, बिटोरा बतायो है ।
जैसो है वैसे ही ताहि, सुंदर सु अक्षी जानै;
आँधरेने हाथी देखि, झगरो मचायो है ।।१६।।
न्यायशास्त्र कहत है, प्रगट ईश्वरवाद;
मीमांसाहि शास्त्रमाहिं, कर्मवाद कह्यो है ।
वैशेषिक शास्त्र पुनि, कालवादी है प्रसिद्ध;
पातंजलि शास्त्रमाहिं, योगवाद लह्यो है ।।
सांख्य शास्त्रमाहिं पुनि, प्रकृति—पुरुष—वाद;
वेदांत जु शास्त्र तिन, ब्रह्मवाद गह्यो है ?
सुंदर कहत षट्—शास्त्रमाहिं भयो वाद;
जाके अनुभव[2] ज्ञान, वादमें न बह्यो है ।।१७।।
प्रज्ञानमानंदं[3] ब्रह्म, ऐसे ऋगवेद कहै;
अहं[4] ब्रह्म अस्मि[5] इति, यजुर्वेद यूं कहै ?

---

१ भौंहे। २ अनुमान। ३ जो ज्ञान में आनन्दित रहे अर्थात् निर्गुण ब्रह्म। ४ मैं। ५ हूँ।

तत्त्वमसि[१] इति साम, वेद यूं बखानत है;
अयं आत्मा ब्रह्म कहि, अथर्वण यूं लहै ।।
एक एक वचनमें, तीन पद हैं प्रसिद्ध;
तिनको विचार करि, अर्थ तत्त्वकूं गहै ।
चारिवेद भिन्न भिन्न, सबको सिद्धांत[२] एक;
सुंदर समुझि करि, चुप चाप ह्वै रहै ।।१८।।
इंद्रिनके भोग जब, चाहै तब आय रहै;
नाशवन्त ताते, तुच्छानंद यूं सुनायो है ।
देवलोक इंद्रलोक, ब्रह्मलोक शिवलोक;
वैकुण्ठके सुखलौं, गणितानन्द गायो है ।
अक्षय[३] अखण्ड एक,-रस परिपूरण है;
ताहिते पूरणानन्द, अनुभौते पायो है ।
याहिके अन्तरभूत, आनन्द जहांलौं और;
सुंदर समुद्रमाहिं, सर्व जल आयो है ।।१९।।
एक तौ मायाविलास, जगत प्रपंच[४] यह;
चारि खानि भेद पाय, द्वैत भासि रह्यो है ।
दूसरो विषै विलास, इंद्रिनके विषै पंच;
शब्द सपरस रूप, रस गंध रह्यो है ।।
तीसरो वाक्य विलास, सो तौ सब वेदमाहिं,
वरणिके जहाँ लगि, वचनते कह्यो है ।
चौथो ब्रह्मको विलास, तिहूंको अभाव[५] जहाँ;
सुंदर कहत वह, अनुभौते लह्यो है ।।२०।।
जीवतही देवलोक, जीवतही इन्द्रलोक;
जीवतही जन तप, सत्य लोक आयो है ।

---

१ तुम हो । २ आशय, विचार मत । ३ अमर । ४ बखेड़ा, पाखण्ड, सृष्टि ।
५ न मिलना ।

जीवतही विधिलोक, जीवतही शिवलोक;
जीवतही वैकुण्ठ लोक, जो अकुंठ गायो है ।।
जीवतही मोक्षशिला, जीवतही ह्वेस्त[1] माहिं;
जीवतही निकट, परमपद पायो है ।
आतमाको अनुभव, जिनकूं जीवन भयो;
सुंदर कहत तिन, संशय[2] मिटायो है ।।२१।।
क्षिति भ्रम जल भ्रम, पावक पवन भ्रम;
व्योम भ्रम तिनको, शरीर भ्रम मानिये ।
इंद्रिय दशहु भ्रम, अन्तःकरण भ्रम;
तिनहीके देवता सो, भ्रमते बखानिये ।।
सत्त्व रज तम भ्रम, पुनि अहंकार भ्रम;
महतत्त्व प्रकृति, पुरुष भ्रम मानिये ।
जोई कछु कहिये सो, सुंदर सकल भ्रम;
अनुभव किये एक, आतमाही जानिये ।।२२।।
भूमिहु विलीन[3] होइ, आपहु विलीन होइ;
तेजहु विलीन होइ, वायु जो बहतु है ।
व्योमहु विलीन होइ, त्रिगुण विलीन होइ;
शब्दहु विलीन होइ, अहं जो कहतु है ।।
महतत्त्व लीन होइ, प्रकृति विलीन होइ;
पुरुष विलीन होइ, देह जो गहतु है ।।
सुंदर सकल लोक, कहिये सो लीन होइ;
आतमाके अनुभव, आतमा रहतु है ।।२३।।
मायाकी अपेक्षा ब्रह्म, रात्रिकी अपेक्षा दिन;
जड़की अपेक्षा करि, चेतन बखानिये ।
अज्ञान अपेक्षा ज्ञान, बन्धकी अपेक्षा मोक्ष;

---

१ खुला हुवा । २ संदेह । ३ नष्ट होना ।

द्वैतकी अपेक्षा सो तौ, अद्वैत प्रमानिये ॥
दु:खकी अपेक्षा सुख, पापकी अपेक्षा पुण्य;
झूंठकी अपेक्षा ताहि, सत्य करि मानिये ।
सुंदर सकल यह, वचन विलास भ्रम;
वचन रहित अवचन, सोई जानिये ॥२४॥
आतमा कहत गुरु, शुद्ध निरबेध नित;
सत्य करि मानौ सो तौ, शब्दहू प्रमान है ।
जैसे व्योम व्यापक, अखंड परिपूरण है;
व्योम उपमाते उप,–मान सो प्रमान है ॥
जाकी सत्ता[१] पाइ सब, इंद्रिय चेतन होइ;
याही अनुमान,[२] अनुमानहू प्रमान है ।
अनुभव जाने तब, सकल संदेह मिटै;
सुंदर कहत यह, प्रत्यक्ष प्रमाण है ॥२५॥
एक घर दोय घर, तीन घर चार घर;
पञ्च घर तजै तब, छठो घर पाइये ।
एक एक घरके, आधार[३] एक एक घर;
एक घर निराधार,[४] आपही दिखाइये ॥
सो तौ घर साक्षीरूप, घर घरमें अनूप;
ताहू घर मध्य कोऊ, दिन ठहराइये ।
ताके परे साक्षी न, असाक्षी न सुंदर कछु;
वचन अतीत कहूं, आइ है न जाइये ॥२६॥
एक तौ श्रवण ज्ञान, पावक[५] ज्यूं देखियत;
माया जल परसत, वेगि[६] बुझि जात है ।
एक है मनन ज्ञान, बिजली ज्यूं घन मध्य;
माया जल वरषत, तामें न बुझात है ॥

---

१ शक्ति । २ अन्दाज । ३ सहारा । ४ बेसहारेके । ५ अग्नि । ६ शीघ्र ।

एक निदिध्यास ज्ञान, बडवा अनल जैसे;
प्रकट समुद्रमाहिं, माया जल खात है ।।
अनुभव साक्षात् ज्ञान, प्रलयको अग्निसम;
सुंदर कहत द्वैत, प्रपंच विलात है ।।२७।।
भोजनकी बात सुनि, मनमें मुदित भयो;
मुखमें न परे जौलौं, मेलिये न ग्रास है ।
सकल सामग्री आनि, पापकूं करन लाग्यो;
मनन करत कब, जीमंहूं ये आस है ।।
पाक जब भयो तब, भोजन करन बैठो;
मुखमें मेलत जाइ, यही निदिध्यास है ।
भोजन पूरन करि, तृपत भयो है जब;
सुंदर साक्षातकार, अनुभौ प्रकाश है ।।२८।।
श्रवण करत जब, सबसूं उदास होइ;
चित्त एकाग्रह[1] आनि, गुरुमुख सुनिये ।
बैठिके एकांत ठौर, अंतहकरणमाहिं;
मनन करत फेर, उहै ज्ञान गनिये ।।
ब्रह्म अपरोक्ष जानि, कहत है "अहं ब्रह्म"
सोहं सोहं होइ सदा, निदिध्यास धुनिये ।
सुंदर साक्षातकार, कीटहीते[2] होइ भृंग;
यह अनुभव यह, स्वस्वरूप भनिये ।।२९।।
जबही जिज्ञासा होइ, चित्त एक ठौर आनि;
मृग ज्यूं सुनन नाद, श्रवण सो कहिये ।
जैसे स्वाति बूँदहूकूं, चातक रटत पुनि;
ऐसेहि मनन करै, कब बूँद लहिये ।।
रातिमें चकोर जैसे, चंद्रमाको धरै ध्यान,
ऐसे जानि निदिध्यास, दृढ करि गहिये ।

---

१ एक जगह कर । २ क्रीड़ा ।

यहै अनुभव यहै, कहिये साक्षातकार;
सुंदर पारेते गलि, पानी होइ रहिये ॥३०॥
काहूकूं पूछत रंक, धन कैसे पाइयत;
कान देके सुनत, श्रवण सोई जानिये ।
उन कह्यो धन हम, देख्यो है फलानी ठौर;
मनन करत भयो, कब घर आनिये ।
फेरि जब कह्यो धन, गड्यो तेरे घरमाहिं;
खोदन लग्यो है जब, निदिध्यास ठानिये ।
धन निकस्यो है जब, दारिद गयो है तब;
सुंदर साक्षातकार, नृपति[1] बखानिये ॥३१॥
चकमक ठोकेते, चमतकार[2] होत कछु;
ऐसेही श्रवण ज्ञान, तबही लौं जानिये ।
करणमाहिं लागै जब, प्रकटै पावक[3] ज्ञान;
सुलगत जाइ वह, मनन बखानिये ।
वर्त्तमान भये काठ, कर्मनकूं जरावन;
यही निदिध्यास ज्ञान, ग्रंथनमें गानिये ।
सकल प्रपंच यह, झारिके[4] समाइ जात;
सुंदर कहत यह, अनुभौ प्रमानिये ॥३२॥

इति आत्म अनुभवको अंग संपूर्ण ॥३३॥

अथ आश्चर्यको अंग ३४.

मनहर छन्द

वेदको विचार सोई, सुनिके संतन मुख;
आपहू विचार करि, सोइ धारियतु है ।
योगकी युगति जानि, जगते उदास होइ;
शून्यमें समाधि लाइ, मन मारियतु है ॥

---

१ राजा । २ प्रकाश दीप्ति–रोशनी । ३ अग्नि । ४ सब–समाप्त ।

ऐसे ऐसे करत करत, केते दिन बीते;
सुंदर कहत अजहूं, विचारियतु है ।
कारोही न पीरो न तो, तातोही न सीरो[१] कछु;
हाथ न परत ताते, हाथ झारियतु है ।।१।।
मनको अगम[२] अति, वचन थकित होत;
बुद्धिहु विचार करि, बहु खंडियतु है ।
श्रवण न सुनै ताहि, नैनहू न देखै कछु;
रसनाको[३] रस सब, रस छाँड़ियतु है ।
त्वकको[४] सपर्श नाहिं, घ्राणको न विषै होइ;
पगनहू करि जित, तित हिंडियतु है ।
सुंदर कहत अति, सूक्षम स्वरूप कछु;
हाथ न परत ताते, हाथ मिडियतु है ।।२।।
गुफाकूं संवारत हैं, आसनहू मारि करि;
प्राणहीकूं धारि, धारणा कसीटियतु है ।
इंद्रिनकूं घेरि करि, मनहूकूं फेरि पुनि;
त्रिकुटिमें हेरि हेरि, हियो चीटियतु है ।।
सब छटिकाय पुनि, शून्यमें समाय तहाँ;
समाधि लगाय करि, आँख मीटियतु है ।
सुंदर कहत हम, औरहु किये उपाय;
हाथ न परत ताते, हाथ छीटियतु है ।।३।।
बोलैही न मौन धरै, बैठो है न गौन[५] करै;
जागैही न सोवै न तौ, दूर है न नीरो है ।
आवैही न जात न तौ, थिर अकुलात पुनि;
भूखोही न खात कछु, तातोही न सीरो है ।।
लेत है न देत कछु, हेत न कुहेत पुनि;
श्याम है न श्वेत[६] अरु, रातौ[७] है न पीरो है ।

१ ठंढा । २ अथाह । ३ जिह्वा । ४ त्वचा–खाल । ५ चलना । ६ सफेद । ७ लाल।

दूबरो न मोटो कछु, लाँबोही न छोटो ताते;
सुंदर कहत कछु, काँचही न हीरो है ।।४।।
भूमिही न आप न तौ, तेजही न ताप न तौ;
वायुही न व्योम न तौ, पंचको पसारो है ।
हाथही न पाँव न तौ, नैन बैन भाव न तौ;
रंकही न राव न तौ, वृद्धही न बारो है ।।
पिंडहीं न प्राण न तौ, ज्ञान न अज्ञान न तौ;
बंध निरवान न तौ, हरवो न भारो है ।
द्वैत न अद्वैत न तौ, मीत न अमीत न तौ;
सुंदर कह्यो न जाइ, मिल्योही न न्यारो है ।।५।।

इन्दव छन्द

पाप न पुण्य न स्थूल[1] न शून्य न, बोलै न मौन न सोवै न जागै ।
एक न दोइ न पुर्ष न जोइ, कहै कहाँ कोइ न पीछे न आगै ।
वृद्ध न बाल न कर्म न काल न, ह्रस्व विशाल न जूझैं न भागै ।
बन्ध न मोक्ष अप्रोक्ष व प्रोक्ष न, सुंदर है न असुंदर लागै ।।६।।
तत्त्व अतत्त्व कह्यो नहिं जात जु, शून्य अशून्य उरै न परै है ।
ज्योति अज्योति न जानि सके कोउ,आदि न अन्त जिवै न मरै है।
रूप अरूप कछू नहिं दीसत, भेद अभेद करै न हरै है ।
शुद्ध अशुद्ध कह्यो पुनि कौन जु, सुंदर बोलै न मौन धरै है ।।७।।
खोजत खोजत खोजि गये पुनि खोजत है अरु खोजहि आने ।
गावत गावत गाइ रहे सब, गावत है पुनि गाइहि गाने ।
देखत देखत देखि थके सब, दीसे नहीं कछु ठौर ठिकाने ।
बूझत बूझत बूझिके सुंदर, हेरत हेरत हेर हिराने ।।८।।
पिण्डमें है पर पिण्ड मिलै नहिं, पिंड परे पुनि त्यूंहि रहावै ।
श्रोत्रमें है पर श्रोत्र सुनै नहिं, दृष्टिमें है पर दृष्टि न आवै ।
बुद्धिमें है पर बुद्धि न जानत, चित्त में है पर चित्त न पावै ।

---

१ मोटा ।

शब्दमें है पर शब्द थक्यो कहि, शब्दहु सुंदर दूर बतावै ।।९।।
एकहि ब्रह्म रह्यो भरपूर तु, दूसरा कौन बतावन हारो ।
जो कहि जीव करै परमान तु, जीव कहा कछु ब्रह्मते न्यारो ।
जो कहि जीव भयो जगदीशते, तौ रवि माहिं कहाँको अंधारो ।
सुंदर मौन गही यह जानिकै, कौनहु भाँति न ह्वै निरधारो[1] ।।१०।।
भूमिहु तैसेहि आपहु तैसेहि, तैसेहि तेज रु तैसेहि पौना[2] ।।
व्योमहु तैसेहि आहि अखंडित, तैसेहि ब्रह्म रह्यो भरि भौना[3] ।
देह सँयोग वियोग भयो तब, आयोसो कौन गयौ तीहि कौना ।
जो कहिये कहते न बनै कछु, सुंदर जानि गही मुख मौना ।। ११।।
जो हम खोज करैं अभिअंतर, सो वह खोज उरेहि बिलावै ।
जो हम बाहिरकूं उठि दौरत, तौ कछु बाहिर हाथ न आवै ।।
जो हम काहूकूं पूछत है पुनि, सोहि अगाध[4] अगाध बतावै ।
ताहिते कोउ न जानि सकै तिहि,सुंदर कौनसि ठौर रहावै।। १२।।
नैन न वैन न चैन न आश न, वास न खास न प्यास न याते ।
शीत न घाम न ठौर न ठाम न, पुर्ष न वाम[5] न मात न ताते ।।
रूप न रेष न शेष[6] अशेष न, श्वेत न पीत न श्याम न राते ।
सुंदर मौन गही सिद्ध साधक, कौन कहै उसकी मुख बाते ।। १३।।
वेद थके कहि तंत्र थके कहि, ग्रन्थ थके निशि वासर गाते ।
शेष थके शिव इंद्र थके पुनि, खोज कियो बहु भाँति विधाते[7] ।।
पीर थके पुनि मीर थके पुनि, धीर थके बहु बोलि गिराते ।
सुंदर मौन गही सिद्ध साधक, कौन कहै उसकी मुख बाते ।। १४।।
योगी थके कहि जैन थके ऋषि, तापस थाकि रहे फल खाते ।
संन्यासि थके वनवासि थके जु, उदासि थके बहु फेर फिराते ।।
शेखहु शालिक और हुं लाइक, थाकि रहे मनमें मुसकाते ।
सुंदर मौन गही सिद्ध साधक, कौन कहै उसकी मुख बाते ।। १५।।

इति आश्चर्यको अंगसंपूर्ण ।।३४।।

---

१ ठीक । २ वायु । ३ घर । ४ अथाह । ५ स्त्री । ६ बाकी । ७ ब्रह्मा ।

श्रीपरमात्मने नमः

ज्ञानसमुद्र

प्रथमोल्लासः १.

गुरुशिष्यलक्षणनिरूपण

मंगलाचरण ।छप्पय छन्द

प्रथम वंदि[1] परब्रह्म, परम आनंद स्वरूपम् ।
द्वितिय वंदि गुरुदेव, दियो जिहिं ज्ञान अनूपम्[2] ।।
तृतिय वंदि सब सन्त, जोरि कर[3] तिनके आगे ।
मन वच काय प्रणाम, करत भय भ्रम सब भागे ।।
इहि भाँति मंगलाचरण करि, सुंदर ग्रन्थ बखानिये ।
तहँ विघ्न[4] कोउ उपजै नहीं; यह निश्चय करि मानिये।१।

दोहा छन्द

ब्रह्म प्रणम्य प्रणम्य गुरु, पुनि प्रणम्य सब सन्त ।
करत मंगलाचरण इह, नाशत विघ्न अनन्त[5] ।।२।।
उहै ब्रह्म गुरु संत उह, वस्तु विराजत एक ।
वचनविलास विभाग[6] त्रय,[7] वंदन भाव विवेक ।।३।।

ग्रंथवर्णन ।दोहा छन्द

वरण्यो चाहत ग्रन्थको, कहां बुद्धि मम क्षुद्र[8] ।
अति अगाध (मु) पुनि कहत हैं, सुंदर ज्ञानसमुद्र ।।४।।

---

१ नमस्कार । २ अद्‌भुत । ३ हाथ । ४ बाधा । ५ बेसुमार । ६ हिस्सा खण्ड ।
७ तीन । ८ छोटी–स्वल्प ।

चौपाई छन्द

ज्ञानसमुद्र ग्रन्थ अब भाषों । बहुत भाँति मनमें अभिलाषों[1] ।।
यथाशक्ति[2] हो वरणि सुनाऊं । जो सद्गुरुपहिं आज्ञा पाऊं ।।५।।

सोरठा छन्द

है यह अति गंभीर,[3] उठत लहरि[4] आनन्दकी ।
मिष्ट सु याको नीर,[5] सकल पदारथ[6] मध्य हैं।।६।।

इन्दव छन्द

जाति जिती सब छन्दनकी बहु, सीप भई इहि सागरमाहीं ।
है तिनमें मुकताफल[7] अर्थ, लहै उनको हितसों अवगाहीं[8] ।।
जे नर जान कहावत हैं अति, गर्वभरे तिनकी गमि नाहीं ।
सुंदर पैठि सकै नहिं जीवत, है बुड़की मरि जीवहिं जाहीं ।।७।।

जिज्ञासुलक्षण ।सवैया छन्द

जे गुरु भक्त विरक्त जक्तसों, है तिनके सन्तनको भाव ।
वे जिज्ञासु उदास रहत हैं, गिनत न काहू रंक न राव ।।
वाद विवाद करत नहिं कबहूं, वस्तु जानिबेको अति चाव ।
सुंदर जाकी मति है ऐसी, सो पैठेंगे यहि दरियाव ।।८।।

छप्पय छन्द

सुत कलत्र निज देह, आपको बन्धन जानत ।
छूटौं कौन उपाय, यहै उर अन्तर आनत ।।
जन्म मरणकी शंक, रहै निशि दिन मनमाहीं ।
चौरासीके दुःख, नही कछु वरणे जाहीं ।।
इहि भांति रहत शोचत सदा, सन्तनको पूछत फिरै ।
है कोई ऐसो सदगुरु, जो मेरो कारज करै ।।९।।

---

१ इच्छा । २ बलानुसार । ३ गहरा । ४ तरङ्ग । ५ पानी । ६ वस्तु । ७ मोती ।
८ स्नान करना ।

गुरुदेवकी दुर्ल्लभता ।चौपय्या छन्द

गुरुदेव विना नहिं मारग[1] सूझै, गुरु बिन भक्ति न जानै ।
गुरुदेव विना नहिं संशै भाजै, गुरु बिनु लहै न ज्ञानै ।।
गुरुदेव विना नहिं कारज होई, लोक वेद यों गावै ।
गुरुदेव विना नहिं सतगति कोई, गुरु गोविन्द बतावै ।।१०।।

तोटक छन्द

गुरुदेव विना नहिं भाग जगै, गुरुदेव विना नहिं प्रीति लगै ।
गुरुदेव विना नहिं शुद्ध हृदं, गुरुदेव विना नहिं मोक्षपदं[2] ।।११।।

मनहर छन्द

गुरुके प्रसाद बुद्धि, उत्तम दशाको गहै;
गुरुके प्रसाद भव,[3] दुःख बिसराइये ।
गुरुके प्रसाद प्रेम, प्रीतिहु अधिक बढ़ै;
गुरुके प्रसाद राम, नाम गुण गाइये ।।
गुरुके प्रसाद सब, योगकी जुगति दीसै;
गुरुके प्रसाद शून्यमें, समाधि लाइये ।
सुंदर कहत गुरुदेव, जो कृपालु होई;
गुरुके प्रसाद, तत्त्वज्ञान पुनि पाइये ।।१२।।

दोहा छन्द

गुरुके शरणहिं आइये, तबहीं उपजै ज्ञान ।
तिमिर[4] कहौं कैसे रहै ? प्रकट होइ जब भान ।।१३।।

गुरुलक्षण । रोला छन्द

चित्त ब्रह्म लयलीन, नित्त शीतलसो हिर्दय[5] ।
क्रोधरहित सब साधि, साधु पद नाहिन निर्दय ।
अहंकार नहिं लेश,[6] महन्त[7] सबन सुख दिज्जय ।
शिष्य परीक्ष्य विचारि, जगत महिं सो गुरु किज्जय।।१४।

---

१ रास्ता । २ मुक्ति । ३ संसार । ४ अंधकार । ५ अन्तःकरण । ६ जरासा ।
७ महात्मा ।

छप्पय छन्द

सदा प्रसन्न स्वभाव, प्रगट सर्वोपर राजय ।
तृप्ति ज्ञान विज्ञान, अचल कूटस्थ विराजय ।।
सुखनिधान सर्वज्ञ, मान अपमान न जाने ।
सरासर विवेक, सकल मिथ्या भ्रम माने ।।
भिद्यंते[१] हृदय ग्रन्थिको, छिद्यंते[२] सब संशया ।
कहि सुंदर तो सतगुरु सही, चिदानंद[३] घनचिन्मया।।१५।

पमंगल छन्द

शब्द ब्रह्म परिब्रह्म, भली विध जानिये ।
पांच तत्त्व गुण तीन, मृषा करि मानिये ।।
बुद्धिवन्त सब संत, कहैं गुरु सोइ रे ।
और ठौर शिष जाइ, भ्रमे जिनि काइ रे ।।१६।।

नंदि छन्द

ब्रह्म भूत अवस्था जा महि होई, सुंदर सोई सतगुरु जाने कोई ।।१७।।

सोरठा छन्द

ऐसे गुरुपै आइ, प्रश्न करै कर जोरिकै ।
शिष्य मुक्त ह्वै जाइ, संशय कोई ना रहै ।।१८।।

गुरुदेवकी प्राप्ति । चौपाई छन्द

खोजत खोजत सतगुरु पायो । भूरिभाग्य[४] जाग्यो शिष आयो ।
देखत [५]दृष्टि भयो आनंदा । यह तो कृपा करी गोविंदा ।।१९।।

दोहा छन्द

गुरुको दरशन पायके, शिष पायो संतोषु ।
कारज मेरो अब भयो, मनमें मान्यो मोषु ।।२०।।

---

१ विदीर्ण करना । २ काटना । ३ ईश्वरचैतन्य । ४ बड़ा भाग्य । ५ नजर ।

शिष्यकृत प्रार्थनाष्टक । सोरठा छन्द

शिश नाइ कर जोरि, शिष्य सु प्रारथना करी ।
हे प्रभु लीजै छोरि, अभयदान मोहिं दीजिये ।।२१।।

अर्द्धभुजंगी छन्द

अहो देव स्वामी, अहं अन्ध कामी ।
कृपा मोहिं कीजै, अभैदान दीजै ।।२२।।
बड़े भाग मेरे, लहे अंघ्रि[1] तेरे ।
तुम्हैं देखि जीजै, अभैदान दीजै ।।२३।।
प्रभू हौं अनाथा,[2] गहो[3] क्यों न हाथा ।
दया क्यों न कीजै, अभैदान दीजै ।।२४।।
दुखी दीन प्रानी, कहो ब्रह्म वानी ।
हृदो प्रेम भीजै, अभैदान दीजै ।।२५।।
जिते जैन देखे, सबै वेष पेखे ।
तुम्हैं चित्त धीजै, अभैदान दीजै ।।२६।।
फिरचो देश देशा, किये दूरि केशा ।
नहिं यों पतीजै, अभैदान दीजै ।।२७।।
गयो आयु सारो, भयो शोच भारो ।
वृथा देह छीजै, अभैदान दीजै ।।२८।।
करो मौज ऐसी, रहै बुद्धि वैसी ।
सुधा[4] नित्य पीजै, अभैदान दीजै ।।२९।।

गुरुदेवकी प्रसन्नता । सोरठा छन्द

मुदित[5] भये गुरुदेव, देखि दीनता शिष्यकी ।
सबै बताऊं भेव, जोई जो तू पूछि है ।।३०।।

---

१ चरण । २ दीनता । ३ पकड़ो । ४ अमृत । ५ प्रसन्न ।

शिष्यकी प्रसन्नता । **पद्धरी छन्द**

कर जोर उभै[1] शिषकरि प्रणाम,तब प्रश्न कीन मन धरि विराम।
हो कौन कौन यह जगत आहि, पुनि जन्म मरण प्रभु कहहु काहि ।।३१।।

श्रीगुरुरुवाच- **बोधक छन्द**

हे चिदानन्दघन ब्रह्म तु सोई, देह संयोगते जिवत भ्रम होई ।
जगत है सकल यहअनछतो जानो,जनम अरुमरण यहस्वप्न करिमानो।।

शिष्य उवाच -**गीतक छन्द**

जो चिदानन्द स्वरूपस्वामिं, ताहि भ्रम कहो क्यों ।
तिहि देहके संयोग ह्वैके, जिवत मानी क्यों लह्यो ।।
यह अनछत्रो संसार कैसे, जो प्रत्यक्ष प्रमानिये ।
जनम मरण प्रवाह[2] जैसो, स्वप्नकरि क्यों मानिये।। ३३।।

श्री गुरुरुवाच -**दोहा छन्द**

भ्रमहीको भ्रम ऊपजै, चिंदानन्द रस एक ।
मृगजल प्रत्यक्ष देखिये, तैसे जगत विवेक[3] ।।३४।।

चौपाई छन्द

निद्रामें सूतो है जौलों । जनम मरणको अन्त[4] न तौलों ।
जागि परे तब स्वप्न बखाना । तब मिटि जाइ सकल अज्ञाना[5] ।।३५।।

शिष्य उवाच - **सोरठा छन्द**

स्वामी यह संदेह, जागै सोवै कौन सो ।
यह जो जडमन देह, भ्रमहीको भ्रम क्यों भयो ।।३६।।

श्रीगुरुरुवाच -**कुंडलिया छन्द**

शिष्य कहाँ लों पूछि है, मैं तो उत्तर दीन ।
जब लगि चित्त न आइ है, तब लगि हृदय मलीन ।।

---

१ दोनों । २ धारा । ३ ज्ञान । ४ आखिर । ५ मूर्खता ।

तबलगि हृदय मलीन,[1] यथारथ[2] कैसे जाने ।
भ्रमे त्रिगुणमें बुद्धि, आप नहीं पहिचाने ।।
कहिबो सुनिबो करत, ज्ञान नहीं उपजे जहँलों ।
मैं तो उत्तर दीन, शिष्य पूछैगो कहँलों ।।३७।।

इति श्रीसुंदरदासबिरचिते ज्ञानसमुद्रे गुरुशिष्यलक्षणनिरूपणं नाम प्रथमोल्लासः ।।१।।

अथ द्वितीयोल्लासः २

उत्तम–मध्यम–कनिष्ठ–भक्तियोगनिरूपण

शिष्य उवाच – **दोहा छन्द**

स्वामी हृदय मलीन मम, शुद्ध कवन विधि होइ ।
सोई कहो विचारिकै, संशय[3] रहै न कोइ ।।१।।

श्रीगुरुरुवाच– **चौपाई छन्द**

सुनहु शिष्य यह तीनि उपाई । भक्तियोग हठयोग कराई ।।
पुनि सांख्य सुयोगहि तोहिं बतावै।तबतू शुद्ध स्वरूपहि पावै।।२।।

शिष्य उवाच– **पद्धरी छन्द**

अब भक्ति कहो गुरु कै प्रकार,[4] हठयोग अंग पाउं विचार ।
पुनि सांख्य सुयोग बताउ नाथ,भवसागर बूड़त गहहु[5] हाथ।।३।।

श्रीगुरुरुवाच– **सवैया छन्द**

शिषि प्रथमहिं नवधाभक्ति कहतों, नव प्रकार हैं ताको भेद ।
दशवीं प्रेमलक्षणा कहिये, सो पावैं जो ह्वै निर्वेद ।।
पराभक्ति है ताके आगे, सेवक सेव्य न होइ विछेद ।
उत्तम मध्यम कनिष्ठ[6] तीनि विधि,सुन्दर मिटिहै इनते खेद[7]।।४।

---

१ मैला । २ जैसा है तैसा । ३ द्विविध । ४ तरह । ५ पकड़ो । ६ छोटा । ७ दुःख।

शिष्य उवाच– **छप्पय छन्द**

अब नवधा भक्ति बखानि, कहो गुरु भिन्न भिन्न[1] करि ।
प्रेमलक्षणा कौन, सुनावहु शीश हाथ धरि ।।
पराभक्तिको भेद, कहो गुरु कौन प्रकारा ।
को उत्तम को मध्य, कौन कनिष्ठ निरधारा ।।
यह दयासिंधु मोसो कहो, तुम समान नहिं कोइ है ।
जब कृपा कटाक्षहि देखिहो, तब मम[2] कारज होइ है।।५।।

श्रीगुरुरुवाच– **चौपाई छन्द**

सुन शिषि नवधा भक्ति विधान[3] । श्रवण कीर्तन[4] सुमिरण जान ।।
पाद सेवनहु अर्चन वन्दन । दास्यभाव सख्यत्व समरपन ।।६।।

सोरठा छन्द

यह नव अंगनि जानि, सहित अनुक्रम[5] कीजियो ।
सबहिनको सुखदानि, भक्ति कनिष्ठा यह कही ।।७।।

शिष्य उवाच – **मालती छन्द**

श्रवण प्रभु कौनको कहिये । कीर्त्तन कौन विधि लहिये ।
अरु सुमिरण कौन कहि दीजै । चरण सेवा सो क्यों कीजै ।।८।।
अर्चना[6] कौन विधि होई । वंदना कहो गुरु सोई ।
दास्य संख्यत्व पहिचानो । निवेदन आत्मा जानो ।।९।।
सोरठा–एक एकको भेव, मोहिं अनुक्रमसो कहो ।
तुम कृपालु गुरुदेव, पूछत विलग न मानिये ।।१०।।

श्रीगुरुरुवाच– **चम्पक छन्द**

शिष्य तोहिं कहों सुनु वानी । सब संतनि साखि बखानी ।
द्वै रूप ब्रह्मके जानो । निर्गुण सगुण पहिचानो ।।११।।
निर्गुण निजरूप नियारा । पुनि सगुण संत अवतारा ।।
निर्गुणकी भक्ति सु मनसों । संतनकी मन अरु तनसों ।।१२।।

---

१ अलग अलग । २ हमारा । ३ रीत । ४ गाना । ५ रीतवार । ६ पूजन ।

श्रवणभक्ति वर्णन

एकाग्रहि[1] चित जु राखै । हरिगुण सुनि रसना[2] चाखै ।।
पुनि सुनै संतकै बैना[3] । यह श्रवणभक्ति सुखचैना ।।१३।।

कीर्तनभक्ति वर्णन

हरिगुण रसना गुन गावै । अतिही कर प्रेम बढ़ावै ।।
यह भक्ति जु कीर्त्तन कहिये । पुनि गुरु प्रसादते[4] लहिये ।।१४।।

स्मरणभक्ति वर्णन

अब सुमिरण द्वै्य प्रकारा । इक रसना नाम उचारा ।।
इक हृदय नाम ठहरावै । यह सुमिरणभक्ति कहावै ।।१५।।

पदसेवनभक्ति वर्णन

निज चरणकमल महि लोटै । मनसा करि पाँइ पलोटै ।।
यह भक्ति चरणकी सेवा । समुझावत हैं गुरु देवा ।।१६।।

अर्चनभक्ति वर्णन । **चामर छन्द**

अब अर्चनाको भेद सुन, शिषि देऊँ तोहिं बताइ ।
आरोपिकै तहँ भाव अपनो, सेइये मन लाइ ।।
रचि भावको मंदिर अनुपम, सकल मूरति माहीं ।
पुनि भाव सिंहासन विराजै, भाव विनु कछु नाहिं।।१७।।
निज भावकी तहँ करै पूजा, बैठि सन्मुख दास ।
तहँ भावहीको कलश भरि धरि, नित्य स्वामी पास।।
त्यों भावहीको उबटनो करि, भाव नीर नह्वाइ ।
करि भावहीके बसन बहुविधि,[5] अंग अंग बनाइ।।१८।।
तहँ भाव केशर भाव चन्दन, भाव करि घसि लेहु ।
पुनि भावही करि चरचि स्वामी, तिलक मस्तक देहु।।
लै भावहीको पुष्प उत्तम, गुहै माल अनूप ।
पहिराइ प्रभुको निरखि[6] नखशिख, भावकें दे धूप।।१९।।

---

१ एकांत । २ जीभ । ३ वचन–बात । ४ कृपा । ५ विचित्र । ६ देखना ।

तहँ भावही ले धरै भोजन, भाव लावे भोग ।
पुनि भावही करिके समर्पें, सकल प्रभुको योग ।।
तहँ भावहीको जोइ दीपक, भाव घृत करि सींच ।
तहँ भावहीकी करै थारी, धरै ताके बीच ।।२०।।
तहँ भावकी घण्टा रु झालरि, शंख ताल मृदंग ।
तहँ भावहीके शब्द नाना, रहै अति सों रंग ।।
तहँ भावहीकी आरती करि, करहि बहुत प्रणाम ।
तहँ स्तुति[1] बहुविधि उच्चरै, धुनि सहि लै लै नाम।।२१।।

अथ स्तुत्यष्टक । **मोतीदास छन्द**

अहो हरि देव न जानत सेव, अहो हरि राइ परो तेरे पाइ ।
सुनो यह गाथ गहो मम[2] हाथ, अनाथ अनाथ अनाथ अनाथ ।।२२।।
अहो प्रभु नित्य अहो प्रभु सत्य, अहो अविनाश[3] अहो अविगत्य ।
अहो प्रभु भिन्न दिसे जु प्रकृत्य, निहत्य निहत्य निहत्य निहत्य ।।२३।।
अहो प्रभु पावन[4] नाम तुम्हार , भजै तिनके सब जाहिं विकार[5]।
करी तुम सन्तन की जु सहाइ, अहो हरि हो हरि हो हरि राइ ।।२४।।
अहो प्रभु हो सर्वज्ञ[6] सयान,[7] दियो तुम गर्भहिते पय[8] पान ।
सो त्यों अब क्यों न करो प्रतिपाल, अहो हरि हो हरि हो हरि लाल ।
भजै प्रभु ब्रह्म पुरेन्द्र महेश भजै सनकादिक नारद शेश ।
भजैं पुनि और अनेकहिं साध,अगाध अगाध अगाध अगाध।।२६।
अहो सुखधाम कहै गुणि नाम, अहो सुखदेन कहै मुनि बैन ।
अहो सुखरूप कहै मुनि भूप, अरूप[9] अरूप अरूप अरूप ।।२७।।
अहो युग आदि कहो युग अन्त, अहो युग मध्य कहैं सब सन्त ।
अहो युग जीवन हो युग जन्त,अनन्त अनन्त अनन्त अनन्त।।२८।।
अहो प्रभु बोलि सके कहा कौनु, गृही सिद्ध साधकही सुख मौन ।
गिरा[10] मन बुद्धि न होइ विचार, अपार[11] अपार अपार अपार।।२९।।

---

१ प्रशंसा । २ मेरा । ३ अमर । ४ पवित्र । ५ मलीनता । ६ सब जाननेवाले । ७ चतुर । ८ दुग्ध–दूध । ९ निराकार । १० वाणी वचन । ११ असीम ।

दोहा छन्द

बहुत प्रशंसा[1] करि कहूं, हौं प्रभु अति अज्ञान ।
पूजा विधि जानो नहीं, शरण राखु भगवान ।।३०।।

वन्दनाभक्ति वर्णन । लीला छन्द

वंदन दोइ प्रकार कहे शिप संभलियम् ।
दंड समान करै तिनसों कर दंड दियम् ।।
ज्यों मन त्यों तन मध्य प्रभुके पाँय परै ।
विधि दोय प्रकार सु वंदन भक्ति करै ।।३१।।

दासत्वभक्ति वर्णन । हंसाला छन्द

नित्य भवसों रहे हस्त[2] जोरे कहे;
कहा प्रभु मोहिं आज्ञा सु होई ।
पलक पतिव्रता पतिवचन खंडे नहीं;
भक्ति दासत्व[3] शिष जानि सोई ।।३२।।

सख्यत्वभक्ति वर्णन । दुर्मिला छन्द

शिष्य शिषापन[4] ताहिं कहैं, हरि आतमके नित संग रहैं ।
पल छांड़त नाहिं समीप सदा, जिनही तिनकूं यह जीव बहै ।।
अब तू फिरिके हरिसों हित राखहि, तोहि सखा दृढ[5] भाव यहै ।
जिमि सुंदर मित्रनि मित्र जपे,यह भक्ति सखापन वेद कहै।। ३३।।

आत्मनिवेदनभक्ति वर्णन । दोहा छन्द

प्रथम समर्पण[6] मन करै, द्वितिय समर्पण देह ।
तृतिय समर्पण धन करै, चतुर[7] समर्पण गेह ।।३४।।

मोतीदास छन्द

गेह[8] दारा[9] धनं, हास दासी जनं;
वाजि[10] हाथी गनं, सर्वं देवो मनं ।।

---

१ बड़ाई, तारीफ । २ हाथ । ३ सेवकाई । ४ शिक्षा । ५ मजबूत । ६ अर्पण करना । ७ चौथा । ८ घर । ९ स्त्री । १० घोड़ा ।

और जे मैं तनं, है प्रभू ते तनं;
शिष्य वाणी सुनं, आतमा अर्पनं[1] ।।३५।।

दोहा छन्द

नवधा भक्तिसु यह कही, भिन्न भिन्न समुझाइ ।
याको नाम कनिष्ठ है, शिष्य सुनहु चित्तलाइ ।।३६।।

प्रेमलक्षणा वर्णन

शिष्य उवाच । **रासा छन्द**

हे प्रभु मोसों कही तुम नौधाभक्ति अह ।
फेरि कहो समुझाइ सुजान कनिष्ठ यह ।।
मध्यहिं भक्ति सुनाय कृपा करि क्यों न अब ।
जानत हो गुरुदेव जु औसर होई कब ।।३७।।

श्रीगुरुरुवाच । **सोरठा छन्द**

शिष्य सुनाऊँ तोहिं, प्रेम लक्षणा भक्तिको ।
सावधान अब होहिं, जो तेरे शिर भाग्य है ।।३८।।

इन्दव छन्द

प्रेम लग्यो परमेश्वरसों तब, भूलि गयो सिगरो घर बारा ।
ज्यों उनमत्त[2] फिरै जितही तित, नेक रही न शरीर सँभारा ।।
श्वास उसास[3] उठे सब रोम, चलै दृग[4] नीर अखंडित[5] धारा ।
सुंदर कौन करै नवधाविधि, छाकि परचो रस पी मतवारा ।।३९।।

नाराच छन्द

न लाज मानै लोककी न वेदको कह्यो करे ।
न शंक भूत प्रेतकी न देव यक्षते डरे ।।
सुने न कान औरकी द्रसै न और इच्छना ।
कहै न मूख और बात, भक्ति प्रेमलच्छना ।।४०।।

---

१ देना । २ बावला । ३ उलटी साँस । ४ आँखें । ५ अटूट ।

रंगीका छन्द

निशि दिन हरिसों चित्तासक्ती, सदा लग्यो सो रहिये ।
सुंदर कोइ न जानि सके यह, भक्ति सु प्रेमलक्षणा कहिये ।।४१।।

बीजुमाला छन्द

प्रेम अधीनों छाक्यो डोलै । क्योंको क्योंही वाणी बोलै ।
जैसे गोपी भूली देहा । तैसो चाहे जासों नेहा ।।४२।।

छप्पय छन्द

कबहुँ हँसी उठि नृत्य, करै रोवन फिर लागे ।
कबहुँक गदगदकंठ,[1] शब्द निकसे नहिं आगे ।।
कबहुँक हृदय उमंग, बहुत ऊंचे स्वर गावे ।
कबहुँक ह्वै मुख मौन, गगन[2] ऐसे रहि जावे ।।
वित्त वित्त हरिसों लग्यो, सावधान कैसे रहै ।
यह प्रेमलक्षणा भक्ति है; शिष्य सुनहु सुंदर कहै।।४३।।

मनहर छन्द

नीर बिनु मीन[3] दुखी, क्षीर बिनु शिशु[4] जैसे,
पीरकी[5] औषधि[6] बिनु, कैसे रह्यो जात है ।
चातक ज्यों स्वाति बूंद, चंदको चकोरि जैसे;
चंदनकी चाहि करि, सर्प अकुलात[7] है ।।
निर्धन[8] ज्यों धन चाहे, कामिनीको[9] कंत[10] चाहे;
ऐसी जाके चाह नाहिं, कछु न सुहात है ।
प्रेमको प्रवाह[11] ऐसो, प्रेम तहाँ नेम कैसे;
सुंदर कहत यह, प्रेमहीकी बात है ।।४४।।

---

१ मुक्तकण्ठ । २ आकाश । ३ मछली । ४ लड़का–पुत्र । ५ पीड़ा । ६ दवा । ७ घबड़ाना । ८ दरिद्र । ९ स्त्री । १० स्वामी । ११ धारा ।

चौपय्या छन्द

यह प्रेम भक्ति जाके घट होई, ताहि कछु न सुहावै ।
पुनि भूख तृषा[1] व्यापे नहिं ताके, निशिदिन नींद न आवै ।।
मुख ऊपर श्वासा पीरीसी है, नैन नीर झर लायो ।
यह प्रगट[2] चित्त दीसत है, जाको प्रेम न दुरै दुरायो ।।४५।।

दोहा छन्द

प्रेम भक्ति सो यह कही, जानत बिरला कोइ ।
हिये कलुषता[3] क्यों रहै, जा घट ऐसी होइ ।।४६।।

पराभक्ति वर्णन

शिष्य उवाच– **चौपाई छन्द**

हे प्रभु प्रेमभक्ति यह गाई । सो तुम मध्यमा सुनाई ।।
उत्तम भक्ति परा प्रभु कैसी । करहु अनुग्रह[4] कहिये जैसी ।।४७।।

श्रीगुरुरुवाच– **दोहा छन्द**

शिष्य तेरि श्रद्धा बड़ी, सुनिबकी अति प्यास ।
पराभक्ति तोसों कहौं, जाते होइ प्रकास ।।४८।।

गीतक छन्द

विच्छेप[5] कबहुँ न होइ हरिसों, निकटवृत्य निवृत्यहीं ।
तहँ सदा सनमुख रहै आगे, हाथ जोरे भृत्यहीं[6] ।।
पल एक कबहुँ न होइ अंतर, टकटकी लागी रहै ।
यह पराभक्ति प्रकाश परिचय[7], शिष्य सुन सतगुरु कहै।।४९।।

इन्दव छन्द

सेवक सेव्य मिल्यो रस पीवत, भिन्न नहीं अरु भिन्न सदाहीं ।
ज्यों जल पिंड धरचो जल बीचसु, पिंड रु नीरु[8] जुदे कछु नाहीं ।।

---

१ प्यासा । २ जाहिर । ३ अन्धता–मलीनता, पाप । ४ कृपा । ५ बिछोह जुहाई ।
६ नौकर । ७ पहिचान । ८ पानी ।

ज्यों दृगमें पुतरी दृग एक, नहीं कछु भिन्न रु भिन्न दिखाहीं ।
सुंदर सेवकभाव सदा यह, भक्ति परा परमातम माहीं ।।५०।।

छप्पय छन्द

श्रवण विना धुनि सुने, नयन विनु रूप निहारे ।
रसना[1] बिनु उच्चरे, प्रशंसा बहु विस्तारै ।।
नृत्य चरण बिनु करै, हस्त बिनु ताल बजावै ।
अंग विना मिल संग, बहुत आनंद बढ़ावै ।।
बिन शीश नवे जहँ सेव्यको, सेवकभाव लिये रहै ।
मिली परमातमसों आतमा, पराभक्ति सुंदर कहै।।५१।।

चन्दना छन्द

सेव्यको जायकै दास ऐसे मिले । एकसो होयपै एक ह्वै ना मिलै ।।
आपनो भाव दासत्व छांड़े नहीं।सो पराभक्ति है भाग्यपावै नहीं।५२।

हरिसंपाणा छन्द

मिलै एक संगा । नहीं भिन्न अंगा ।।
करै यों विलासा । धरै भाव दासा ।।५३।।

चौपाई छन्द

ज्यों मृगतृष्णा धूप मँझारी । एक मेक अरु दीसे[3] न्यारी ।
त्योंही सेवक स्वामी एका।सुख विलास यह भिन्न विवेका।।५४।।

तोटक छन्द

हरिमें हरिदास विलास करै । हरिसों कबहूं न बिछोह परै ।।
हरि अक्षर त्यों हरिदास सदा।रस पीवनकूं यह भाव जुदा।।५५।।

मनहर छन्द

तेजोमय स्वामी तहूं, सेवकही तेजोमय;
तेजोमय चरण नीको, तेजो शिर नावही ।

---

१ जिह्वा । २ यश । ३ दिखाई ।

तेजोमय सब अंग, तेजोमय मुखारविंद;[१]
तेजोमय निरखि नैन, तेजोमय भावही ॥
तेजोमय ब्रह्मकी, प्रशंसा करै तेजोमय;
तेजहीकी रसना, गुणानुवाद गावही ।
तेजोमय सुंदरहू, भाव पुनि तेजोमय;
तेजोमय भक्तिहूंको, तेजोमय पावही ॥५६॥

दोहा छन्द

त्रिविध भक्ति लक्षण कहै, उत्तम मध्य कनिष्ठ ।
शिष्य सुनहु सिद्धांत[२] यह, उत्तम भक्ति गरिष्ठ॥५७॥

इति श्रीसुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे उत्तम मध्यम कनिष्ठ भक्तियोग निरूपणं नाम द्वितीयोल्लासः ॥२॥

अथ तृतीयोल्लासः ३.

अष्ठांगयोगनिरूपण

शिष्य उवाच – चौपाई छन्द

हे प्रभु नवधा कही कनिष्ठा । प्रेमलक्षणा मध्य सुपष्ठा ।
पराभक्ति उत्तमा बखानी । सो तीनों मैं नीके जानी ॥१॥
अब प्रभु योग सिद्धांत सुनाओ । तिनके अंग मोहिं समुझाओ ।
तुम सर्वज्ञ[३] जगतगुरु स्वामी । करहु कृपा अब अंतरयामी ॥२॥

श्रीगुरुरुवाच – दोहा छन्द

तैं शिष पूछ्यो चाहि करि, योग सिद्धांत प्रसंग ॥
तोहिं सुनाऊं हेत करि, अष्ट योगके अंग ॥३॥
तिनके अंतरभूत है, मुद्राबंध समस्त[४] ।
नाड़ी चक्र प्रभाव सब, आवै तेरे हस्त ॥४॥

---

१ मुखकमल । २ मत । ३ सब बातों के जाननेवाले । ४ संपूर्ण ।

छप्पय छन्द

प्रथम अंग यम कहों, दूसरो नेम बताऊं ।
तिसरो आसन भेद, सुनो सब तोहिं सुनाऊं ।।
चतुरथ प्राणायाम; पञ्चमें प्रत्याहारं ।
षष्ठम सुनि धारणा, ध्यान सप्तम विस्तारं ।।
पुनि अष्टम अंग समाधि है, भिन्न भिन्न समझावहूं ।
अब सावधान ह्वै शिष्य सुनु, सो सब तोहिं बतावहूं।।५।।

दोहा छन्द

दश प्रकारके यम कहे, दश प्रकारके नेम ।
उभय[1] अंग पहिले संधे, तब पाछै ह्वै प्रेम[2] ।।६।।
प्रथमहिं यम दृढ़[3] कीजिये, तब ऊपर विस्तार[4] ।
महिलायत जु डिगै नहीं, यों यम लेहु विचार ।।७।।

अथ यमको निर्णय । **छप्पय छन्द**

प्रथम अहिंसा[5] सत्य, जानि अस्तेयकूं त्यागै ।
ब्रह्मचर्य दृढ़ गहै, धृति क्षमसो अनुरागै ।।
दया बड़ो गुण भाग, आर्जव हृदय पुनि आनै ।
मिताहार नित करै, सोई नीकी विधि जानै ।।
यह दश प्रकारके यम कहे, हठप्रदीपिका ग्रन्थमें ।
जो पहिले इनको गहै, सो चलत योगके पंथमें ।।८।।

प्रथम अहिंसाको लक्षण । **दोहा छन्द**

मन करि दोष न कीजिये, वचन न लावै कर्म ।
घात न कीजे देहसों, यहै अहिंसा धर्म ।।९।।

द्वितीय सत्यको लक्षण । **सोरठा छन्द**

सत्यसु दोय प्रकार, एक सत्य जो बोलिये ।
मिथ्या[6] सब संसार, दूजो सत्य सु ब्रह्म है ।।१०।।

---

१ दोनों । २ प्रीति । ३ मजबूत । ४ फैलाव । ५ जान का न मारना । ६ झूठा ।

तृतीय अस्तेयको लक्षण । **चौपाई छन्द**

सुनिये शिष अबहीं अस्तेयं । चोरी द्वै प्रकारकी हेयं ।।
तनुकी चोरी सबहिं बखानै । मनकी चोरी मनहीं जानै ।।११।।

चतुर्थ ब्रह्मचर्यको लक्षण । **प्लवंगम छन्द**

ब्रह्मचर्य इहि भांति भली विधि जानिये ।
काम जु अष्ट प्रकार सही करि मानिये ।।
वाच काँछ दृढ़ वीर्य यतीही होयरे ।
और बात अब नाहिं जितेंद्रिय कोयरे ।।१२।।

पंचम अष्टप्रकार मैथुनको लक्षण

दोहा छन्द

नारी सुमिरण श्रवण पुनि, दृष्टि रु भाषण होइ ।
गुह्य वृत्तांत रु हास्य रति, बहुरि सपर्शहि कोइ।।१३।।

सोरठा छन्द

शिष्य सुनहु यह भेद, मैथुन[1] अष्ट प्रकार तजि ।
कह्यो मुनीश्वर वेद, ब्रह्मचर्य तब जानिये ।।१४।।

षष्ठ क्षमाको लक्षण । **मालती छन्द**

छमा अब सुन शिष्य मोसों । सहनता[2] सब कहों तोसों ।
दु:ख दुष्ट देही ज्यों भारी । दु:सह मुख वचन पुनि गारी ।।१५।।
कबहु नाहिं क्षोभको पावै । उदधि ज्यों अग्नि बुझावै ।।
बहोरी तनु[3] त्रास दै कोई । क्षमा करि सहे शिष्य सोई ।।१६।।

सप्तम धृतिको लक्षण । **इन्दव छन्द**

धीरज धारि रहे अभिअन्तर, जो दु:ख देहहि आप परै जू ।
ऊठत बैठत बोलत चालत, धीरजही धरि पांव धरै जू ।।
जागत सोवत जीवत पीवत, धीरजसों धरि योग करै जू ।
देव दइतहि भूतहि प्रेतहि, कालहुते कबहूं न डरे जू ।।१७।।

---

१ स्त्री संभोग । २ सहनशील–सुशील । ३ शरीर ।

अष्टम दयाको लक्षण । **तोटक छन्द**

सब जीवनके हितका जु कहे, मन वाचक काय दयालु रहे ।
सुखदायकहू सब भाव लिये,शिष्य जानि दया निरवैर हिये।।१८॥

नवम आर्जवको लक्षण

कोमल[1] हृदय रहे निशिवासर, कोमल बोले बानी ।
कोमल दृष्टि निहारै सबको, कोमलता[2] सुखदानी ।।
कोमल भूमि करै नीकी विधि, बीज वृद्धि[3] ह्वै आवै ।
त्यों यह आर्जव लक्षण सुन शिष, जोग सिद्धको पावै ।।१९।।

दशम मिताहारको लक्षण । **पद्धरी छन्द**

जो सात्त्विक[4] अन्न सु करे भक्षि ।
अति तिक्त[5] न मधु[6] रस निरखि अक्षि[7] ।।
तजि[8] भाग चतुरथ गहै सार[9] ।
सुनु शिष्य कह्यो यह मिताहार ।।२०।।

शौचको लक्षण । **चर्पट छन्द**

बाहिर भीतर मज्जन[10] करिये, मृतिका[11] जल करि वपुमल[12] हरिये ।
रागादिक त्यागै हृद शुद्धं शौच उभय शिष जानु प्रवृद्धं ।।२१।।

दोहा छन्द

दश प्रकार यह यम कहे, प्रथम योगको अंग ।
दश प्रकार अब नियम सुनु, भिन्न भिन्न परसंग ।।२१।।

दशविधि नियम वर्णन । **छप्पय छन्द**

तप संतोषहि गहै, बुद्धि आस्तिक जो आनै ।
दान समुझि कर देय, मानसी पूजा ठानै ।।
श्रवण सिधांतै सुनै, लाज मति दृढ करि राखै ।
जाप करै मुख मौन, तहां लगि वचन न भाखै ।।

---

१ मुलायम। २ सुकुमारता। ३ उन्नति—तरक्की। ४ सत्यवक्ता। ५ कड़ुवा। ६मीठा।
७ आंखें। ८ छोड़ना। ९ मूल। १० स्नान। ११ मिट्टी। १२ शरीर का मल।

पुनि होम करै इहिविधि तहां, जैसी विधि सतगुरु कहै ।
दश प्रकारको नियम यम, भाग्य बिना कैसे लहै ।।२३।।

प्रथम तपको लक्षण । **पाइक छन्द**

शब्द स्पर्श रूपहि तजनं, त्यों रस गंध नाहीं भजनं ।
इंद्रिय स्वाद[१] ऐसे हरणं,[२] सो तप जानै नित्य समरणं[३] ।।२४।।

द्वितीय संतोषको लक्षण । **हंसाल छन्द**

देहकी प्रारब्ध[४] आइ आगे रहै, कल्पना[५] छांड़ि निश्चिंत होई ।
पुनि यथा लाभसों वेद मुनि कहत है, परम संतोष शिषजानि सोई ।।२५।।

तृतीय आस्तिक्यको लक्षण । **सवैया छन्द**

शास्त्र रु वेद पुराण कहत हैं, शब्द ब्रह्मको निश्चय धार ।
पुनि गुरुसंत सुनावत सोई, बार बार शिष ताहि विचार ।।
होइ कि नाहिं शोच मत आनहिं, अप्रतीत[६] हृदयते टारि ।
करि प्रतीत विश्वास आनि उर, यह आस्तिक्य बुद्धि निरधारि ।।२६।।

चतुर्थ दानको लक्षण । **कुण्डलिया छन्द**

दान कहत हैं उभय विधि, सुनु शिष करिहि प्रवेश ।
एक दान कर दीजिये, एक दान उपदेश ।।
एक दान उपदेश सु, तो परमारथ होई ।
दुसरो जल अरु अन्न, बसन[७] करि पोषै कोई ।।
पात्र कुपात्र विशेष, भली भूमि उपजे धानं ।
सुंदर देखि विचारि, उभय[८] विधि कहिये दानं ।।२७।।

पंचम पूजाको लक्षण । **त्रिभंगी छन्द**

तो स्वामी संगा देव अभंगा[९] निर्मल[१०] अंगा सेवेजू ।
करि भाव अनूपं पाती पुष्पं गंधं धूपं खेवेजू ।।
नहिं कोई आशा काटे पाशा इहि विधि दासा निष्कामं[११] ।
शिष ऐसे जानै निश्चय आनै पूजा ठानै दिन यामं[१२] ।।२८।।

---

१ मजा । २ छोड़ना । ३ स्मरण । ४ भाग्य । ५ फर्ज करना । ६ अविश्वास । ७ वस्त्र । ८ दोनों-दो । ९ अखंड । १० स्वच्छ । ११ निष्प्रयोजन । १२ प्रहर या पहर।

षष्ठ श्रवणसिद्धांत लक्षण । **कुण्डलिया**

वाणी बहुत प्रकार हैं, तिनको नाहीं अंत ।
जोई अपने कामकी, सोइ सुनै सिद्धांत ।।
सोइ सुनै सिद्धांत, संत जन गावत होई ।
चित्त आनिकै ठौर, सुनै जो नित प्रति सोई ।।
यथा हंस पय[1] पिये, रहे ज्योंकी त्यों पानी ।
ऐसे लहै विचारि शिष्य, बहुविध[2] है वानी[3] ।।२९।।

सप्तमल्ही को लक्षण । **चामर छंद**

लज्जा करै गुरु सन्तनकी जब, तब सरै[4] सब काज ।
तन मन न डुलावै आपनो, कर लोकहूते माज ।।
लज्जा करै कुलकुटुंबकी, लांछन लगावै नाहिं ।
यह लाजते सब काज होई, लाज गहि मनमाहिं।।३०।।

अष्टम मतिको लक्षण । **सवैया छन्द**

नाना सुख संसार जानि तजि, तिनहिं देखि लोलुप ना होई ।
स्वर्गादिककी करै न इच्छा, इहामुत्र त्यागै सुख दोई ।।
पूजा मान बड़ाई आदर, निन्दा करै आन जो कोई ।
या प्रकार मति निश्चय जाकी,सुन्दर दृढमति कहिये सोई।।३१।।

नवम जापको लक्षण । **प्लवंगम छन्द**

जाप नित्य व्रत धारि, करै मुख मौनसों ।
एक दोय घटिका जु, गहै मन पौनसों ।।
जो अधिका कछु होय, बड़ा अति भाग है ।
शिष्य तोहिं कहि दीन, भलो यह भाग है ।।३२।।

दशम होमको लक्षण । **चामर छन्द**

अब होम दोय प्रकार सुनु शिष्य, कहों तोहि बखानि ।

---

१ दूध । २ बहुत प्रकार । ३ वचन—बात । ४ सिद्धि होना, अंजाम ।

इक अग्निमें संकल्प होमै, सो तो प्रवृत्ती[१] जानि ॥
जो निवृत्ति[२] जिज्ञास होई, ताहि ओर न षोम ।
सो ब्रह्म अग्नि प्रज्वालनीके,[३] करै इंद्रिय होम ॥३३॥

दोहा छन्द

दश प्रकार संयम कहे, दश प्रकार यह नेम ।
योग ग्रंथमें लिखतु है, मो समुझाये क्षेम[४] ॥३४॥

सोरठा छन्द

शिष्य सुनाये तोहि, उंभय अंग यह योगके ।
सावधान अब होहि, अबहिं षडंग बखानि हो ॥३५॥

चौपाई छन्द

प्रथम कहों शिष आसन भेदा । जाते रोग मिटे बहु खेदा ॥
ऋषि मुनि योगी ब्रह्म अराधे । तिन सब पहिले आसन साधे ॥३६॥

तोटक छन्द

शिव जानत हैं सब योगकला । नित संग शिवा[५] पुनि है अचला ।
दृढ आसनते नहिं बिंद खसे । दृग देखत दंपति[६] लोक हँसे ॥३७॥

कुण्डलिया छन्द

चौरासी लक्ष जीवकी, जाति कहत है वेद ।
तितनेही आसन सबै, जानत हैं शिव भेद ॥
जानत हैं शिव भेद, और जानत नहिं कोई ।
आपु दया तिन करी, सुगम करि दीने सोई ॥
लक्ष लक्षमें एक एक, काढ़ैं यम पासी ।
सुगम[७] सबहिको किये, प्रगट[८] आसन चौरासी ॥३८॥

दोहा छन्द

चतुरासी[९] आसननिमें, सारभूत द्वै जानि ।
सिद्धासन पद्मासनै, नीके कहौं बखानि ॥३९॥

---

१ लीन होना । २ अलग होना । ३ जलाना । ४ कुशल । ५ पार्वती । ६ स्त्री–पुरुष ।
७ सहज । ८ विदित–जाहिर । ९ चौरासी ।

सिद्धासन लक्षण । **मनहर छन्द**

एड़ी बाम पाँवकी, लगावै सिवनी के बीच;
वाही योनिठौर[1] ताहि, नीके करि जानिये ।
तैसेही जुगति करि, विधिसों भले प्रकार;
मेढ्रहूके ऊपर दक्षिण, पाँव आनिये ।।
सरल[2] शरीर दृढ़, इंद्रिय संयम करि;
अचल[3] उरध[4] दृष्टि, भ्रूके मध्य ठानिये ।
मोक्षके कपाटको,[5] उघारत अवश्यमेव;[6]
सुंदर कहत सिद्ध, आसन बखानिये ।।४०।।

पद्मासन । **छप्पय छन्द**

दक्षिण उरु उपरेहि, प्रथम वामहिं पग आनै ।
वामहिं उरु ऊपरे, तबहि दक्षिण पग ठानै ।।
दोऊ कर पुनि फेरि, पृष्ठ[7] पीछे करि आवे ।
दृढकै गह अंगुष्ठ, चिबुक[8] वक्षस्थल[9] लावे ।।
इहि भांति दृष्टि उनमेषे करि, अग्र नासिका राखि है ।
सब व्याधि हरण योगीनकी,पद्मासन यह भाखि है।।४१।।

पद्धरी छन्द

शिष्य और जु आसन हरै रोग । इन दोय आसन साधैं योग ।
ताते तूं ए अब उभय साधि । जबलगि पहुँचे निर्भय समाधि ।।४२।।

प्राणायाम लक्षण । **बिज्जूमाला छन्द**

आगै कीजै प्राणायामं । नाड़ीचक्रं पावै ठामं ।
पूरे राखे रेचक कोई । हो निष्पापं[10] योगी सोई ।।४३।।

दोहा छन्द

नाड़ी कही अनेक विधि[11] हैं दंश मुख्य[12] विचार ।
इडा पिंगला सुषुमना सबसे यह त्रय सार ।।४४।।

---

१ भग । २ सीधा । ३ निश्चल । ४ ऊपर । ५ किवांड़ । ६ जरूर वा निश्चय । ७ पीठ । ८ ठुड्डी । ९ छाती । १० अनघ पापरहित । ११ भांति । १२ प्रधान ।

तीन नाड़ी वर्णन । छप्पय छन्द

बाम इडा स्वर जानि, चन्द्र स्वर कहिये वाको ।
दक्षिण स्वर पिंगला, सूर्यमय जानो ताको ।।
मध्य सुषुमना बहै, ताहि जानत नहिं कोई ।
हैं यह अग्नि स्वरूप, काज याहीते होई ।।
जब इडा पिंगला गति थकै, प्राणायाम प्रभावसे ।
तब चलै सुषुमना उलटिकै सुख पावै घट चावसे ।।४५।।

दश वायु वर्णन । दोहा छन्द

दश प्रकारके पवन हैं, भाषों ताके नाम ।
कहे विना नहिं जानिये, कौन ठौर विश्राम[१] ।।४६।।

चौपाई छन्द

प्राणापान समानहिं जानौ । व्यानोदान पंच मन मानौ ।।
नाग कूर्म रु कृकल तु कहिये । देवदत्त सु धनञ्जय लहिये ।।४७।।

कुण्डलिया छन्द

प्राण हृदयमें वसत है, गुद मंडलै अपान ।
नाभि समानहिं जानिये, कंठहि बसै उदान ।।
कंठहि बसै उदान, व्यान व्यापक घट सारे ।
नाग करैं उद्गार,[२] कूर्म सु पलक उघारे ।।
कृकलसों उपजे क्षुधा,[३] देवदत्तहि जंभानं ।
मरे धनञ्जय होइ, पञ्च पूरब सो प्रानं ।।४८।।

दोहा छन्द

चक्र अनुक्रम[४] कहतहों, सुनु शिष ताके नाम ।
पीछे तोहिं बतायहों, विधिसों प्राणायाम ।।४९।।

चक्र अनुक्रम । पद्धरी छन्द

शिष प्रथम चक्र आधार जानि, तहँ अक्षर चारि चतुर्दसानि ।
पुनि व श ष स वर्ण विचारि लेहु, है सब शरीर आधार येहु ।।५०।।

---

१ आराम । २ डकार । ३ भूख । ४ लगातार ।

पुनि स्वाधिष्ठान सु द्वितीय चक्र, तहँ षट दल षट अक्षर अवक्र ।
गनि ब भ म य र ल ये वर्ण मध्य, सो ब्रह्मचक्र कहिये प्रसिद्ध ॥५१॥
मणिपूरक चक्र दल दल प्रभाव, पुनि अक्षर दशते उक्त नाव ।
तहँ ड ढ ण त थ द ध न प फ प्रमानि,इनवर्ण सहित तृतीये बखानि॥५२॥
पुनि अनहत चक्र है हृदय माहिं, दल अक्षर द्वादश अधिक नाहिं ।
क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ समेत, शिष्य चक्र चतुर्थय समझि हेत ॥
पुनि पंचम चक्र विशुद्ध[1] आहि, दल अक्षर षोडश[2] लगै ताहि ।
तहँ आदि अकार अःकार अन्त, शुभ षोडशस्वर ताके गनंत ॥५४॥
अब आज्ञाचक्रसु भुव मँझार, लखि द्वै दल द्वै अक्षर विचार ।
तहँ हंस[3] वर्ण अक्षर अनूप, यह षष्ठहु चक्र कह्यो स्वरूप ॥५५॥
जब इन षटचक्रन वेधि जाइ, तब उहै सुषुमना सुख समाइ ।
याहीते प्राणायाम सार, सुनु शिष्य कहो ताको विचार ॥५६॥

प्राणायामकी क्रिया । **दोहा छन्द**

इडा नाड़ि पूरक करै, कुम्भक राखै माहिं ।
रेचक करिये पिंगला, सब पातक[4] कटि जाहिं ॥५७॥

सोरठा छन्द

बीज मन्त्र संयुक्त,[5] षोडश पूरक पूरिये ।
चौसठ कुंभक युक्त, द्वात्रिंशत[6] करि रेचना ॥५८॥

चौपाई छन्द

बहुरि विपर्यय ऐसे धारै । पुरी पिंगला इडा निकारै ॥
कुम्भक राखि प्राणको जीतै । चतुर्वार अभ्यास व्यतीतै ॥५९॥

चामर छन्द

यह ऋषिन युक्ति सुनाइ हैं, यह भाँति प्राणायाम ।
सतगुरु कृपाते पाइये, मन होइ अति विश्राम ॥
अब सब मतांतर कहत हों, सुनु शिष्य आनि प्रभाव।
गोरख उक्ति बखानि हौं, तिहि सुनत उपजै चाव॥६०॥

---

१ अतिपवित्र । २ सोलह । ३ आत्मा । ४ पाप । ५ साथ । ६ बत्तीस ।

अथ गोरख उक्ति । **चर्पट छन्द**

सोहं[1] सोहं सोहं हंसो, सोहं सोहं सोहं अंसो ।
श्वासोश्वासं सोहं जापं, सोहं सोहं आपे आपं ।।६१।।
द्वादश मात्रा पूरक भरणं, द्वादश मात्रा कुम्भक करणं ।
द्वादश मात्रा रेचक जानं, पूर्वापूर्व विपर्यय ठानं ।।६२।।
अधमें मात्रा द्वादश युक्तं, मध्यम मात्रा द्विगुणा युक्तं ।
उत्तम मात्रा द्विगुणी कहिये,प्राणायामसु निर्णयलहिये।६३।

सोरठा छन्द

कुंभक अष्टसु विद्ध, मुद्रा दशहि प्रकारकी ।
बंध तीन तिन मध्य, उत्तम साधन योगके ।।६४।।

कुंभक प्रकार वर्णन । **छप्पय छन्द**

सूर्य भेद न प्रथम, द्वितीय उजाई कहिये ।
शीतकार पुनि तृतीय, शीतली चतुरथ गहिये ।।
पंचम है भद्रिका, भ्रामरीं षष्ठम जानहु ।
मूर्च्छे नाम सप्तमं, अष्टमं कैवल मानहु ।।
यह कुंभक अष्ट प्रकारके, होइ पवन अवरोधनं ।
तब मुद्राबंध लगाइये, प्रथम करै घट[2] शोधनं ।।६५।।

मुद्रानाम । **गीतक छन्द**

मुनि महामुद्रा महाबंधक, महा बोधक खेचरी ।
उडियानबंधक सुमूल बंधक, बंध जालंधर करी ।।
विपरीत[3] करनी पुनि वज्रोली, शक्ति चालन कीजिये ।
इमि[4] होय योगी अमर काया, शशिकला नित पीजिये ।।६६।।

प्रत्याहारनाम । **कुण्डलिया छन्द**

श्रवण शब्दको गहतु है, नैन गहतु है रूप ।
गंध गहतु है नासिका, रसना रसकी चूप ।।

---

१ मैं हूँ । २ शरीर साफ करना । ३ उलटा । ४ इस प्रकार ।

रसना रसकी चूप, त्वचा सपरसही चाहै ।
इन पञ्चनको जीति, आतमा नित आरा है ।।
कूर्म अंगही गहै, प्रभारवि कर्षण द्रवनं ।
इमि करि प्रत्याहार, विषय शब्दादिक श्रवनं ।।६७।।

अथ पंचतत्त्वकी धारणा

पृथ्वीतत्त्वकी धारणा । छन्द

यह चारों कौन लकारहि युक्तं, जानहू पृथ्वीरूपं ।
पुनि पीतवर्ण हृदि मंडल कहिये, विधि अंकित सु अनूपं ।।
तँह घटिका पंच प्राण करि[1] लीनं, चित्त स्तम्भन[2] होई ।
सुनु शिष्य अवनि[3] जय करै नित्यही, भूमि–धारणा सोई।।६८।।

जलतत्त्वकी धारणा ।

अक्षर वकार सहित संयुक्तं, चन्द्र खंड निर्धारं ।
पुनि हृषीकेशं अंकित अति शोभित कंठ पारदाकारं ।।
तहँ घटिका पंच प्राण करि लीनं, चित्त धारि करि रहिये ।
विष कालकूट[4] व्यापै नहिं कबहूँ, वारि–धारणा कहिये।।६९।।

तेजतत्त्वकी धारणा

यह अग्नि त्रिकोण रेफ संयुक्तं, पद्मराग आभासं ।
पुनि इंद्रगोप द्युति मध्य तालुका, कहियत रुद्र निवासं ।।
तहँ घटिका पंच प्राण करि लीनं, ग्रंथहि उक्त बखानं ।
सुनु शिष्य अग्नि भयहंता कहिये, तेज–धारणा जानं।।७०।

वायुतत्त्वकी धारणा

भ्रुव मध्य जकार सहित षट कोनं, ऐसी लच्छ विचारं ।
पुनि मेघवर्ण ईश्वर करि अंकित, वारंवार निहारं ।।
तहँ घटिका पंच प्राण करि लीनं, खेचरि सिद्धहि पावै ।
सुनु शिष्य धारणा वायुतत्त्वकी,जो नीके करि आवै।।७१।

---

१ रात । २ रुकावट । ३ धरती । ४ हालाहल ।

आकाशतत्त्वकी धारणा

यह ब्रह्मरंध आकाश तत्त्व है शुभ्र वर्तुलाकारं ।
तहँ निश्चय जानि सदाशिव तिष्ठति,अक्षर सहित हकारं।
तहँ घटिका पंच प्राण करि लीनं, परमभक्ति दाता ।
सुन शिष्य धारणा व्योमतत्त्वकी, योग ग्रंथ विख्याता।।७२।।
यह एक थंभनी एक दावनी, एक सुदहनी कहिये ।
पुनि एक शोषनी एक भ्रामनी, सतगुरु विना न लहिये ।।
यह पंचतत्त्वकी पंचधारणा, तिनके भेद सुनैये ।
अब आगे ध्यान कहों बहुविधि करि,योग ग्रंथमें पैये।।७३।।

ध्यानवर्णन । दोहा छन्द

प्रथमहिं ध्यान पदस्थ है, द्वितिय पिंड आधीत ।
तृतिय ध्यान रूपस्थ है, चतुरथ रूपातीत ।।७४।।

पदस्थध्यानवर्णन । इन्दव छन्द

जे पद चित्र रचै अतिगूढ, सुजानि महापरमारथ जामै ।
ते अवलोकि[१] विचार करे पुनि,चित्त धरै निहचै करि तामै।।
के करि कुंभक मंत्र जपै उर, अक्षरते पुनि जानि अनामै[२] ।
सुंदर ध्यान पदस्थ यहै मन,निश्चल होय सरै[३] सब कामै।।७५।

पिंडस्थध्यान । चौपाई छन्द

सुनहु शिष्य कहुँ ध्यान पिंडस्थं । पिंडका शोधन करिय स्वस्थं ।।
षटचक्रनको धरिये ध्यानं । पुनि सद्‌गुरुको ध्यान प्रमानं ।।७६।।

रूपस्थध्यान । नाराच छन्द

निहारिके त्रिकूट मध्य, विस्फुलिंग देखि है ।
पुनि प्रकाश दीप ज्योति, दीपमाल पेखि है ।।
नक्षत्र माल बीजुरी, प्रभा प्रत्यक्ष होइ है ।
अनंत कोटि चंद्र सूर, ध्यान मध्य जोइ है ।।७७।।
मरीचिका समान शुभ्र, और लक्ष जानिये ।
जलामलं समस्त[४] विश्व, तेजमै बखानिये ।।

---

१ देखि । २ जिनका नाम न हो नीरोग परमेश्वर । ३ बन जावैं । ४ संपूर्ण ।

समुद्रमध्य डूबिके, उघारे नयन दीजिये ।
दशों दिशा झलामलं, प्रतक्ष ध्यान कीजिये ।।७८।।

रूपातीतध्यान । **पद्धरी छन्द**

यह रूपातीत जु शून्य ध्यान । कछु रूप न रेख न ह्वै निदान[1] ।।
तहँ अष्ट प्रहरलों चित्तलीन।पुनि सावधान ह्वै अति प्रवीन[2]।७९।
ज्यों पक्षीकी गति गगनमाहिं । कहुँ जात जात दिठ परै नाहिं ।।
पुनि आप दिखाई देत सोय । वा योगीकी गति यहै होय ।।८०।।
यह शून्य ध्यान सम और नाहिं ।उत्कृष्ट[3] ध्यान सब ध्यान माहिं।
है शून्याकार जु ब्रह्म आप ।दशहू दिशि पूरण अति अमाप।।८१।।
यों करै ध्यान सो योगि होइ । तबलगि समाधि सु अखंड होइ ।
पुनि यहै योगनिद्रा कहाय । सुनु शिष्य देउँ ताको बताय ।।८२।।

समाधिवर्णन । **गीतिका छन्द**

सुनु शिष्य अब समाधि लक्षण, मुक्ति योगी वर्तते ।
तहँ सिद्ध साधक एक है, करि क्रिया कर्म निवर्तते ।।
निरुपाधि नित्य उपाधि रहित जु यही निश्चय मानिये ।
कुछ भिन्न भाव रहै न कोई, सो समाधि बखानिये ।।८३।।
नहिं शीत उष्ण तृषा क्षुधा, मूर्छा न भ्रम आलस रहै ।
नहिं जागरण नहिं स्वप्न सुषुपति, तत्त्वपद योगी लहै ।।
ज्यों नीरमहँ मिलि जाय लवण सु, एकमेकहि जानिये ।
कछु भिन्न भाव रहै न कोई, सो समाधि बखानिये ।।८४।।
नहिं हर्ष शोक न दुःख सुख, नहिं मान अरु अपमान यों ।
पुनि मनोइंद्रिय वृत्ति नष्ट रु, ज्ञान नहिं अज्ञान यों ।।
नहिं जाति कुल नहिं वर्ण आश्रम, जीव ब्रह्म न जानिये ।।
कछु भिन्न भाव रहे न कोई, सो समाधि बखानिये ।।८५।।
नहिं शब्द परश रु रूप रस नहिं, गन्ध जानिय रंचहू[4] ।
नहिं काल कर्म स्वभाव[5] है, नहिं उदय अस्त प्रपंचहू ।।

---

१ चिकित्सा—अतिशय करके। २ चतुर। ३ उत्तम। ४ किंचित्। ५ प्रकृति, आदत।

जिमि क्षीर क्षीरमें आज्य घृतमें, जलहिमें जल जानिये ।।
कछु भिन्नभाव रहै न कोई, सो समाधि बखानिये ।।८६।।
नहिं देव दैत्य पिशाच राक्षस, भूत प्रेत न संचरै ।
नहिं पवन पानी अग्निको डरु, सर्प सिंहसो ना डरै ।।
नहिं यंत्र मंत्र न शस्त्र लागहिं, यह अवस्था मानिये ।
कछु भिन्न भाव रहै न कोई, सो समाधि बखानिये ।।८७।।

दोहा छन्द

सुन्यो योग सिद्धांतते, अष्ट अंग संयुक्त ।
यों साधत ब्रह्महि मिलै, सोऊ कहिये मुक्त ।।८८।।

इति सुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे अष्टांगयोगनिरूपणं
नाम तृतीयोल्लासः ।।३।।

अथ चतुर्थोल्लासः ४.

सांख्यनिरूपण

शिष्य उवाच– चौपाई छन्द

हे प्रभु बहुत कृपा तुम कीन्हीं । ऐसी बुद्धि दया[1] करि दीन्हीं ।।
मोको योग सिद्धांत सुनायो । जो पूछचों सो उत्तर पायो ।।१।।
अब प्रभु सांख्य सु मोहिं सुनावहु । मेरे सब संदेह[2] मिटावहु ।।
यह गुरुदेव कृपाकरि कहिये।तुमबिन और कहो कित लहिये[3]।।२।

श्रीगुरुरुवाच– सोरठा छन्द

शिष्य कहों समुझाय, जो तैं पूछचों प्रीति करि ।
सांख्य सु देऊँ बताय, तो सुनिबेके योग है ।।३।।

सांख्यवर्णन–द्रुमिला छन्द

सुनु शिष्य यहै मत सांख्यहिको जु, अनुमान आतम भिन्न करै ।

---

१ कृपा । २ द्विविधा । ३ लेवे ।

अन आतम है जडरूप लिये, नित आतम चेतन भाव धरै ॥
अन आतम सूक्ष्म स्थूल सदा, पुनि आतम सूक्षम स्थूल परै ॥
तिनको निर्णय[1] अब तोहिं कहूं,जिन जानत संशय शोक हरै॥४॥

कुण्डलिया छन्द

प्रकृति पुरुषमय जगत[2] है, ब्रह्म कीट[3] पर्यंत[4] ।
चतुर्खानि लौं जीव सब, शिवशक्ती वरतंत ॥
शिवशक्ती वरतंत, अंत दुहुँवनिको नाहीं ।
एक आहि चिद्रूप,[5] एक जड़ दीसत छाहीं ॥
चेतन सदा अलिप्त,[6] रहे जड़ नित्य कलूषं ।
शिष्य समुझि यह भेद, भिन्न करि जानहु पुरुषं ॥५॥

शिष्य उवाच– हंसाल छन्द

हे प्रभु कह्यो तुम पुरुष चैतन्यमय, बहुरि ऐसे कह्यो भिन्न जानो ।
समुझिके प्रकृति जड़रूप करिके कही, जगत कैसे भयो सो बखानो ॥६॥

श्रीगुरुरुवाच– छप्पय छन्द

पुरुष प्रकृति संयोग, जगत उपजत है ऐसे ।
रवि दर्पण[7] दृष्टांत, अग्नि उपजत है जैसे ॥
सोइ होय चैतन्य, यथा चुम्बकके संगा ।
यथा पवन संयोग, उदधिमें उठै तरंगा ॥
पुनि यथा सूर[8] संयोगते, चक्षु[9] रूपको गहतु है ।
यो जड़ चेतन संयोगते, सृष्टि उपजति कहतु है ॥७॥

शिष्य उवाच– सवैया छन्द

हे प्रभु पुरुष प्रकृतिते प्रथमहिं, कौन तत्त्व उपज्यो समुझाई ।
विधि करि तत्त्व अनुक्रमसों सब, ज्यों उपजे त्यों देहु बताई ॥

---

१ निचोड़। २ संसार। ३ कीड़ा। ४ तक। ५ चिदाकाररूप। ६ अलग–अलाहिदा।
७ आयना। ८ श्रीसूर्यनारायण। ९ नेत्र–नयन–आंखें।

सूक्ष्म[१] थूल[२] भयो कैसे करि, कारण कारज मोहिं सुनाई ।
तुम गुरुदेव सकल विधि जानत,अन आतम आतमा दिखाई।।८।।

श्रीगुरुरुवाच– दोहा छन्द

पुरुष प्रकृति संयोगते, प्रथम भयो महतत्त्व ।
अहंकार ताते प्रगट, विविध रजो तम सत्त्व ।।९।।

चामर छन्द

तिहि तामसाहंकारते; दश तत्त्व उपजे आइ ।
सो पंचविषय रु पंचभूतनि, कहों शिष समुझाइ ।।
जो शब्द स्पर्श रु रूप रस, अरु गन्ध विषय सुजानि ।
पुनि व्योम मारुत[३] तेज जल क्षिति[४] महाभूत बखानि।।१०।

चौपाई छन्द

यह दश तमगुणते तुम जानहु । दिव्य शक्ति याकी पहिंचानहु ।
अब इनके लक्षण समझाऊं । भिन्न भिन्नकरि अर्थ बताऊं ।।११।।

छप्पय छन्द

शब्द सगुण आकाश, एक गुण कहिये जामहिं ।
शब्द स्पर्श जु वायु, उभय गुण लहिये तामहिं ।।
शब्द स्पर्श रु रूप, तीन गुण पावक माहिं ।
शब्द स्पर्श रस रूप, चतुर्गुण अपमें आहिं ।।
शब्द स्पर्श गन्ध रूप रस, ये पांचों गुण अवनि[५] है ।
शिष यह अनुक्रम ले जानि तू, सांख्य सुमति[६] ऐसे कहै ।।१२।

पञ्चतत्त्वस्वभाव । चौपाया छन्द

यह कठिन[७] स्वभाव अवनिको कहिये, द्रावक उदकहिं[८] जानै ।
पुनि उष्ण[९] स्वभाव[१०] अग्निमहि वरते, चलन पवन पहिचानै ।।

---

१ पतला–बारीक । २ मोटा । ३ वायु–हवा । ४ पृथ्वी । ५ पृथ्वी । ६ सुंदर बुद्धिवाले । ७ दृढ़ । ८ पानी । ९ गर्म । १० आदत ।

आकाश स्वभाव सुथिर कहियतु है, पुनि अवकाश दिखावै ।
यह पंच तत्त्वके पंच स्वभाव हैं, सतगुरु बिना न पावै ।।१३।।

राजसाहंकार । **चौपाया छन्द**

अब राजसाहंकारते उपजी, दश इंद्रिय सु बताऊं ।
अरु पंच वायु तिनके समीपही,[1] यह व्यौरौ समुझाऊं ।।
अरु भिन्न भिन्न है क्रिया सु तिनकी, भिन्न[2] भिन्न है नामू ।
सुनु शिष्य कहों नीके करि तोंको,ज्यों पावै विश्रामू।।१४।

छप्पय छन्द

श्रवण त्वचा दृग घ्राण रु, रस पुनि तिनको संगा ।
ज्ञान सु इंद्रिय पंच भई, अप अपने रंगा ।।
वाणि पाणि अरु पाद, उपस्थ रु गुदहू कहिये ।
कर्म सु इंद्रिन पंच, भली विधि जानै रहिये ।।
पुनि प्राणापान समानहू, व्यानोदान सु वायु है ।
दश पंच रजोगुणते भये, सु क्रिया शक्तिको पाय है ।।१५।।

सात्त्विकाहंकार । **गीतक छन्द**

अब सात्त्विकाहंकारते मन, चित्त बुद्धि अहं भये ।
पुनि इंद्रियनके अधिष्ठाता, देवता बहुविधिं ठये ।।
दिग़पाल मारुत अर्क अश्विनि, वरुण ज्ञान सु इंद्रियम् ।
पुनि अग्नि इंद्र उपेन्द्र मित्र सु,प्रजापति कर्मेन्द्रियम्।।१६।।

दोहा छन्द

शशि[3] विधि[4] अरु क्षेत्रज्ञ पुनि, रुद्र सहित पहिचानि ।
भये चतुर्दश[5] देवता, ज्ञान शक्ति यह जानि ।।१७।।
त्रिविध शक्ति है त्रिगुणमय, तम रज सत्त्व सु एह ।
इनकरि पिण्ड स्थूल है, इनकरि सूक्षम देह ।।१८।।
कारण देह सु तीसरो, सबको कारण मूल ।
वाहीते दोऊ भये, सूक्षम देह स्थूल ।।१९।।

---

१ निकट । २ जुदा जुदा । ३ चन्द्रमा । ४ ब्रह्मा । ५ चौदह ।

देहस्थूलवर्णन । **चौपाई छन्द**

व्योम[१] वायु[२] पावक[३] जल धरनी । स्थूल देह इनहींकी वरनी ।।
एक तत्त्वमहँ पंच बताऊं । पंच पंच पच्चीस सुनाऊं ।।२०।।
अस्थि[४] अवनि त्वक उदकहि जानौ।मांस अग्नि नीके पहिचानौ।।
नाड़ी वायु रोम आकाशं । पंच अंश पृथ्वी जु प्रकाशं ।।२१।।
मेदसु अवनि मूत्र जल कहिये । रक्त अग्नि यह जाने रहिये ।।
शुक्र[५] सुवाय श्लेषम व्योमं । पंच अंश ए उदक समोमं ।।२२।।
क्षुत पृथ्वी तृट जलको अंशा । आलस अग्नि न आवहु संशा ।
संगम[६] वायु निंद नभ जानं । पंच अंश यह अग्नि प्रमानं ।।२३।।
रोधक अवनि भ्रमन जलमाहीं । उरध गवन अग्नि महिं आहीं ।
अति निर्गवन[७] वायु पहिचानहु।उच्चस्थिति आकाशहि जानहु।।२४।
भय पृथ्वी मोहादिक नीरं । क्रोध अग्नि पुनि काम समीरं ।
लोभाकाश कहा समुझाये । पंच अंश यह नभके पाये ।।२५।।

अन्य भेद । **दोहा छन्द**

गुदा कर्म इंद्रियन महिं, नासा इंद्रिय ज्ञान ।
ए दोऊ भूते प्रकट, शिष्य लेहु पहिचान ।।२६।।
चरण कर्म इंद्रियन महिं, लोचन इंद्रिय ज्ञान ।
ए दोऊ वसुते प्रकट, शिष्य लेहु पहिचान ।।२७।।
उपस्थ कर्म इंद्रियन महँ, रसना इंद्रिय ज्ञान ।
ए दोऊ जलते प्रकट, शिष्य लेहु पहिचान ।।२८।।
पाणि[८] कर्म इंद्रियन महिं, त्वक इंद्रिय है ज्ञान ।
ए दोऊ पवनहिं[९] प्रकट, शिष्य लेहु पहिचान ।।२९।।
वचन कर्म इंद्रियनमें, श्रोत्र सु इंद्रिय ज्ञान ।
ए दोऊ नभते[१०] प्रकट, शिष्य लेहु पहिचान ।।३०।।

---

१ आकाश–गगन । २ हवा । ३ अग्नि–कृशानु । ४ हाड़ । ५ वीर्य । ६ संधि ।
७ अचल । ८ हाथ । ९ वायु । १० आकाश ।

ज्ञानेंद्रियत्रिपुटी । **दोहा छन्द**

श्रोत्र सु अध्यातम प्रकट, श्रोतव्यं अधिभूत ।
दिशा तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ।।३१।।
त्वक अध्यातम जानि यह, सपरश है अधिभूत ।
वायु तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ।।३२।।
चक्षु अध्यातम जानि यह, द्रष्टव्यं अधिभूत ।
सूर्य तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ।।३३।।
घ्राण सु अध्यातम प्रकट, घ्रातव्यं अधिभूत ।
अश्विनि तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ।।३४।।
रसना अध्यातम प्रकट, रसग्रहण अधिभूत ।
वरुण तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ।।३५।।

कर्मेंद्रियत्रिपुटी **दोहा छन्द**

वचन सु अध्यातम प्रकट, वक्तव्यं अधिभूत ।
अग्नि तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ।।३६।।
पाणि सु अध्यातम प्रकट, दातव्यं[१] अधिभूत ।
इंद्र तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ।।३७।।
चरण सु अध्यातम प्रकट, गंतव्यं[२] अधिभूत ।
विष्णु तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ।।३८।।
उपस्थ सु अध्यातम प्रकट, आनंदं अधिभूत ।
प्रजापती तहँ देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ।।३९।।
गुदा सु अध्यातम प्रकट, मलत्यागं अधिभूत ।
मित्र तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ।।४०।।

अहंकारत्रिपुटी । **दोहा छन्द**

मन अध्यातम जानिये, संकल्पं अधिभूत ।
चन्द्र तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ।।४१।।

---

१ देनेयोग्य । २ चलनेयोग्य ।

बुद्धि सु अध्यातम प्रकट, बोद्धव्यं अधिभूत ।
ब्रह्मा तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ।।४२।।
चित्त सु अध्यातम प्रकट, चितवनि है अधिभूत ।
वासुदेव है देवता यह त्रिपुटी यह सूत ।।४३।।
अहंकार अध्यात्म, अहंकृत्य अधिभूत ।
रुद्र तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ।।४४।।

लिंगशरीर । **चौपाई छन्द**

नवतत्त्वनिको लिंग पंचधा । शब्द स्पर्श रूप रस गन्धा ।।
मन अरु बुद्धि चित्त अहंकारा । यह नवतत्त्व भेद निर्धारा ।।४५।।

दोहा छन्द

पन्द्रहतत्त्व स्थूल वपु, नवतत्त्वनिको लिंग ।
इन चौबीसहु तत्त्वको, बहुविधि कहो प्रसंग ।।४६।।

चौपाया छन्द

शिष ए चौबीसतत्त्व जड़ जानहु, ताको क्षेत्र जु कहिये ।
पुनि चेतन एक और पच्चीसहि, सांख्य हि मतसों लहिये ।।
सो है क्षेत्रज्ञ सबको प्रेरक,[1] पुनि साक्षी यह जानै ।
यह प्रकृति[2] पुरुषको[3] कियो निरणै, सतगुरु कहै सु मानै ।।४७।।

जाग्रतअवस्था वर्णन । **चंपक छन्द**

यह देह स्थूल विराटं । है पंचतत्त्वको घाटं ।
नभ वायु तेज जल धरणी।पाछे बहुविधि करि वरणी।।४८।
जे शब्द स्पर्शहि रूपा । रस गन्ध मिलै तिन पूजा ।
यह तनमात्रिका[4] सहेता । जो पंचविषयको हेता ।।४९।।
अरु पांचों इन्द्रिय ज्ञाना । श्रवणादि मिली विधि नाना ।

---

१ प्रेरणा करनेवाले । २ माया । ३ ईश्वर । ४ इंद्रियों का विषय

पुनि कर्म सु इंद्रिय पंचा । वचनादि मिली जु प्रपंचा[1] ॥५०॥
मन बुद्धि चित्त अहंकारा । यह अंतःकरण विचारा ।
पुनि देव चतुर्दश जानौ । दश वायु मिली तिन मानौ ॥५१॥
है सत्त्व रज तम गुणमाहीं । ये भिन्न भिन्न बरताहीं ।
पुनि कालहु कर्म स्वभावा । तब जीव स्वरूप दिखावा ॥५२॥
अरु काल उपाइ खपावै । यह कर्मसु आनि मिलावै ।
तहँ सूत्रसु सुख दुख मानै । सो पाप पुण्यको ठानै ॥५३॥
है जीव सचेतन करता । जड़ सकल पदारथ धरता ।
मिलि सबहिनको संघाता । यह जाग्रदवस्था ताता ॥५४॥
सो आहि विश्व अभिमानी । तहँ ब्रह्मा देव प्रमानी ।
है राजस गुण अधिकारा । पुनि भोग स्थूल सब सारा ॥५५॥
यह कहिये नयन स्थानं । वाणी वैखरिया[2] जानं ।
यह जाग्रदवस्था निर्णय । सुनु शिष्य स्वप्न अब वर्णय ॥५६॥

स्वप्नावस्था वर्णन –**चौपाया छन्द**

दशवायु प्राण नागादिक कहिये, पंच सु इंद्रिय ज्ञानं ।
पुनि पंच कर्मेन्द्रिय आही, तिनकी स्थिति बखानं ॥
अरु पंच विषय शब्दादिक[3] जानौ, अंतःकरण चतुष्टं[4] ।
पुनि देव चतुर्दश है तिनमाहीं, सब इंद्रिय संतुष्टं ॥५७॥
यह कालहु कर्म स्वभाव सकल मिलि, लिंग शरीर कहावै ।
शिष नाम हिरण्यगर्भ है ताको, तेजोमय तनु पावै ॥५८॥
अब स्वप्न अवस्था याको कहिये, सो तैजस अभिमानी ।
तहँ सतगुण विष्णु देवको जानहु, भोगवासना ठानी ॥५९॥
सो कंठस्थान मध्यमा बीजा, जीवातमा समेता ।
यह स्वप्न अवस्थाको है निर्णय, समुझि देख यह हेता ॥६०॥

---

१ संसार । २ निद्रावस्थाकी वाणी । ३ शब्द–स्पर्श–रूप–रस–गंध । ४ चारों।

सुषुप्त्यवस्था वर्णन । **छप्पय छन्द**

सुषुपति कारण देह, तत्त्व सबही तहँ लीनं ।
लिंग शरीर न रहै, घोरनिद्रावश कीनं ।।
प्राज्ञ पुनि अभिमान, अव्याकृत तमगुण[१] रूपा ।
पुनि ईश्वर तहँ देव, भोग आनंदस्वरूपा ।।
पुनि पश्यंती वाणी गुपत, हृदय स्थानक जानिये ।
यह कहत अवस्था सुषुपति,शिष्य सत्य करि मानिये।६१।

तुरीयावस्था वर्णन । **चर्पट छन्द**

तुरीयावस्था चेतन तत्त्वं, स्वस्वरूप अभिमानी तत्त्वं ।
परमानंद भोग इमि कहिये, सोहं देव तहाँ सो लहिये ।।६२।।
सर्वोपाधिविवर्जित[२] मुक्ति, त्रिगुणातीतं[३] साक्षी युक्तं ।
मूर्द्धनि[४] स्थितिपरा पुनि वाणी,तुरीयावस्था[५] निश्चय जानी।६३।

इन्दव छन्द

जाग्रत रूप लियो सब तत्त्वनि, इंद्रिय द्वार करै व्यवहारो ।
स्वप्न शरीर भ्रमै[६] नव तत्त्वको, मानत है सुख दुःख अपारो ।।
लीन सबै गुण होयँ सुखोपति, जान्यो नहिं कछु घोर[७] अँध्यारो ।
तीनको साक्षि[८] रहे तुरियातित,सुंदर सोइ स्वरूप हमारो।।६४।।

सोरठा छन्द

शिष्य तु ऐसे जानि, है असंग साक्षी सदा ।
आपुहि चेतन मानि, और पदारथ जड़ सबै ।।६५।।

दोहा छन्द

यह शिष मैं तोसों कह्यो, सांख्यहुको सिद्धांत ।
जो तेरी शंका रही, सो अब पूछ वृत्तांत ।।६६।।

इति श्रीसुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे सांख्यनिरूपणं नाम चतुर्थोल्लासः ।।४।।

---

१ तमोगुण । २ विकार रहित । ३ तीनों गुणों से परे । ४ माथे पर । ५ चौथी अवस्था । ६ घूमै । ७ कठिन । ८ साखी ।

अथ पञ्चमोल्लासः ५.

अद्वैतनिरूपण

शिष्य उवाच– चौपाई छन्द

हे स्वामी तुम ब्रह्म अनूपा । मैं करि जाने देह स्वरूपा ।।
यह मोते जु भयो अपराधा।क्षमा करौ मम मेटो बाधा।।१।।
मैं तो भयो कृतारथ तबहीं । तुमसे सतगुरु मेटे जबहीं ।।
वचन सुनाय कपाट[1] उघारे।मेरे संशय सकल निवारे[2]।।२।।
किंचित मात्र रही आशंका । सो यह तुमते जैहे पंका ।।
जे तुम तीन सिद्धान्त बखाने । ते सब मैं नीके करि जाने ।।३।।
अब प्रभु तुरियातीत बतावहु । तो पाछे अद्वैत सुनावहु ।।
तुम बिन और कहै नहिं कोई । तुमहीते तुमहीसो होई ।।४।।

श्रीगुरुरुवाच– दोहा छन्द

साधु साधु शिष धन्य तू, भलो प्रश्न तू कीन ।
याको उत्तर अब कहों, द्वैत मिटै भ्रम लीन ।।५।।

चौपाई छन्द

श्रवण मनन[3] कीनो तैं नीको । निदिध्यास राख्यो तैं ठीको ।।
अब साक्षात्कार तू होई । तब संदेह रहै नहिं कोई ।।६।।

दोहा छन्द

तुरिया साधन ब्रह्मको, अहंब्रह्म सो होय ।
तुरियातीत अनुभव यहै, मैं तूँ रहैं न कोय ।।७।।

इन्दव छन्द

जाग्रत तो नहिं मेरे विषे पुनि, स्वप्न सुनो नहिं मेरे विषे है ।
नाहिं सुखोपति मेरे विषे पुनि, विश्वहु तैजस प्राज्ञ प्रखे है ।।

---

१ किवाड़ । २ दूर करे । ३ मन में विचारना ।

मेरे विषे तुरिया नहिं दीसति, याहिते मेरे स्वरूप अखै है ।
दूरिते दूरि परेते परे अति, सुंदर कोइ न मोहिं लखै है ।।८।।

शिष्य उवाच– **दोहा छन्द**

हे प्रभु दूरि परे कह्यो, उरे कह्यो अब और ।
यह तो भ्रम[1] भारी भयो, गुरु सु बतावहु ठौर[2] ।।९।।

श्रीगुरुरुवाच– **दोहा छन्द**

उरे परे कछु वै नहीं, वस्तु रहीं भरपूर[3] ।
चतुर्भाव तोसों कहों, तब भ्रम जैहै दूर ।।१०।।

शिष्य उवाच– **चौपाई छन्द**

हे प्रभु चतुर्भाव समुझावहु । भिन्न[4] भिन्न करि अर्थ बतावहु ।।
द्वैत मिटै सबही भ्रम छीजै । निःसंदेह मोहिं अब कीजै ।।११।।

श्रीगुरुरुवाच –**चौपाया छन्द**

शिष प्रागभाव सो महिं कहिये, नीकी विधि समुझाऊं ।
पुनि अन्यो अन्याभाव दूसरो, सोऊ तोहिं सुनाऊं ।।   ।।
अरु सुनहु प्रध्वंसाभाव तीसरो, ताकौ कहों विचारा । ।
जब चतुर्भाव अत्यंतहि जाने, तब छूटै भ्रम सारा ।।१२।।

चतुर अभाव वर्णन । **सवैया छंद**

मृतिकामाहिं अभाव घटनि को, प्रागभाव यह जाने रहिये ।
ता मृतिकाके भाजन[5] बहुविधि,अन्यो अन्याभाव सु गहिये।।
मृतिका मध्य लीनता सबकी, यह प्रध्वंसाभाव सु लहिये ।
ना कछु भयो न अब कछु है, यह अत्यंताभाव जु कहिये ।।

प्रागभाव । **मनहर छंद**

पहिले जब कछु नाहिं, हो तो परपंच यह;

---

१ संदेह । २ स्थान-जगह । ३ पूर्ण । ४ अलग-अलग । ५ पात्र-कुम्भ ।

एकही अखण्ड ब्रह्म, विश्वको[1] अभाव है ।।
जैसे काठ पाहनको,[2] लंघ अति देखियत;
तिनमें तो नाहिं कछु, पूतरी बनाव है ।।
कंचनकी राशिते ज्यों, कंचन विशेषियत;
ताके मध्य नहीं कछु, भूषण प्रभाव है ।
जैसे नभमाहिं[3] कछु, बादर न देखियत;
सुंदर कहत शिष्य, यही प्रागभाव है ।।१४।।

अन्योअन्याभाव । **सवाया छन्द**

एक भूमिके भाजन बहुविधि, कूंडा करवा हँड़िया माट ।
चपनी ढकनी सरवा गगरी, कलश[4] कहालो नाना घाट ।।
तिहि नाम रूप गुण न्यारे,[5] पुनि व्यवहार भिन्नही ठाट[6] ।
सुंदर कहत शिष्य सुनु ऐसे, अन्योअन्याभाव विराट[7] ।।१५।।

मनहर छन्द

एक भूमिको[8] विकार, कंचन[9] कहावत है;
ताहूके विविध भांति, भूषण अनन्तु है ।
मुद्रिका[10] कंकन कंठ,–माला शीशफूल पुनि;
कुंडल[11] वलय[12] क्षुद्र,–घंटिका[13] गनन्तु है ।।
नाम गुणरूप व्यवहार सब भिन्न भिन्न;
अंग अंग आपनीही, ठोरले ठनन्तु है ।
ऐसे भांति शिष्य सुनु, सुंदर कहत तोहि;
विदुषहिं अन्योअन्या,–भाव यों भनन्तु है ।।१६।।

चौपाया छन्द

एक भूमिको ताम्र विकारा, ताके पात्र कहावहिं ।

---

१ जगत्–संसार । २ पर्वत–पहाड़ । ३ आकाश । ४ घट, घड़ा, गगरी । ५ अलग–अलग । ६ साज । ७ बृहद्–बड़ा । ८ पृथ्वी । ९ सोना । १० अँगूठी । ११ बाला । १२ कड़ा हाथ का । १३ कर्धती ।

पुनि चरवी चरवा तष्टी तवला, ऊरी लोट गावहिं ।।
तिहि नाम रूप भिन्न भिन्नही, दीसत विविध प्रकारा ।
यह अन्योअन्याभाव सुनु शिष, बहुति भांति विस्तारा ।।१७।।

कुंडलिया छन्द

लोहा प्रत्यक्ष देखिये, सोऊ भूमि विकार ।
विविध भांति ताके भये, जगतमाहिं हथियार ।।
जगतमाहिं हथियार, गुरज[1] शमशेर[2] कटारी ।
बरछी बुगदा भालि, कतरनी छुरी सँवारी ।।
नाम रूप गुण भिन्न, जहां जैसे तहँ सोहा ।
अन्यो अन्याभाव शिष्य, सुनु एकही लोहा ।।१८।।

छप्पय छन्द

इक भूमि विकार कपास, भया नाना विधि दरसै ।
खासा मलमल सहन, सितारी उपजै सरसै ।।
सीरी साफ बाफता, अधोतर भैरव कहिये ।
परकारा अरुगजा गनत, कहुँ अन्त न लहिये ।।
सुनु शिष्य कहाँलो वरणिये, अन्त नहीं निशिदिन कहै ।
यह अन्यो अन्याभावते, कारण कारज सुनि लहै ।।१९।।

गीतक छन्द

पुनि एक भूमि विकार तरु,[3] विस्तार बहुविधि देखिये ।
जर सूर शाखा[4] पत्र[5] पुष्पक,[6] फल अनेकनि पेखिये ।।
तिहि नाम रूप गुण भिन्न भिन्नही, बहुत भांति बखानिये ।
भाव अन्यो अन्य कहिये, शिष्य सतकर मानिये ।।२०।।

छप्पय छन्द

जल विकार अब सुनहु, फेन बुदबुदा[7] तरंगा[8] ।

---

१ गदा। २ तलवार। ३ वृक्ष। ४ डाली। ५ पाती। ६ फूल। ७ बुलबुला। ८ लहर।

ओला पाला जानि, सु तो जलहीको अंगा ।।
अग्नि विकार मशाल, चिरागहु दीपक जोवै ।
वायु विकार सुजानि, बीघुरा[१] आँधी होवै ।।
आकाश विकार सु अभ्र है, नानाविध देखिये ।
अन्योअन्याभाव शिष्य सुनु, पंचतत्त्व यह देखिये ।।२१।।

दोहा छन्द

एक ब्रह्म कारण जगत, कारज है बहु भाँति ।
चतुरखानि विस्तार यह, लखचौरासी जाति ।।२२।।

प्रध्वंसाभाव– **चौपाया छन्द**

यह भूमि विकार भूमिमें लीन, जल विकार जलमाहीं ।
तेज विकार तेज मिलि जैहै, वायू वायु मिलाहीं ।।
आकाश विकार मिले आकाशहि, कारण रहै निदानं ।
यह प्रध्वंसाभाव सुनु शिष, जो है सो ठहरानं ।।२३।।

दोहा छन्द

जो जाते कारज भयो, सो ताहीमें छीन ।
ऐसेही यह जगत सब, होइ ब्रह्ममें लीन ।।२४।।

अत्यन्ताभाव वर्णन । **मनहर छन्द**

इच्छाही न प्रकृति[२] न, महत्तत्व, अहंकार;[३]
त्रिगुण न व्योम आदि, शब्द आदि कोय हैं ।
श्रवणादि वचनादि, देवता न मन आदि;
सूक्षम न थूल पुनि, एकही न दोय है ।।
स्वेदज न अंडज, जरायुज न उदभिज;
न पशुहि न पंखिहि, न पुरुष न जोय[४] है ।

---

१ तूफान । २ माया, स्वभाव, आदत, खासियत । ३ घमंड मद । ४ स्त्री ।

सुंदर कहत ब्रह्म, ज्योंको त्योंहि देखियत;
न तौ कछु भयो अब, है न कछु होय है ॥२५॥

छप्पय छन्द

कहत शशाके[१] शृंग, झाँकि किनहूं नहिं देखै ।
बहुरि कुसुम[२] आकाश, सु तो कोई नहिं पेखै[३] ॥
त्योंहीं बंझापूत, पीघुरे[४] झुलत न कहिये ।
मृगजल माहीं नीर,[५] कहूं ढूंढ़त नहिं लहिये ॥
रज्जुमाहिं[६] नहिं सर्प कालत्रय, सुक्ति रजतसी लगत है ।
शिष यह अत्यंताभाव सुनु, ऐसेही सब जगत है ॥२६॥

पद्धरी छन्द

शिष यही अत्यंताभाव होई । नहिं उत्पत्ति प्रलय स्थिती कोई ॥
नहिं आदि अन्त नहिं मध्यभाव । नहिं स्रष्टा सृष्टिनको उपाय ॥२७॥
नहिं कारण कारज है उपाधि । नहिं ईश्वर जीव परै समाधि ॥
नहिं तत्त्व अतत्त्व विभाग भिन्न ।नहिं जोति अजोति कछू न चिह्न ॥२८॥
नहिं काल न कर्म सुभाव आहि ।नहिं विद्या अविद्या लगी ताहि ॥
नहिं राग वैराग न बन्ध मुक्त ।नहिं रूप अरूप अयुक्त युक्त ॥२९॥
नहिं आहि प्रमाताको प्रमान । नहिं है प्रमेय नहिं प्रमा जान ॥
नहिं लय विछेप[१] नहिं निकट दूर।नहिं दिवस न रजनी चन्दसूर ॥३०॥
नहिं शुक्ल न कृष्ण न रक्त पीत।नहिं ह्रस्व[७] न दीर्घ[८] न घामशीत।
नहिं अर्थ न धर्म न काम मोक्ष ।नहिं पाप पुण्य अपरोक्ष प्रोक्ष ॥३१॥
नहिं स्वर्गादिक नहिं नरकवास । नहिं त्रासक कोइ न होय त्रास ॥
नहिं वेद न शास्त्र न शब्दजाल।नहिं वर्ण अवर्ण न स्मृतिकी चाल ॥३२॥
नहिं संध्या सूत्र न करन्यास । नहिं होम न यज्ञ न व्रत उपास ॥
नहिं इष्ट उपासनहार कोइ । नहिं निर्गुण सगुण भेद दोइ ॥३३॥

---

१ खरगोश–खरहा। २ फूल। ३ देखै। ४ हिंडोला। ५ पानी। ६ जेवड़ी। ७ छोटा। ८ बड़ा।

नहिं सेव्य न सेवकी सेव कीन । नहिं हेतु प्रीति नहिं प्रेम लीन ।
नहिं नवधा दशधा पराभक्ति।नहिं सालोक्यादिक चारि मुक्ति ।।३४।।
नहिं कर्ता कर्म क्रिया न कोई । नहिं द्रष्टा दर्शन दृश्य होई ।।
नहिं साधक साधन साध्य सार।नहिंसिद्ध असिद्ध न निर्विकार[1] ।।३५।।
नहिं व्यक्त[2] अव्यक्त[3] अशुद्ध शुद्ध ।नहिं रक्त[4] विरक्त[5] अबुद्ध बुद्ध ।।
नहिं शून्य अशून्य अथीर थीर।नहिं तर्क वितर्क अधीर धीर ।।३६।।
नहिं चिंत्य अचिंत्य अडोल डोल । नहिं माप अमाप अतोल तोल ।
नहिं कृश[6] स्थूल[7] नहिं युवा बाल।नहिं जरा मृत्यु न अकाल काल ।।३७।।
नहिं जाग्रत स्वप्न सुषोपतिश्च । नहिं तुरिया साक्षी त्रय मतिश्च ।।
नहिं ज्ञेय ज्ञाता नहिं ज्ञान गम्य।नहिं ध्येय ध्याता नहिं ध्यानरम्य ।।३८।।

दोहा छन्द

जो कछु सुनिये देखिये, बुद्धि विचारै जाहि ।
सो सब वाक्य विलास है, भ्रम करि जानै आहि ।।३९।।
यहै अत्यंताभाव है, यहै जु तुरियातीत ।
यह अनुभव साक्षात है, यह निश्चय अद्वीत ।।४०।।
नाहिं नाहिं करि करि कह्यो, है है कह्यो बखानि ।
नाहीं हैके मध्य है, सो अनुभवकरि जानि ।।४१।।
यहही है पर यह नहीं, नाहीं है है नाहिं ।
यहै यहै जानि तुं यह, अनुभव है या माहिं ।।४२।।
अब कछु कहिबेको नहीं, कहै कहाँलों वैन ।
अनुभवही करि जानिये, यह गूँगेकी सैन ।।४३।।
जो तेरे संदेह कछु, रह्यो रंच जू होहि ।
तो शिष अजहूं प्रश्न करु, फिरि समुझाऊं तोहि ।।४४।।

शिष्य उवाच —**चौपाई छन्द**

हे स्वामी संशय सब भाग्यो । वचन तुम्हारे सोवत जाग्यो ।।
अब तो सर्प स्वप्न करि जान्यो।निश्चय मम संदेह बिलान्यो।।४५।।

---

१ विकाररहित । २ स्पष्ट । ३ अस्पष्ट । ४ लवलीन । ५ विहीन । ६ दुबला । ७ मोटा ।

चर्पट छन्द

क्वाहं[1] कत्वं[2] क्वच[3] संसारं। क्वच परमारथ क्वच व्यवहारं ।।
क्वच मे जन्मं क्वच मे मरणं। क्वच मे देहं क्वच मे करणं ।।४६।।
क्वच मे अद्वय क्वच मे द्वीतं। क्वच मे निर्भय क्वच मे भीतं[4] ।।
क्वच माया क्वच ब्रह्म विचारं।क्वच मे प्रवृत्ति निवृत्ति विकारं।४७।
क्वच मे ज्ञानं क्वच विज्ञानं। क्वच निर्विष क्वच मे विष जानं ।।
क्वच मे तृष्णा वैतृष्ण्यत्वं ।क्वच मे तत्त्वं क्वच निस्तत्त्वं।।४८।।
क्वच मे शिष्या क्वच मे दीक्षा ।क्वच मे आस्तिक नास्तिक पक्षा।
क्वच मे कालं क्वच मे देशा।क्वच मे गुरु शिष क्वच उपदेशा।४९।
क्वच मे ग्रहणं क्वच मे त्यागं। क्वच मे विरती क्वच वैरागं ।।
क्वच मे चपलं क्वच मे खेदं। क्वच मे द्वंद्वं क्वच निर्द्वन्दं ।।५०।।
क्वच मे बाह्याभ्यंतरभासं। क्वच अध ऊर्ध्वं मध्य प्रकासं ।।
क्वच मे नाड़ी साधन योगं। क्वच मे लक्ष विलक्ष वियोगं ।।५१।।
क्वच नानात्वं क्वच एकत्वं। क्वच मे शून्याशून्य समत्वं ।।
जो अवशेषं सो मम रूपं। बहुना किं उक्तं च अनूपं ।।५२।।

दोहा छन्द

यह मैं श्रीगुरुदेवको, अनुभव कह्यो सुनाय ।
जो प्रभुको परिश्रम कियो, सो फल प्रकट्यो आय ।।५३।।

श्रीगुरुरुवाच– चौपाई छन्द

हे शिष जो इच्छा करु सोई। तोहि न कितहू बाधा होई ।।
तू निर्धूम भयो निर्दोषा। तू अब पायो जीवन मोषा ।।५४।।
जो मैं कह्यो सु हिर्दै आन्यो। ताहि कर्मते ब्रह्महि जान्यो ।।
आप ब्रह्म जग भेद मिटायो। ज्यों हैं त्योंही निश्चय आयो ।।५५।।

---

१ को मैं हूं। २ को तुम हो। ३ यह संसार क्या है। ४ डर।

देखे सुने रु पर्सत बोलै । सूंघत क्रिया कबहुँ करि डौलै ।
खान पान वस्त्रादिक जोई । यह प्रारब्ध देहको तोई ।।५६।।

दोहा छन्द

निरालंब निर्वासना, इच्छाचारी येह ।
संस्कार पवनसों फिरै, शुष्कपर्ण ज्यों देह ।।५७।।
जीवनमुक्त संदेह सो, लिप्त न कबहूं होइ ।
ताको सोई जानि ले, तुम समान जे कोइ ।।५८।।
जो यह ज्ञानसमुद्रमें, बुड़की मारै आय ।
सोई मुक्ताफल लहै, दुख दरिद्र सब जाय ।।५९।।
सुंदर ज्ञानसमुद्रकी, महिमा कहिये कौन ।
अमृतरससों है भरचो, तुम सुनि जानौ लौन ।।६०।।
सुंदर ज्ञानसमुद्रमहँ, बहुत रत्न अनमोल ।
मृतक होय सो पैठि है, पैठि न सकही लोल ।।६१।।
सुंदर ज्ञानसमुद्रको, पारावार न अन्त ।
विषयी भाजै झिझकिकै, पैठे कोई संत ।।६२।।
सुंदर ज्ञानसमुद्रके, जो चलि आवै तीर ।
देखतही सुख ऊपजे, निर्मल जल गम्भीर ।।६३।।
यह तो ज्ञानसमुद्र है, यह गुरु शिष्य सँवाद ।
सुंदर जोई कहै सुनै, ताके मिटहिं विषाद ।।६४।।
संवत सत्रह सौ गये, वर्ष दशोत्तर और ।
भादों सुदि एकादशी, गुरुवासर शिरमौर ।।६५।।
ता दिन सम्पूरण भयो, ज्ञानसमुद्र सुग्रंथ ।
सुंदर अवगाहन करै, लहै मुक्तिको पंथ ।।६६।।

इति श्रीसुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे गुरुशिष्यसंवादे अद्वैतनिरूपण नाम पंचमोल्लासः ।।५।।

समाप्तोऽयं ज्ञानसमुद्रः ।।

श्रीपरमात्मने नमः

ज्ञानविलास

गुरुदेव अंग । **दोहा**

सुंदर सतगुरु बंदिये, सोई बंदन योग ।
औषध शब्द दिवाइ करि, दूर कियो सब रोग ।।१।।
सुंदर सतगुरु पलकमे, दूर करत अज्ञान ।
मन वच क्रम जिज्ञासु हैं, शंब्द सुनै जो कान ।।२।।
वेद माहिं बहु भेद हैं, जाने विरला कोइ ।
सुंदर सो सतगुरु विना, निर्वारो नहिं होइ ।।३।।
परमातम सो आतमा, जुदे रहे बहुकाल ।
सुंदर मेला कर दियो, सतगुरु मिले दलाल ।।४।।
सतगुरु शुद्ध स्वरूप है, शिष्य देखि गुरुदेह ।
सुंदर कारज क्यों सरे, कैसे बढ़ै सनेह ।।५।।

स्मरण अंग । **दोहा**

सुंदर सतगुरु यों कह्यो, सकल शिरोमणि नाम ।
ताको निशिदिन सुमिरिये, सुखसागर सुखधाम ।।१।।
रंक होय हीरा चढ़चो, ताको मोल अमोल ।
घर घर जो लै बेंचते, सुंदर याही मोल ।।२।।
राम नाम जाके हिये, ताहि नवैं सब कोइ ।
ज्यों राजाकी शंकते, सुंदर अतिडर होइ ।।३।।

साधु अंग । **दोहा**

सन्त समागम[1] कीजिये, तजिये और उपाइ ।
सुंदर बहुतहिं उद्धरै,[2] सतसंगतमें आइ ।।१।।

---

१ मिलाप— मिलना । २ मुक्त होना-छूटना ।

सुरता जो हरि मिलनकी, तो करिये सतसंग ।
विना परिश्रम[१] पाइये, अविगत देव अभंग ॥२॥
सन्त मुक्तिके पौंरिया,[२] तिनसों करिये प्यार ।
कूंची उनके हाथ है, सुंदर खोलहिं द्वार ॥३॥
सुंदर साधु दयालु ह्वै, कहै ज्ञान समुझाय ।
पात्र विना नहिं ठौर है, शब्द निकरि बहिजाय ॥४॥
संतनके यह वणिज है, निशिदिन ज्ञान विचार ।
ग्राहक आवे लेनको, ताहीके दातार ॥५॥

देहात्मा विछोह अंग । **दोहा**

देह सुरंगी तब लगे, जबलगि प्राण समीप ।
जीव ज्योति जाती रही, सुंदर बदरंग दीप ॥१॥
सुंदर देह परी रही, निकसि गये जब प्रान ।
सब कोऊ यों कहत हैं, अब ले जाहु मशान[३] ॥२॥
सुंदर लोक[४] कुटुंब सब, रहते सदा हुजूर ।
प्राण गये लागे कहन, काढ़ो घरते दूर ॥३॥
चेतनते चेतन भई, अविगति शोभित देह ।
सुंदर चेतन निकसते, भई खेहकी खेह ॥४॥

उपदेशचिन्तवन अंग । **दोहा**

सुंदर मानुष देहकी, महिमा वरणैं साध ।
जामें पैये परमगुरु, अविगत देव अगाध ॥१॥
सुंदर मानुष देहकी, महिमा कहिये काहि ।
जाको बछें[५] देवता, तू क्यों खोवे ताहि ॥२॥
सुंदर सांची कहत हों, मति आने कछु रोष ।
जो तैं खोयो रतन यह, तो तोहीको दोष ॥३॥
बेर बेर नहिं पाइये, सुंदर मानुष देह ।
राम भजन सेवा सुकृत,[६] यह सौदा करि लेह ॥४॥

---

१ मेहनत। २ द्वारपाल—दरवान। ३ मरघट। ४ संसार। ५ इच्छा। ६ पुण्य—सुकर्म।

सुंदर मानुष देह यह, तामें दोइ प्रकार ।
याते बूड़े जगत महँ, याते उतरे पार ।।५।।

कालचिंतवन अंग । **दोहा**

काल ग्रसत[1] है बावरे, चेतन क्यों न अजान ।
सुंदर काया कोटमें,[2] क्यों हूओ सुलतान ।।१।।
सुंदर काल महाबली, मारे मोटे भीर ।
तू है कौन कि गिनतिमें, चेतन काहे न वीर ।।२।।
मेरे मंदिर माल धन, मेरो सकल कुटुंब ।।
सुंदर ज्योंको त्यों रह्यो, सप्तलोक आडंब ।।३।।

सोरठा

शिव जु डऱ्यो कैलास, विष्णु डऱ्यो वैकुंठमें ।
सुंदर मानी त्रास, इंद्र डऱ्यो अमरावती[3] ।।४।।

दोहा

काल दियो जब बंधही, देवलोक सब देव ।
सुंदर डऱ्यो कुबेर पुनि, देखि सबनको छेव[4] ।।५।।
एक रहे कर्त्ता पुरुष, महाकालको काल ।
सुंदर वह विनशै नहीं, जाको यह सब ख्याल ।।६।।

तृष्णाको अंग । **दोहा**

पल पल छीजे देह यह, घटत घटत घटि जाइ ।
सुंदर तृष्णा ना घटै, दिन दिन नूतन[5] भाइ ।।१।।
नित नित डोले ताकती, स्वर्ग मृत्यु पाताल ।
सुंदर तीनों लोकते, भऱ्यो न एको गोल ।।२।।
सुंदर तृष्णा करत है, सबको बाँधि गुलाम ।
हुकुम करे त्योंही चले, गिनत शीत नहिं घाम ।।३।।

---

१ पकड़त । २ किला । ३ देवपुरी । ४ अंत—नाश । ५ नवीन ।

सुंदर तृष्णाके लिये, पराधीन ह्वै जाइ ।
दु:सह वचननिको सहे, जो परहाथ बिकाइ ।।४।।

देहमलीनको अंग । दोहा

सुंदर देह मलीन[1] अति, बुरी वस्तुको मौन ।
हाड़मांसको कोथरा,[2] भली कहै तिहि कौन ।।१।।
सुंदर पंजर हाड़को, चाम लपेट्यो ताहि ।
तामें बैठ्यो फूलिके, मो समान को आहि ।।२।।
सुंदर न्हावे बहुतही, बहुत करै आचार ।
देहमाहिं देखे नहीं, भर्‍यो नरक भण्डार ।।३।।

आधीन उराहनेको अंग । दोहा

देह रच्यो प्रभु भजनको, सुंदर नख शिख साज ।
एक हमारी बात सुनि, पेट दियो केहि काज ।।१।।
श्रवण दिये यश सुननको, नैन देखने सन्त ।
सुंदर शोभित नासिका, मुख शोभनको दन्त ।।२।।
ओर ठौर मन काढ़िके, करिहै तुम्हरी भेट ।
सुंदर क्योंकरि छूटिये, पाप लगायो पेट ।।३।।
कूप भरे वापी[3] भरे, पूरि भरे जलताल ।
सुंदर पेट न क्यों भरे, कौन बनायो ख्याल ।।४।।
सुंदर प्रभुजी पेटकी, चिन्ता दिन अरु रात ।
साँझ खाइ करि सोइये, बहुरि लगे परभात ।।५।।

विश्वासको अंग । दोहा

सुंदर तेरे पेटकी, तोको चिन्ता कौन ।
विश्वभरन भगवंत है, पकरि बैठ तू मौन ।।१।।
सुंदर चिन्ता मति करे, पाँव पसारे सोइ ।
पेट कियो है जिन प्रभू, ताको चिन्ता होइ ।।२।।

---

१ मैली—द्वेष—ईर्षा—कपट—मल—मूत्र का भवन । २ थैली । ३ बावली ।

जलचर थलचर व्योमचर, सबको देत अहार ।
सुंदर चिन्ता जनि करे, निशिदिन बारंबार ।।३।।
सुंदर प्रभुजी देत है, पाहनमें पहुँचाइ ।
तू अब क्यों भूखो रहै, काहेको बिललाइ[1] ।।४।।

दुष्टको अंग ।दोहा

घर खोवत है आपनो, औरनहूको जाइ ।
सुंदर दुष्ट स्वभाव यह, दोऊ देत बहाइ ।।१।।
दुर्जन संग न कीजिये, सहिये दुःख अनेक ।
सुंदर सब संसारमें, दुष्ट समान न एक ।।२।।
गज[2] मारे तो नाहिं दुख, सिंह करै तनु भंग[3] ।
सुंदर ऐसों दुःख नहीं, जैसो दुर्जन संग ।।३।।
सुंदर दुर्जन सारिखा, दुखदायक नहिं और ।
स्वर्ग मृत्यु पाताल हम, देखे सबै ढँढौर[4] ।।४।।
सुंदर दुर्जनको वचन, दुःसह[5] सह्यो न जाइ ।
सहैं सु बिरले[6] सन्त जन, जिनके राम सहाइ ।।५।।

मनको अंग । दोहा

मनको राखत हटक[7] करि, सटकि कहूं दिशि जाइ ।
सुंदर लटकुर लालची, गटकि विषयफल खाइ ।।१।।
पलहीमें मरिजात मन, पलमें जीवत सोइ ।
सुंदर परिगो मुरछिकै, बहुरि सजीवन होइ ।।२।।
साधत साधत दिन नये, करहि औरकी और ।
सुंदर एक विचार बिनु, मन नहिं पावै ठौर ।।३।।
सुंदर यह मन रंक है, कबहुँ होइ मन राव ।
कबहूँ टेढो ह्वै चलै, कबहूँ सूधे पाँव ।।४।।

---

१ व्याकुल। २ कुन्जर–हाथी। ३ नाश। ४.ढूँढ़ि। ५ सहने योग्य नहीं।
६ कोई एक । ७ रोक ।

पाप पुण्य मैंने किये, स्वर्ग नरक हौं जाउँ ।
सुंदर सब कछु मानि ले, याहीते मन नाउँ ॥५॥
मनको साधन एक है, निशिदिन ब्रह्मविचार ।
सुंदर ब्रह्म विचारते, ब्रह्म होत नहिं बार ॥६॥
देहरूप मन ह्वै गयो, कियो देह अभिमान ।
सुंदर समुझे आपको, आपु होय भगवान ॥७॥

शूरातनको अंग । **दोहा**

सुंदर सोई शूरमा, लोट पोट ह्वै जाइ[1] ।
ओट कछू राखे नहीं, चोट मूँह पर खाइ ॥१॥
सुंदर शील सनाह करि, तोष दियो शिर टोप ।
ज्ञान खड्ग पुनि हाथ करि, कियो जु मनपर कोप ॥२॥
मारे सब संग्राम[2] करि, पिशुन[3] हुते घट माहिं ।
सुंदर कोई शूरमा, साधु बराबर नाहिं ॥३॥
सुंदर निशिदिन साधुके, मन मारनकी मूठ ।
मनके आगे भाजिके,[4] कबहुँ न देवैं पूठ ॥४॥

वचनविवेकको अंग । **दोहा**

सुंदर तबहीं बोलिये, समुझि हियेमें[5] पैठि ।
कहिये बात विवेककी,[6] नहिं तर चुप ह्वै बैठि ॥१॥
सुंदर मौन गहे रहै, जानि सकै नहिं कोइ ।
बिन बोले गरुवा रहे, बोले हरुआ होइ ॥२॥
सुंदर वेही बोलिये, जा बोलेमें ढंग ।
नातर पशु बोलत सदा, कौन स्वाद रस रंग ॥३॥
सुंदर वचन कुवचनमें, रात दिवसको[7] फेर ।
सुवचन सदा प्रकाशमय, कुवचन सदा अँधेर ॥४॥
जा बाणीमें पाइये, भक्ति ज्ञान वैराग ।
सुंदर ताको आदरै, और सकलको त्याग ॥५॥

---

१ चला । २ लड़ाई । ३ चोर । ४ भाग । ५ हृदय । ६ ज्ञान । ७ दिन ।

निजभावको अंग । दोहा

सुंदर अपनो भाव है, जो कछु दीसै[1] आन ।
बुद्धि योग विभ्रम भयो, दोउ ज्ञान अज्ञान ।।१।।
अपनी छाया देखिके, कूकर जाने आन ।
सुंदर अतिही जोर करि, भूँकि मरत है श्वान ।।२।।
सिंह कूपमें आयके, देखै अपनी छाहँ ।
सुंदर जान्यो दूसरो, बूड़ि मर्‌यो ता माहिं ।।३।।
फटिक शिलासों आयके, कुंजर तोरे दंत ।
आगे देखे और गज, सुंदर आगि अनंत ।।४।।
सुंदर याको ऊपजे, काम क्रोध अरु मोह ।
याहीको है मामता, याहीको है द्रोह ।।५।।

स्वरूपविस्मरणको अंग । दोहा

सुंदर भूल्यो आपुको, खोइ आपनी ठौर ।
देहमाहिं मिलि देहसों, भयो औरको और ।।१।।
ज्यों मणि काहू कंठमें, ढूंढ़त पावै नाहिं ।
पूँछत डोलत औरको, सुंदर आपहि माहिं ।।२।।
सुंदर चेतन आप यह, चालत दंडकी चाल ।
ज्यों लकडीके अश्व[2] चढ़ि, कूदत डोलत बाल ।।३।।
भूतनि माहीं मिल रह्यो, ताते होतहि भूत ।
सुंदर भूल्यो आपुको, उरझानो मन सूत ।।४।।

सांख्यको अंग । दोहा

सुंदर सांख्य विचारि करि, समुझे अपनो रूप ।
नहिं तो जडके संगते, बूडत है भ्रमकूप ।।१।।
माया के गुण जड सबै, आतम चेतन जानि ।
सुंदर सांख्य विचारि करि, भिन्न भिन्न पहिचानि ।।२।।

---

१ दीखै । २ घोड़ा ।

पंचतत्त्वकी देह जड़, सब गुण मिलि चौबीस ।
सुंदर चेतन आतमा, ताहिं मिले पच्चीस ॥३॥
देहरूपही ह्वै रह्यो, देह आपको मानि ।
ताहीते यह जीव है, सुंदर कहत बखानि ॥४॥
देह भिन्न हो भिन्न हो, जब यह करे विवेक ।
सुंदर जीवन पाइये, होइ एकको एक ॥५॥
क्षीण सुपुष्ट शरीर है, शीत[1] उष्ण[2] तिहिं लार ।
सुंदर जन्म जरा लगै, ए षट देह विकार ॥६॥
क्षुधा[3] तृषा[4] गुण प्राणके, शोक मोह मन होइ ।
सुंदर साखी आतमा, जाने बिरला[5] कोइ ॥७॥
जाकी सत्ता[6] पाइ करि, सब गुण ह्वै चैतन्य[7] ।
सुंदर सोई आतमा, तुम जनि जानो अन्य[8] ॥८॥

विचारको अंग । **दोहा**

सुंदर साधन सब किये, उपज्यो हिये विचार ।
श्रवण मनन निदिध्यास पुनि, याही साधनसार ॥१॥
सुंदर यह साधन बिना, दूजो नहीं उपाइ ।
निशिदिन ब्रह्म विचारते, जीव ब्रह्म ह्वै जाइ ॥२॥
दधि मंथि घृतको काढ़िके, देत तक्रमें[9] डारि ।
सुंदर बहुरि मिले नहीं, ऐसे लेहु विचारि ॥३॥
सुंदर ब्रह्मविचार है, सब साधनको मूल ।
याहीमें आये सकल, डार पात फल फूल ॥४॥
सूतो जीव नरेश यह, सुख शय्यापर आइ ।
बढ़ी अविद्या[10] नींदमें, सुंदर अति सुख पाइ ॥५॥
आयो कर्म खवास चलि, नृपति[11] जगावन हेत ।
सुंदर दानी फूट परि, अविगति भयो अचेत[12] ॥६॥

---

१ जाड़ा । २ गरम । ३ भूख । ४ प्यास । ५ बाजे । ६ शक्ति । ७ सावधान । ८ दूसरा । ९ छाछ । १० मूर्खता । ११ राजा । १२ बेहोश ।

देखे भक्ति प्रधान जब, राजा जाग्यो नाहिं ।
सुंदर शंका करि नहीं, पकरि झझेरी बाहिं ।।७।।
तब उठि करि बैठो भयो, बहुरि जँभाई खात ।
सुंदर कियो विचार जब, तब भाग्यो साक्षात ।।८।।

आत्मानुभवको अंग । **दोहा**

मुखते कह्यो न जात है, अनुभवको आनंद ।
सुंदर समुझे आपको, जहां न कोई द्वंद्व[1] ।।१।।
सुंदर जैसे शर्क्करा,[2] गूंगे खाई होइ ।
मुखते कहि आवै नहीं, काख पड़ावै सोइ ।।२।।
रवि[3] शशि[4] तारा दीप[5] गण, हीरा होइ अनूप[6] ।
सुंदर इनके तेजसे, दीसै इनको रूप ।।३।।
त्यों आतमके तेजते, आतम करै प्रकासु ।
सुंदर इंद्रिय जड़ सबै, कोई न जानै तासु ।।४।।
सुंदर साधन सब करैं, कहैं मुक्तिमें जाहिं ।
आतमके अनुभव[7] बिना, और मुक्ति कहुँ नाहिं ।।५।।
दूरि करैं सब वासना,[8] आशा रहै न कोइ ।
वाही सुंदर मुक्ति है, जीवतही सुख होइ ।।६।।
श्रवण[9] ज्ञान है तब लगे, शब्द सुनै चित लाइ ।
सुंदर माया जल परे, पावक[10] ज्यों बुझि जाइ ।।७।।
मनन ज्ञान नहिं जात है, ज्यों बिजुरी उद्योत[11] ।
मायाजल वरषत रहै, सुंदर चमका होत ।।८।।
निदिध्यास है ज्ञान पुनि, बड़वा[12] अनल समान ।
माया जल भक्षण करै, सुंदर यह हैरान ।।९।।
आतम अनुभव ज्ञान है, प्रलय[13] कालकी अंच ।
भस्म करै सब जारिकै, सदर द्वैत प्रपंच ।।१०।।

---

१ लड़ाई । २ शक्कर । ३ सूरज । ४ चन्द्रमा । ५ चिराग । ६ अद्भुत । ७ ज्ञान । ८ कामना । ९ कान । १० अग्नि । ११ प्रकाश । १२ बड़अग्नि । १३ नाश ।

नित्य कहत गुरु आतमा, सो है शब्द प्रमान ।
जैसे व्यापक व्योम[1] है, सुंदर यह उपमान ॥११॥
जाकी सत्ता इंद्रियनि, यह कहिये अनुमान ।
सुन्दर अनुभव आतमा, यह प्रतक्ष परमान ॥१२॥
सुन्दर तत्त्व जुदे जुदे, राख्यो नाम शरीर ।
ज्यों कदलीके[2] खंभलों, कौन वस्तु[3] है बीर ॥१३॥
है सो सुंदर है सदा, नहिं सो सुंदर नाहिं ।
नाहिं सो परकट[4] देखिये, है सो लहिये नाहिं ॥१४॥

ज्ञानीको अंग । **दोहा**

सुंदर ज्ञानी जगतमें, विचरै सदा अलिप्त[5] ।
ए गुण जाने देहके, भूखे रहैं कि तृप्त ॥१॥
निन्दा स्तुति है देहकी, कर्म शुभाशुभ देह ।
सुंदर ज्ञानी ज्ञानमय, कछुहु न जाने एह ॥२॥
अज्ञ क्रिया सब करत है, अहंबुद्धिको आनि ।
सुंदर ज्ञानी करत है, अहंकार बिनु जानि ॥३॥
सुंदर अज्ञ[6] रु तज्ञके, अंतर है बहु भाँति ।
बाके दिवस अनूप है, वाहि अँधेरी राति ॥४॥
सुंदर ज्ञान प्रकाशते, धोखा रहै न कोइ ।
भावै घर भीतर रहै, भावै वनमें होइ ॥५॥

इति श्रीसुंदरदासकृतो ज्ञानविलासः समाप्तः ॥

अथ सुन्दराष्टकानि

गुरुमहिमाष्टक १

दोहा

परमेश्वर अरु परमगुरु, दोनों एक समान ।
सुंदर कहत विशेष यह, गुरुते पावै ज्ञान ॥१॥

---

१ आकाश । २ केला । ३ चीज । ४ प्रत्यक्ष । ५ किसी में लीन नहीं । ६ मूर्ख ।

दादू सतगुरुके चरण, बंदत सुंदरदास ।
तिनकी महिमा कहत हूं जिनते ज्ञान प्रकाश ।।२।।

भुजंगप्रयात छन्द

प्रकाश स्वरूपं हृदै ब्रह्म ज्ञानं । सदाचार येही निराकार[1] ध्यानं ।
निरीहं[2] निजानंद जानौ जुगादू।नमो देव दादू नमो देव दादू।।३।।
अछेदं अभेदं अनंतं अपारं अगाधं[3] अबाधं निराधारसारं ।
अजीतं[4] अभीतं[5] गहे है समादू । नमो देव दादू नमो देव दादू ।।४।।
हते काम क्रोधं तजे कालजालं । भंगे लोभ मोहं गये सर्व सालं ।
नहीं द्वंद कोऊ डरै है यमादू । नमो देव दादू नमो देव दादू ।।५।।
गुणातीत देहादि इंद्री जहालं । किये सर्वसंहार वैरी तहालं ।
महाशूरवीरं नहीं को विषादू । नमो देव दादू नमो देव दादू ।।६।।
मनो काय वाचं तजे है विकारं । उदै भान होतं गयो अंधकारं ।
अयोनी अनायास पाये अनादू ।नमो देव दादू नमो देव दादू।।७।।
क्षमावंत भारी दयावंत ऐसे । प्रमाणीक आगे भये संत जैसे ।
गह्यो सत्य सोई लह्यो पंथ आदू।नमो देव दादू नमो देव दादू।।८।।
किये आप आपे बड़े तत्त्व ज्ञाता । बड़ी मौज पाई नहीं पक्षपाता ।
बड़ी बुद्धि जाकी तज्यो है विवादू।नमो देव दादू नमो देव दादू।९।
पढ़ै याहि नित्यं भुजंगप्रयातं । लहै ज्ञान सोई मिलै ब्रह्मतातं ।
मनोकामना सिद्ध पावै प्रसादू।नमो देव दादू नमो देव दादू।।१०।

दोहा

परमेश्वरमें गुरु बसै, परमेश्वर गुरु माहिं ।
सुंदर दोऊ परसपर, भिन्न भाव कछु नाहिं ।।११।।
परमेश्वर व्यापक सकल, घट धारे गुरुदेव ।
सब घटकूं उपदेश दे, सुंदर पावै भेव[6] ।।१२।।

इति गुरुमहिमाष्टक संपूर्ण ।।१।।

---

१ आकार रहित । २ चेष्टा रहित । ३ अथाह । ४ किसी के जीतने योग्य नहीं । ५ निडर । ६ भेद ।

गुरुदयाष्टक २

दोहा

अलख[1] निरंजन वंदिकै, गुरु दादूके पाँय ।
दोऊ कर तब जोरकर, संतनकूं शिर नाय ।।१।।
सुंदर मोहिं दया करि, सतगुरु पकरो हाथ ।
माता[2] था अति मोहमें, राता[3] विषया साथ ।।२।।

त्रिभंगी छन्द

तौ मैं मत माता विषया राता, बहिया जाता इन बाता ।
तब गोते खाता डुबता जाता, होती घाता पछताता ।।
उन सब सुखदाता काढ़यो नाता,आप विधाता[4] गहिलेला।
दादूका चेला चेतन भेलां सुंदर मारग बूझेला ।।३।।
तौ सतगुरु आया पंथ बताया, ज्ञान गहाया मन भाया ।
सब कृत्रिम[5] माया यूं समुझाया,अलख लखाया सच पाया।
हूं फिरता धाया उन्मुनि लाया, त्रिभुवन राया दत देला।।
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ।।४।।
तौ माया छटके कालहि झटके, लेकरि पटके सब गटके ।
ए चेटक[6] नटके जानहिं तटके[7], नेक न अटके[8] तब सटके[9]।
जी डोलत भटके सतगुरु हटके,[10] बंधन घटके काटेला ।
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ।।५।।
तौ पाई जरिया शिरपर धरिया,विषै उखरिया तनतरिया।
जी अब नहिं डरिया चंचल[11] थिरिया,गुरु उच्चरिया सोकरिया।
तब उमँग्यो दरिया[12] अमृत झरिया,घट भरिया छूटै रेला।
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ।।६।।
तौ देख्या सीना[13] मांझ नगीना, मारग झीना[14] पग हीना।
अब होइ न दीना दिन दिन छीना,जलमें मीना यूं लीना।।

---

१ अदृश्य । २ मस्त । ३ अनुराग । ४ ब्रह्मा । ५ बनावट । ६ जादू । ७ टोटक । ८ रुकना । ९ भागना । १० निवारण । ११ चपल । १२ समुद्र । १३ छाती । १४ पतला, बारीक ।

जी सो परवीना रसमें भीना, अंतर कीना मन मेला ।
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ।।७।।
तौ बैठा छाजं अंजर गाजं, रणमें राजं नहिं भाजं ।
सो कीया काजं जोडया साजं, तोड़ी लाजं यह पाजं ।।
उन सब शिरताजं तबहिं निवाजं, आनँद आजं आकेला ।
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ।।८।।

इति गुरुदयाष्टक संपूर्ण ।।२।।

गुरुकृपाष्टक ३

दोहा

दादू सतगुरुके चरण, अधिक अरुण अरविंद ।
दुःखहरण तारण तरण, मुक्त करण सुखकन्द ।।१।।
नमस्कार सुंदर करत, निशिदिन बारंबार ।
सदा रहौ मम शीशपर, सतगुरु चरण तुम्हार ।।२।।

त्रिभंगी छन्द

तौ चरण तुम्हारा प्राण हमारा, तारण हारा भव पोतं ।
जो गहै विचारा लगै न वारा, विन श्रम पारा सो होतं ।।
सब मिटै अँधारा होइ उजारा, निर्मल सारा सुखराशी ।
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी[1]।।३।

दोहा

तन मन इंद्रिय वशकरण, ऐसा सतगुरु शूर[2] ।
शंक न आनै जगतको, हरिसूं सदा हजूर ।।४।।

त्रिभंगी छन्द

तौ सदा हुजूरं आरिदल[3] चूरं, भागै दूरं भकभूरं ।
तव बाजै तूरं आतम मूरं, झिलमिल नूरं भरपूरं ।।

---

१ जिसका नाश कभी न हो । २ बली । ३ शत्रु की सैन्य ।

पुनि यहि अंकूरं नाहीं ऊरं, प्रेम हलूरं बरखासी ।
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी।।५।।

दोहा

द्वंद्वरहित निर्मल सदा, सुख दुख एक समान ।
भेदाभेद न देखिये, सतगुरु चतुर सयान ।।६।।

त्रिभंगी छन्द

तौ चतुर सयानं भेद न आनं, अविचल थानं जिन जानं ।
अरु सब भ्रम मानं नाहीं छानं, पद निर्वानं मन मानं ।।
जो रहै निदानं सो पहिचानं, पूरण ज्ञानं मम आसी ।
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी।।७।

दोहा

समदृष्टी शीतल सदा, अद्‌भुत जाकी चाल ।
ऐसा सतगुरु कीजिये, पलमें करै निहाल ।।८।।

त्रिभंगी छन्द

तौ करै निहालं अद्‌भुत चालं, भया निरालं तजि जालं ।
सो पिवै पियालं अधिक रसालं, ऐसा हालं यह ख्यालं ।।
पुनि वृद्ध न बालं कर्म न कालं, भागैं सालं चतुराशी ।
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी।।९।

दोहा

मनसा वाचा कर्मणा, सबहीसूं निर्दोष ।
क्षमा[१] दया जिनके हृदय, लिये सत्य संतोष[२] ।।१०।।

त्रिभंगी छन्द

तौ सत संतोषं है निर्दोषं, कितहु न रोषं सब पोषं[३] ।
पुनि अंतःकोषं निर्मल[४] चोषं, नाहीं दोषं गुण सोषं ।।

---

१ सहनशील । २ संतुष्टता । ३ भरण । ४ उत्तम ।

तिह समसर जोषं कोइ न होषं, जीवन मोषं दरशाशी ।
दादू गुरु आया शब्द सुनाया ब्रह्म बताया अविनाशी।।११।

दोहा

भानु[१] उदय ज्यूं होत है, रजनी[२] तमको[३] नाश ।
सुखदायी शीतल सदा, जिनके हृदय प्रकाश ।।१२।।

त्रिभंगी छन्द

तौ हृदय प्रकाश रटते श्वासं, भया उजास तन नाशं ।
पुनि धरणि अकाशं मध्य निव्रासं, कीया वासं अनयासं ।।
सो है निज दासं प्रभुके पासं, करत विलासं गुणगासी ।
दादू गुरु आया शब्द सुनाया ब्रह्म बताया अविनाशी।।१३।

दोहा

सतगुरु प्रगटे जगतमें, मानहु पूरणचंद ।
घटमाहीं घटसों पृथक्,[४] लिपत न कोऊ द्वंद ।।१४।।

त्रिभंगी छन्द

तौ लिपत न द्वंद्वं पूरण चन्दं, नित्यानन्दं निष्पंदं ।
सो गुरु गोविंदं एक पसंदं, गावत छन्दं सुखकन्दं ।।
जे है मतिमन्दं बाधे फंदं, वे सब रंदं मुरझासी ।
दादू गुरु आया शब्द सुनाया,ब्रह्म बताया अविनाशी।।१५।

दोहा

सतगुरु सुधासमुद्र[५] है, सुधामयी हैं नैन ।
नखशिखसुधा स्वरूप है, सुधा सु वर्षै वैन ।।१६।।

त्रिभंगी छन्द

तौ जिनकी वानी सन्तन मानी, अमृतखानी सुखदानी ।।
जो निकरी प्रानी हिरदय आनी,बुद्धि थिरानी उन जानी ।।

---

१ सूर्य । २ रात्रि । ३ अंधकार । ४ अलग । ५ अमृत ।

ए अकथ[1] कहानी प्रकट प्रमानी, नाहिं न छानी गंगासी ।
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी ।।१७।।

छप्पय छन्द

सतगुरु ब्रह्म स्वरूप, रूप धारे जगमाहीं ।
जितने शब्द अनूप, सुनत संशय सब जाहीं ।।
उरमें ज्ञानप्रकाश, होत कछु लगे न बारा ।
अन्धकार मिटि जाइ, कोटि सूरज उजियारा ।।
दादू दयालु दुहुँ दिशि प्रगट, झगरि झगरि द्वै पख थकी ।
कहि सुंदर पन्थ प्रसिद्ध यह, सांप्रदाय पर ब्रह्म की ।।१८।।

इति गुरुकृपाष्टक संपूर्ण ।।३।।

भ्रमविध्वंसाष्टक ४

दोहा

सुंदर देख्या शोधिके,[2] सब काहूका ज्ञान ।
कोई मन माने नहीं, विना निरंजन ध्यान ।।१।।
षटदर्शन हम खोजिया, योगी जंगम शेष ।
संन्यासी अरु सेवड़ा, पंडित भक्ता भेद ।।२।।

त्रिभंगी छन्द

तौ भक्त न भावै दूर बतावै, तीरथ जावै फिर आवै ।
जो कृत्रिम[3] गावै पूजा लावै, झूठ दृढ़ावै बहँकावै ।।
अरु माला लावै तिलक बनावै, क्यूं पावै गुरु बिन गैला[4] ।
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा[5] ह्वै खेला ।।३।।
तौ योगि महेला[6] देख सहेला नाहिं लहेला[7] वे महेला ।
वे मांस भखेला[8] मद्य[9] पिवेला, भूत जपेला[10] पूजेला[11] ।।

---

१ कहने में नहीं आवे । २ खोज । ३ बनावट । ४ रास्ता । ५ अलग । ६ पकड़ना । ७ पाना । ८ खाना । ९ शराब । १० जप । ११ पूजता है ।

जो गोरख कहेला सो न करेला, विनहि चहेला बोधेला ।
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा ह्वै खेला ।।४।।
तौ तपी संन्यासी राख लगासी, जटा बढ़ासी भटकासी ।
जब यौवन जासी धौला[१] आसी, तब कर दासी बैठासी ।
सब अकल गमासी लोक हँसासी, माया पासी उरझेला ।
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा ह्वै खेला ।।५।।
तौ जंगम अंगा पड़के लंगा, फिरै कुढंगा सब मंगा ।
वै डसै अनंगा[२] बड़े भुजंगा, दीप पतंगा[३] सरवंगा ।।
पुनि नाहीं चंगा देखै रंगा, उनको संगा छाड़ेला ।
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा ह्वै खेला ।।६।।
तौ अर्हत धर्मी भारी भर्मी, केश उपर्मी बेशर्मी[४] ।
जी भोजन नर्मी खावै खुर्मी, मंथन[५] कर्मी अत उर्मी[६] ।।
अरु दृष्टि सु चर्मी अन्तर, गर्मी नाहीं नर्मी गंठेला ।
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा ह्वै खेला ।।७।।
तौ शेख मुलाना पढ़ै कुराना, पश्चिम जाना उन ठाना ।
जी भाँग भुलाना वग्ग निछाना, भये दिवाना[७] शैताना ।।
अरु जीव दुखाना दर्द[८] न आना, कह्या न माना बरझेला ।
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा ह्वै खेला ।।८।।
तो पंडित आए वेद बुलाए, षट[९] कर्मायि जपनाये ।
जी सन्ध्या गाए पढ़ि उरझाए, राना राए ठगि आये ।।
अरु बडे कहाए गर्व[१०] न जाए, राम न पाए थापेला ।
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा ह्वै खेला ।।९।।
तौ ये मत हेरे सबहिंन केरे, गहि गहि घेरे बहुतेरे ।
तब सतगुरु टेरे कानन मेरे, जाते फेरे आ घेरे ।।

---

१ सफेद । २ कामदेव । ३ उड़ानेवाला क्रीड़ा । ४ निर्लज्जता । ५ कामदेव ।
६ लहरी तरंग । ७ बावला । ८ पीड़ा । ९ छः । १० अभिमान ।

और सूर सबेरे उदय कियेरे, सबै अंधेरे नाशेला ।
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा ह्वै खेला ॥१०॥

छप्पय छन्द

सतगुरु मिलै सुजान,[1] श्रवण जिन शब्द सुनाया ।
शिर पर दीया हाथ, भर्म सब दूर उड़ाया ॥
उपजा आतमज्ञान, ध्यान अभिअंतर[2] लागा ।
किया ब्रह्मसूं नेह, जगतसूं तोऱ्या तागा ॥
तौ राम दत्त जब पाइया, छूटै वाद विवादते ।
अब सुंदरदास सुखी भया, गुरु दादू परसादते[3] ॥११॥

इति भ्रमविध्वंसाष्टक ॥४॥

गुरुज्ञानोपदेशाष्टक ५

दोहा

दादू सतगुरु शीशपर, उरमें जिनको नाम ।
सुंदर आये शरण तकि, तिन पायो निजधाम ॥१॥
वहे जात संसारमें, सतगुरु पकड़े केश ।
सुंदर काढ़े डूबते, दे अद्भुत उपदेश ॥२॥

हरिगीत छन्द

उपदेश श्रवण सुनाय अद्भुत, हृदय ज्ञान प्रकाशियो ।
चिरकालको अज्ञान पूरण, सकल भ्रमको नाशियो ॥
आनंददायक पुनि सहायक, करत जन निष्काम है ।
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥३॥

दोहा

सुंदर सतगुरु हाथमें, करडी लई कमान ।
माऱ्या खैंचिके शीशकर, वचन लगाये बान ॥४॥

---

१ चतुर । २ अन्तःकरण । ३ कृपा ।

हरिगीत छन्द

जिन वचन बाण लगाय उरमें, मृतक फेरि जिवाइया ।
मुखद्वार होइ उचार करि, निज सार अमृत पाइया ।।
अत्यंत करि आनंदमें, हम रहत आठौं याम है ।
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ।।५।।

दोहा

सुंदर सतगुरु जगतमें, पर उपकारी होइ ।
नीच ऊंच सब उद्धरै, शरण जु आवै कोइ ।।६।।

हरिगीत छन्द

जो जाइ शरणहि होइ प्रापत, ताप तिन तनुको हरै ।
पुनि फेर बदले घाट उनको, जीवते ब्रह्महि करै ।।
कछु ऊंच नीच न दृष्टि जिनके, सकलको विश्राम है ।
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है।।७।।

दोहा

सुंदर सतगुरु सहजमें, किये सु पहिली पार ।
और उपाय न तरि सकै, भवसागर संसार ।।८।।

हरिगीत छन्द

संसारसागर महादुस्तर, ताहि कहु अब क्यूं तरे ।
जो कोटि साधन करै कोऊ, वृथाही पचि पचि मरे ।।
जिन विन परिश्रम पार कीये, प्रकट सुखके धाम है ।
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है।।९।।

दोहा

सुंदर सतगुरु यूं कहे, याही निश्चय आन ।
जो कछु सुनिये देखिये, सर्व स्वप्न करि जान ।।१०।।

हरिगीत छन्द

यह स्वप्न तुल्य दिखाइ दीयो, स्वर्ग नरक उभै कहै ।
सुख दु:ख हर्ष विषाद पुनि, मानापमानहि सब गहै ।।

जिन जाति कुल अरु वरण आश्रम, कहत मिथ्या नाम है ।
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ।।११।।

दोहा

सुंदर सतगुरु यूं कहै, सत्य कछू नहिं रंच ।
मिथ्या माया विस्तरी, जो कछु सकल प्रपंच ।।१२।।

हरिगीत छन्द

उपज्यो प्रपंच अनादिको, यह माहामाया विस्तरी ।
नानात्व है करि जगत भास्यो, बुद्धि सबहिनकी हरी ।।
जिन भ्रम मिटाइ दिखाइ दीनो, सर्व व्यापक राम है ।
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ।।१३।।

दोहा

सुंदर सतगुरु यूं कहै, भ्रमते भासै और ।
सीपिमाहि रूपो दृशै, सर्प रज्जुकी ठौर ।।१४।।

हरिगीत छन्द

रज्जुपहँ ज्यूं सर्प भासै, सीपिमें रूपो यथा ।
मृगतृषा जल देखही सो, विश्व मिथ्या है तथा ।।
जिन लह्यो ब्रह्म अखंड पद, अद्वैत सबही ठाम है ।
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ।।१५।।

दोहा

सुंदर सतगुरु यूं कहै, मुक्ति सहजही होइ ।
या अष्टकते भ्रम मिटै, नित्य पढै जो कोइ ।।१६।।

हरिगीत छन्द

जो पढ़ै नित्यहि ज्ञान अष्टक, मुक्त होइ सु सहजही ।
संशय न कोऊ रहै ताको, दास सुंदर यूं कही ।।
जिन ह्वै कृपालु अनेक तारे, सकल विधि उद्दाम है ।
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ।।१७।।

दोहा

सुंदर अष्टक श्रेष्ठ यह, तुम जनि जानै आन ।
अष्टक याहि कहै सुनै, ताको उपजै ज्ञान ।।१९।।

इति गुरुज्ञानोपदेशाष्टक संपूर्ण ।।५।।

पीर मुर्शिदाष्टक ६

दोहा

सुंदर खोजत खोजते, पाया मुर्शिद पीर ।
कदम जाइ उसके गहे, देखा अति गंभीर ।।१।।

शंकर (चावर) छन्द

अवली कदम उस्तादके मैं, गहे दोऊ दस्त ।
उन मिहिर मुझपर करी ऐसी ह्वै गया मैं मस्त।।२।।
जब सखुन करी मुझकूं कहा, तू बदंगी कर खूब ।
इस राह सीधा जायगा, तब मिलेगा महबूब ।।३।।
तब उठि अरज उस्तादसूं मैं करी ऐसा रौंस ।
तुम महिर मुझपा करौ मुर्शिद, मैं तुम्हारी कौंस ।।४।।
वह बदंगी किस रौंस करिये ? मुझे देहु बताइ ।
वह राह सीधा कौन है ? जिस राह बंदा जाइ ।।५।।
तब कहै पीर मुरीदसूं, तू हिरस राह गुजार ।
यह बदंगी तब होयगी, इस नफ्सकूं गहि मार ।।६।।
भी दुई दिलते दूर करिभे, और कछु नहिं चाह ।
यह राह तेरा तुझी भीतर, चल्या तूंही जाह ।।७।।
तब फिर कहा उस्तादसूं, यह राह है बारीक ।
क्यूं चलै बंदा विगर देखे, सबैसूं फारीक ।।८।।
अब मिहिर करि उस राहकूं, दिखलाइ दीजै पीर ।
मुझ तलब है उस राहकी, ज्यूं पिवै प्यासा नीर ।।९।।
तब कहै पीर मुरीदसेती, बंदगी करि येह ।

यह राह पहुँचे चुस्तदम, कर नाम उसका लेह॥१०॥
तू नाम उसका लेयगा, तब जायगा उस ठौर ।
जहँ अरस ऊपर आप बैठा, दूसरा नहिं और ॥११॥
तब कहै तालब सुनौ मुर्शिद, जहाँ बैठा आप ।
वह होइ जैसा कहो तैसा, जिसे माइ न बाप ॥१२॥
बैठा उठा कहिये तिसेहि, वजूद जिसका होइ ।
बेचून उसकूं कहत हैं, अरु बेनमूने सोइ ॥१३॥
जब कहा तालब सखुन ऐसा, पीर पकरी मौन ।
को कहैगा न कहा न किनहूं, अब कहै काहू कौन ॥१४॥
तब देखि और मुरीदकी, उन पीर मूंदै नैन ।
जो खूब तालब होयगा, तौं समुझि लेगा सैंन ॥१५॥
हैरान है हैरान है, हैरान निकट न दूर ।
भी सखुन क्यूं करि कहै तिसकूं, सकल है भरपूर ॥१६॥
संवाद पीर मुरीदका यह, भेद पावै कोइ ।
यूं कहै सुन्दर सुनै सुन्दर, वही सुंदर होइ ॥१७॥

इति पीर मुर्शिदाष्टक संपूर्ण ॥६॥

रामजी अष्टक ७

मोहनी छन्द

आदितुमहींहुते और नहिंकोइजी।अकह अति अगहगतिवरणनहिंहोइजी।
रूप नहिं रेख नहिं श्वेत नहिं श्यामजी।तू सदा एकरस रामजी रामजी।१।
प्रथमहीं आपने भूल माया करी।बहुरि सो विविध ह्वै त्रिगुणमयविस्तरी ।
पंचहूं तत्त्वते रूप अरु नाम जी । तू सदा एकरस रामजी रामजी ॥२॥
विधिरजोगुणलिये जगत उत्पन्नकरै । विष्णुसतगुणलियेपालनाउ रधरै ।
रुद्र तमोगुण लिये संहरै धाम जी । तू सदा एकरस रामजीरामजी ॥३॥
इंद्र आज्ञा लिये करत नहिं और जी । मेघ वर्षा करै सर्वही ठौरजी ।
भ्रमर शशि फिरत हैं आठहूयामजी ।तू सदा एकरस रामजीरामजी॥४॥
देव अरू दानवा यक्ष ऋषि सर्व जी । साधु अरु सिद्ध मुनि होत निर्गर्व जी ।

शेषहू सहसमुख भजत निष्कामजी । तू सदा एकरस रामजीरामजी ।।५।।
जलचरा थलचरा नभचरा जंत जी । चारिहू खानिके जीवअनगन्तजी ।
सर्व उपजै खपै पुरुष अरु वामजी । तू सदा एकरस रामजी रामजी ।।६।।
भ्रमत संसार कितहू नहीं दोर जी । तीनहू लोकमें कालको शोरजी ।।
मनुष तनु यह बड़े भाग्यते पायजी । तू सदा एकरस रामजीरामजी ।।७।।
पूर्व दशहूदिशा सर्वमें आपजी । स्तुती को करि सकै पुण्य नहिं पापजी ।।
दास सुंदर कहै देहु विश्राम जी । तू सदा एकरस रामजी रामजी ।।८।।

इति रामजी अष्टक संपूर्ण ।।७।।

नामाष्टक ८

मोहनी छन्द

आदि तू अंत तू मध्य तू व्योमवत् ।वायु तू तेज तू नीर तू भूमिवत्।
पंचहू तत्त्वते देह तैंही करे । हे हरे हे हरे हे हरे हे हरे ।।१।।
चारिहू खानिनिके जीव तैंही सृजै।योनिही योनिके द्वार आई व्रजे।
ते सबै दुःखमें जे तुम्हें वीसरे । ईश्वरे ईश्वरे ईश्वरे ईश्वरे ।।२।।
जो कछू ऊपजै आधि औ व्याधवे । दूर तूही करै सर्वही बाधवे ।।
वैद्य तू औषधी सिद्ध तू साधवे।माधवे माधवे माधवे माधवे।।३।।
ब्रह्म तू विष्णु तू रुद्र तू वेष जी । इन्द्र तू चंद्र तू सूर तू शेष जी ।।
धर्म तू कर्म तू काल तू देशवे । केशवे केशवे केशवे केशवे ।।४।।
देवमें दैत्यमें दक्षमें यक्षमें । योगमें यज्ञमें ध्यानमें लक्षमें ।।
तीनहू लोकमें एक तूही भजै । हे अजै हे अजै हे अजै हे अजै ।।५।।
रावमें रंकमें शाहमें चोरमें । कीरमें काकमें हंसमें मोरमें ।।
सिंहमें श्यालमें मच्छमें कच्छये । अक्षये अक्षये अक्षये अक्षये ।।६।।
बुद्धिमें चित्तमें पिंडमें प्राणमें । श्रोत्रमें वैनमें नैनमें घ्राणमें ।।
हाथमें पाँवमें शीरमें सोहने । मोहने मोहने मोहने मोहने ।।७।।
जन्मते मृत्युते पुण्यते पापते । हर्षते शोकते शीतते तापते ।।
रागते द्वेषते द्वन्द्वते है परे । सुन्दरे सुन्दरे सुन्दरे सुन्दरे ।।८।।

इति नामाष्टक संपूर्ण ।।८।।

आत्म अचलाष्टक ९

कुण्डलिया छन्द

पानी चडस सदा चलै, चलै लाव अरु बैल ।
खांभी चलता देखिये, कूप चलै नहिं गैल ।।
कूप चलै नहिं गैल, कहैं सब कूवो चालै ।
ज्यूं फिरतो नर कहै, फिरै आकाश पताले ।।
सुंदर आतम अचल, देह यह चलै न छानी ।
कूप ठौरको ठौर, चलत हैं चडस रु पानी ।।१।।
सृष्टि सवाई चलत है, चले न कबहूं राह ।
अपने अपने कामकूं, चलैं चोर अरु शाह ।।
चलैं चोर अरु शाह, कहैं सब मारग चालै ।
जल हालत लगि पवन, कहैं प्रतिबिंबहि हालै ।।
सुंदर आतम अचल, देह आवै अरु जाई ।
राह ठौरको ठौर, चलत है सृष्टि सवाई ।।२।।
तेल जरै बाती जरै, दीपक जरै न कोइ ।
दीपक जरता सब कहैं, भारी अचरज होइ ।।
भारी अचरज होइ, जरै लकरी अरु घासा ।
अग्नि जरत सब कहै, होइ घर बड़ा तमासा ।।
सुंदर आतमा अजर, जरै यह देह विजाती ।
दीपक जरै न कोइ, जरत हैं तेल रु बाती ।।३।।
बादल दौरे जात हैं, दौरत दीसै चन्द ।
देह संगते आतमा, चलत कहैं मतिमन्द ।।
चलत कहैं मतिमन्द, आतमा अचल सदाहीं ।
हलत चलत यह देह, थापिले आतम माहीं ।।
सुंदर चञ्चल बुद्धि, समुझि ताते नहिं बौरे ।
दौरत दीसै चन्द, जात हैं बादल दौरे ।।४।।

गंगा बहती कहत हैं, गंगा वाही ठौर ।
पानी बहि बहि जात है, कहे औरकी और ।।
कहैं औरकी और, परत है देखत खाड़ी ।
गाड़ी उखली कहैं, कहैं चलतीको गाड़ी ।।
सुंदर आतम अचल, देह हलचल ह्वै भंगा ।
पानी बहि बहि जात, बहै कबहूँ नहिं गंगा ।।५।।
कोल्हू चलता सब कहै, समुझत नहिं घटमाहिं ।
पाट लाट मकरी चलै, बैल चलै पुनि जाहिं ।।
बैल चले पुनि जाहिं, चलत है हाँकनहारो ।
पैली गालत चलै, चलत सब ठाठ विचारो ।।
सुंदर आतम अचल, देह चंचल है मोलू ।
समुझत नहिं घटमाहिं, कहत है चालत कोलू ।।६।।
बिन जाने नर कहत हैं, चल्यो जाय बाजार ।
लोक चले सब जात हैं, हाट न हिले लगार ।।
हाट न हिले लगार, विचार कछू नहिं लहते ।
नदी तीरपै वृक्ष, कहैं पानी में बहते ।।
सुंदर आतम अचल, देह यह चले दिवाने ।
चल्यो जाय बाजार, कहत हैं नर बिनु जाने ।।७।
सब कोऊ ऐसे कहैं, काटत हैं हम काल ।
काल नाश सबको करै, वृद्ध तरुण अरु बाल ।।
वृद्ध तरुण अरु बाल, साल सबहिनको भारी ।
देह आपकूं मानि, कहत हैं नर अरु नारी ।
सुंदर आतम अमर, देह मर है घर खोऊ ।
काटत हैं हम काल, कहत ऐसे सब कोऊ ।।८।।

इति आतम अचलाष्टक संपूर्ण ।।९।।

ब्रह्माष्टक १०

भुजंगप्रयात छन्द

अखण्डं चिदानंद देवाधिदेवं, मुनींद्रादि रुद्रादि इंद्रादि सेवं ।
मुनींद्रादि इंद्रादि चंद्रादि मित्रं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते पवित्रं ।।१।।
धरा त्वं जलाग्नी मरुत्वं नभस्त्वं, घटस्त्वं पटस्त्वं अणु त्वं महत्त्वं ।
मनस्त्वं वचस्त्वं दृशस्त्वं श्रुतस्त्वं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते समस्त्वं।२।
अडोलं अतोलं अमोलं अमानं, अदेहं अछेहं अनेहं निदानं ।
अजापं अथापं अपापं अतापं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अमापं ।।३।।
न गामं न धामं न शीतं न उष्णं, न रक्तं न पीतं न श्वेतं न कृष्णं ।
न शेषं अशेषं न रेखं न रूपं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अनूपं ।।४।।
न छाया न माया न देशो न कालो, न जाग्रं न स्वप्नं न वृद्धो न बालो।
न ह्रस्वं न दीर्घं न रम्यं अरम्यं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अगम्यं।।५।।
न बंध न मुक्तं न मौनं न वक्तं, न धूम्रं न तेजो न यामी न वक्तं ।
न युक्तं अयुक्तं न रक्तं विरक्तं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अशक्तं ।।६।।
न रुष्टं न सुष्टं न इष्टं अनिष्टं, न ज्येष्ठं कनिष्ठं न मिष्टं अमिष्टं।
न अग्रं न पृष्ठं न तुल्यं न गृष्ठं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अधिष्ठं।।७।
न वक्रं न घ्राणं न कर्णं न अक्षं, न हस्तं न पादं न शीशं न लक्षं ।
कथं सुंदरं सुंदरं नामधेयं, नमस्ते नमस्ते नमस्तेऽप्रमेयं ।।८।।

इति ब्रह्माष्टक संपूर्ण ।।१०।।

पंजाबीभाषाष्टक ११

छन्द

बहु दिलदा मालिक दिलदी जाणैं, दिलमें बैठा देखै ।
दुण तिसनौं कोई क्यूं करि पावै, जिसदे रूप न रेखैं।।
वै गौस कुतुब पैगंबर थक्कै, पीर अवलिया शेखै ।
भी सुंदर कहि न सकै कोई तिसनौ, जिसदा साफि अलेखै। १।।
बहु खोजनहारा तिसनौं पूछै, जे बाहिरनौ दौड़े ।
वै कोई जाइ गुफामो बैठे, कोई भाजत चौड़े ।।

भी दीछे शौक हजारनि दीछे, दीछे लख्यु करौड़े ।
कहि सुन्दर खोजु बतावै प्रभुदा, वै केइ जगमो थोड़े ।।२।।
भी उसदा खोजु करैं बहुतेरे, खोजु तिणादे बोलै ।
बहु भुल्ले नौमुल्ला समुझावै, सोभी भुल्ला डोलै ।।
वै जियैं किथैं फिरैं विचारा, फिरि फिरि छिल्लकुं छोलै ।
कहि सुंदर अपना बन्धनुं कापै, सोई बन्धनु खोलै ।।३।।
भी खोजे यती तपी संन्यासी, सलोदि छे बड़ रोगी ।
बहु उशदा खोजु न पाया किही, दिछे ऋषि मुनि योगी ।।
वै बहुते फिरैं उदासी जगमो, बहुते फिरैं वियोगी ।
कहि सुंदर कोई विरले दिट्ठे, अमृत रसदे भोगी ।।४।।
भी खोजी बिन खोजु न निकले, खोजु न हथ्यौ आवै ।।
पंखिदा खोजु मीनदा मारगु, तिसनौं क्यूं करि पांवै ।
है अति बारीकुं खोजु ना दरशै, नदरि किंधौं ठहगावै ।।
कहि सुंदर बहुत होइ जब नन्हां, नन्हे नों दरशावै ।।५।।
भी खोजत खोजत समु जमु हठया, खोज किथैं नहिं पाया।
तू जिसनौ खोजै खोज तूझिमो, सतगुरु खोज बताया ।।
तैं अपना आयु सही जब कीता, खोज इथाहीं आया ।
जब सुंदर जागि पऱ्या सुपनैं, थौं सभु संदेह गमाया ।।६।।
भी जिसदा आदि अन्तु नहिं आवै, मध्यहु तिसदा नाहीं ।
बहु बाहिर भिंतरु सर्व निरंतरु, अगम अगोचर माहीं ।।
वह जागि न सोवै खाई न भुख्या, जिसदै धूप्पु न छाहीं ।
कहि सुंदर कापै आप अखंडित, शब्द न पहुँचे जाहीं ।।७।।
वै ब्रह्मा विष्णु महेश प्रलयमों, जिस दिखिसै ना रूहीं ।
भी तिसदा कोई पारु न पावै, शेष सहस फणु मूहीं ।।
भी यहु नहिं यहु नहिं यहु नहिं होवै, इसदै परै सु तूही ।
वह अवशेष रहै जो सुंदर, सो तूही सो हूंही ।।८।।

इति पंजावीभाषाष्टक संपूर्ण ।।११।।

ज्ञानझूलनाष्टक १२

उस्तादके शिर धरों, अब झूलना खूब बखानता हूं ।
अरवाहमें आप विराजता है, वह जानका जान जानता हूं ।।
उसहीके झुलाये डोलता हूं दिल खोलता बोलता मानता हूँ ।
उसहीके दिखाये देखता हूं, अरु सुंदर यों पहिचानता हूं ।।१।।
कोई नेरे कहै कोई दूरै कहै, वह आपही नेरे न दूर है रे ।
दिल भीतर बाहर एकसा है, आसमान ज्यू वो भरपूर है रे ।
अनुभव विना नहिं जानि सकै, निरसंग निरंतर नूर है रे ।
उपमा उसकी अब कौन कहै, नहिं सुंदर चन्दर सूर है रे ।।२।।
कोइ वार कहै कोइ पार कहै, उसका कहूं वार न पार है रे ।
कोइ मूल कहै कोइ डाल कहै, उसके कहूं मूल न डाल है रे ।।
कोई शून्य कहै कोइ थूल कहै, वह शून्य हू थूलते न्यार है रे ।।
कोइ एक कहै कोइ दोइ कहै, नहिं सुंदर द्वंद लगार है रे ।।३।।
कोइ योग कहै कोइ याग कहै, कोइ त्याग विराग बतावता है ।
कोइ नाम रटै कोइ ध्यान जटै, कोइ खोजतही थकि जावता है ।।
कोइ औरही और उपाव करे, कोइ ज्ञानगिरा करि बतावता है ।
यह सुंदर सुंदर सुंदर है, कोइ सुंदर होइसु पावता है ।।४।।
नहिं बैठता है नहिं ऊठता है, नहिं आवनेका नहिं जावनेका ।
नहिं बोलता है न अबोलता है, नहिं देखता है न दिखावनेका ।।
नहिं सूंघता है न असूंघता है, नहिं सुनता है न सुनाबने का ।।
नहिं सोवता है नहिं जागता है, नहिं सुंदर सखुन पावनेका ।।५।।
कहु कौन कहै कहु कौन सुनै, वह कहन सुननते भिन्न है रे ।
कहुं ठौर नहिं कहुँ ठाम नहीं, कहुँ गाँव नहीं तिन किन्न हैरे ।।
तहां शीत नहीं तहाँ घाम नहीं, तहाँ घाम न राति न दिन्न है रे ।।
तहां रूप नहीं तहां रेख नहीं, तहां सुंदर कछू न चिह्न है रे ।।६।।
नहिं रोम है रे नहिं नैन है रे, नहिं मुख है रे नहिं बैन है रे ।
नहिं ऐन है रे नहिं गैन है रे, नहिं सैन है रे न असैन है रे ।।

नहिं पेठ है रे नहिं पीठ है रे, नहिं कड़ुवा है रे नहिं मीठ है रे।
नहिं दुश्मन है रे नहिं मित्र है रे, नहिं सुंदर दीठ अदीठ है रे ।।७।।
नहिं शीश है रे नहिं पाँव है रे, नहि रंक है रे नहीं राव है रे।
नहिं खावनै पीवनै चाव है रे,नहिं हार नहिं जीत नहिं दाँव है रे।।
नहिं नीर है रे नहिं नाव है रे, नहिं खाक है रे नहिं वायु है रे।
नहिं मोति है रे नहिं आव है रे, नहिं सुंदर भाव अभाव है रे ।।८।।

इति श्रीज्ञानझूलनाष्ठक संपूर्ण ।।१२।।

अजब ख्यालाष्टक १३

दोहा छन्द

सिजदा सिरजनहारको, मुरशिदको ताजीम ।
सुंदर तालिब करत है, बंदोंको तसलीम ।।१।।
सुंदर इस औजूदमें, अजब चीज है वाद ।
तब पावै इस भेदको, खूब मिलै उस्ताद ।।२।।

गीतक छन्द

उस्ताद शिरपर चुस्त दम,
करम कर इश्क अल्लाह लाइये ।
गुजरान इसकी बन्दीसों, इश्क बिन कां पाइये ।।
यह दिल फकीरी दस्तगारां, दस्त गुंज सिना लहै ।
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है।।३।।

दोहा छन्द

सुंदर रत्ता एकसों, दिलमों दूजा नेश ।
इश्क मुहब्बति बंदगी, सो कहिये दुरवेश ।।४।।

गीतक छन्द

दुरवेश दरकी खबर जाने, दूर दिलकी काफिरी ।
दरदवंद खिरा दुरूनै, उसी बीच मुसाफिरी ।
है बेतमा इस मर्दुमीसें, पाक दिलदर हाल है ।
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है ।।५।।

दोहा छन्द

सुंदर सीने बीचमें, बंदेका चौगान ।
पहुँचावे उस हालको, इहै गूइ मैदान ॥६॥

गीतक छन्द

कम दस्त इस मैदानमें, चौगान खेले खूब है ।
असवार ऐसा तुरी वैसा, प्यार उस महबूब है ॥
इस गूइको लै जायके, पहुँचाइ दे उस हाल है ।
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है ॥७॥

दोहा छन्द

सुंदर उसका नांव ले, एक उसीकी चाह ।
रब्बु रहीम करीम वह, कहिये वही अल्लाह ॥८॥

गीतक छन्द

अल्लाह खुदाइ करीम कादिर, पाक पवरदिगार है ।
सुबहान तू सत्तार साहिब, साफ सिरजनहार है ॥
मुश्ताक तेरे नांव ऊपर, खूब खूबां लाल है ।
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है ॥९॥

दोहा छन्द

सुंदर इस औजूदमों, इश्क लगाई झूक ।
आशिक ठंढा होइ तब, आइ मिलै माशूक ॥१०॥

गीतक छन्द

माशूक मौला हक्कताला, तू जिमी असमानमों ।
है आब अरु इस बाद म्यानैं, खबरदार जहानमों ॥
मालिक मुल्क मालूम जिसको, दुरस दिल हरसाल है ।
यों कहत सुंदर कब्ज, द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है ॥११॥

दोहा छन्द

सुंदर जो गाफिल हुवा, तो वह, साईं दूर ।
जो बंदा हाजिर हुवा, तो हाजिरउ हुजूर ॥१२॥

गीतक छन्द

हाजिरां हुजूर गुसाइहां, गाफिलोंको दूर है ।
निरसंध इकरस आप वोही, तालिबां भरपूर है ॥
बारीकसों बारीक कहिये, बड़ो बड़ा ओ विशाल है ॥
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है ॥१३॥

दोहा छन्द

सुंदर साईं हक्क है, जहाँ तहाँ भरपूर ।
एक उसीके नूरसों, दीसैं सारे नूर ॥१४॥

गीतक छन्द

उस नूरते सब नूर दीसें, तेजते सब तेज हैं ।
उस ज्योतिसों सब ज्योति चमकैं, हैजसों सब हैज हैं ॥
अफताब अरु महताब तारे, हुक्म उसके चाल है ।
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर अजब ऐसा ख्याल है ॥१५॥

दोहा छन्द

सुंदर आलिम इल्म सब, खूब पढचा आखून ।
पर उसको क्यूं कहि सकै, जो कहिये बेचून ॥१६॥

गीतक छन्द

बेचून उसको कहत बुजर, कबी मूरत उसे कहैं ।
अरु औलिया अंबिया वै भी, गौस कुतब खड़े रहैं ॥
को कहि सकै न कह्या न किनहू, सखुन परे निराल है ।
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है ॥१७॥

दोहा छन्द

ख्याल अजब उस एकका, सुंदर कह्या न जाइ ।
सखुन तहाँ पहुँचै नहीं, थक्या उरैही आइ ॥१८॥

इति श्रीअजब ख्यालाष्टक संपूर्ण ॥१३॥

इति सुंदरदासकृत काव्य संपूर्ण ॥

हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.
दूरभाष-०२०-२६८७१०२५,
फैक्स -०२०- २६८७४९०७.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१.
दूरभाष/फैक्स- ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८.

KHEMRAJ SHRIKRISHNADAS